नरककुड में वास

नरक कुंड में बास

जगदीश चंद्र

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना

'लुकमान अली' के रचनाकार और प्रिय मित्र
सौमित्र मोहन को

एक

वस अड्डे पर एकदम हंगामा मच गया था। एक ही साथ बहुत-सी आवाजें उठने लगी थीं और आपस मे गड्डमड्ड हो अस्पष्ट शोर में खो गई थीं।

आम के एक बड़े-बूढ़े पेड़ की घनी छतरी के नीचे हरे-पीले पत्तों पर लेटे-लेटे ही काली ने कुहनी के सहारे गर्दन ऊपर उठाई और अड्डे पर मचे शोर को सुनने-समझने की कोशिश करने लगा। उसके कानों से जब ट्रंक और बिस्तर के शब्द टकराने लगे तो वह सतर्क हो गया। उसने अनुमान लगाया कि बस में या तो बारात आई है या फिर डेरेवाले संत के श्रद्धालुओं की टोली उतर रही है।

अड्डे की ओर लपकता हुआ काली सोचने लगा, टोली हुई तो बस से सामान उतारकर वह भी चार पैसे कमा लेगा और दो वक्त की गुजर-बसर के बारे में निश्चिंत हो जाएगा। लेकिन ज्ञानो और गाँव का खयाल आते ही उसका हौसला ढह गया। वह फिर पेड़ के नीचे आ बैठा। उसने अपना मुँह बाँहों मे छिपा लिया। ज्ञानो उसके बारे मं क्या सोच रही होगी ? कठिन वक्त में ज्ञानो का साथ न निभाने पर उसे बहुत ज्यादा शर्म महसूस होने लगी।

यह याद आते ही काली का दम घुटने लगा कि ज्ञानो के गर्भ के बारे में खबर एक-न-एक दिन सारे गाँव में फैल जाएगी और उसके माथे पर पाप का निशान सूरज की तरह चमकने लगेगा।

काली बहुत ज्यादा परेशान हो उठा और उलटा लेट अपना मुँह गीली मिट्टी और सड़े पत्तों में छिपा लिया। उसे इस बात का शिद्दत से एहसास हुआ कि पूरे गाँव मे एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसको वह अपना मददगार और सही समझ सके। मुहल्ले के दोस्तों और गाँव के मददगारों की शक्लें उसकी आँखों के सामने घूम गईं लेकिन उसके दिल-दिमाग में अँधेरा छाया रहा।

काली की सोच का सिलसिला डाक्टर बिशनदास पर अटक गया। उसे महसूस हुआ कि गाँव में वही एक ऐसा व्यक्ति है जो उसकी स्थिति को समझता है लेकिन जो इलाज उसने बताया, वह उसके बस से बाहर है। ज्ञानो को गाँव से दूर ले जाने के बारे में काली जितना अधिक सोचता उतना ज्यादा ही अपने-आपको इस मामले में असहाय और असमर्थ पाता।

अपने ही खयालों में खोया काली पहले तो ऊब गया और फिर जमीन पर लेटा-लेटा ऊँघने लगा। ऊँघ में वह गाँव में पहुँच गया। उसे देख गाँव के मर्दों, औरतों और बच्चों की आँखों में खून उतर आया और जो भी हाथ लगा, उसे उठा वे सब उसके पीछे भागे जैसे उसका बूँद-बूँद खून निचोड़ लेना चाहते हों।

काली हड़बड़ाकर उठ गया और भयभीत हो अपने ही ठंडे पसीने में भीग गया। आम के पत्तों से छनती हुई रोशनी में उसकी आँखें चुँधिया गईं। उसने रोशनी की ओर से मुँह फेर लिया। वह हताश हो गया कि अँधेरा उसे कच्चा निगल जाने को आता है और रोशनी उसके अस्तित्व को चीरती है। उसे अलफ नंगा और बेपर्दा करती है।

शिखर दोपहर में देखा स्वप्न काली के दिमाग में नासूर की तरह टिक गया और छिन-छिन रिसने लगा था। उससे छुटकारा पाने के लिए वह आम के बाग से निकल रेलवे फाटक के निकट ईंटों के पुराने वीरान भट्ठे में आ बैठा। भट्ठे की सुरमई-सुरखई दीवार का सहारा ले वह एक बार फिर ज्ञानो के बारे में सोचने लगा। उसे धरती, आकाश और पाताल में कहीं भी ऐसी जगह नजर नहीं आ रही थी जिस पर वह अधिकार जता सके और निश्चिंत हो ज्ञानो को आराम और चैन से बिठा सके।

बहुत ही ज्यादा निराश हो वह भट्ठे से भी बाहर आ गया। उसके हाथ-मुँह और टाँगें सुरमई-सुरखई धूल से अटी हुई थीं। वह भट्ठे के पीछे खेतों में रहट की ओर बढ़ गया। वह बद पड़ी थी। बगल के कच्चे कोठे के टूटे किवाड़ पर ताला लटक रहा था। पशुओं के थान भी खाली थे। उसने अनुमान लगाया कि खेत का मालिक अपने माल-मवेशी के साथ शायद गाँव चला गया है और उसके जल्दी लौटने की संभावना भी नहीं है।

काली ने गाधी को हिला-जुलाकर रहट का निरीक्षण किया और फिर गाधी के सिरे में चादर बाँध उसे खींचने लगा। जब टिंडों से पानी चवच्चे में गिरकर नाल में बहने लगा तो भागकर हौदी में गिरते पानी से उसने हाथ-मुँह धो लिये। यह क्रिया बार-बार दोहराकर उसने भट्ठे की सुरखई मिट्टी अपने शरीर से पूरी तरह उतार दी और जी भरकर पानी पिया।

उसका मन अब किसी हद तक शांत हो गया था। निराशा और परेशानी भी कुछ कम हो गई थी। वह रहट के पास ही शहतूत के पेड़ के नीचे खेत की मुँडेर पर बैठ गया। काली को एक बार फिर ऊँघ आ गई और उसने स्वप्न में देखा कि वह बच्चे को गोद में लिए घर के खुले आँगन में बैठा है। रसोई में बैठी ज्ञानो बच्चे और काली की ओर स्निग्ध नजरों से देख मुस्करा रही है। वह अपने स्थान से उठ काली के पास आ जाती है और बच्चे का चेहरा उसके चेहरे के बराबर लाती है··· हूबहू तेरा ही नाक-नक्शा है।··· वही फिड्डा-फड्डा नाक और मोटे-मोटे

होंठ···। ज्ञानो जोर से हँसती है।

"तेरा भी तो बराबर का हिस्सा है··· आँखें और माथा बिल्कुल तेरा है।··· बहुत अच्छा पैबंद लगा है।" काली भी हँस देता है।

अपनी ही हँसी से भयभीत हो काली बौखलाकर उठ जाता है। पास ही मुँडेर पर चींटियों की कतार को मुँह में अनाज के महीन टुकड़े दबाए हुए बारीक से सुराख में घुसते हुए देखने लगता है। शहतूत की टहनियों में एक चिड़े और चिड़ी को किलोल करते और अपने बच्चों को दाना खिलाते हुए पाकर वह व्याकुल हो जाता है। वह सन्न हो जाता है कि उससे तो जीव-जंतु ही अच्छे हैं जिनका अपना घर है, परिवार है और चैन है।

इसी सोच में डूबा काली एक बार फिर भट्ठे की ओर चल पड़ा। रह-रहकर उसके मन में खयाल आ रहा था कि उसे मौत क्यों नहीं आ जाती। उसने बीते समय में कई रातें ऐसे स्थानों पर गुजारी थीं जहाँ बिच्छू-साँप का होना स्वाभाविक था लेकिन उसे कुछ भी नहीं हुआ था। चींटी तक ने भी उसे नहीं डसा था।

ज्ञानो की हालत, अपनी बेबसी, गाँववालों की खुली बेरुखी और विरोध ने उसके अंदर जीने की इच्छा को बिलकुल खतम कर दिया। काली ने सोचा कि उसकी खुशी में हँसनेवाला कोई नहीं है और गमी में किसी के रोने की भी उम्मीद नहीं है। उसका जीना-मरना जब सिर्फ उसी के लिए रह गया है तो वह क्यों न रेल के नीचे कटकर अपनी जान दे दे और तमाम दुखों से मुक्त हो जाए।

उसने फैसला कर लिया कि मुकेरियाँ से जालंधर जानेवाली आखिरी गाड़ी क नीचे वह सिर दे देगा। इसके साथ ही इस जहान में उसकी कहानी हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी और अगली दुनिया में वह नए सिरे से अपना जीवन शुरू कर सकेगा।

काली सोचने लगा कि उसकी मौत की खबर किसी-न-किसी तरह गाँव में भी पहुँच जाएगी। शायद न भी पहुँचे। यह खयाल आते ही काली उदास हो गया। वह अपनी मौत के बारे में गाँववालों की प्रतिक्रिया की कल्पना करने लगा। लोग तो शायद खुश होंगे लेकिन ज्ञानो उसके बारे में क्या सोचेगी। उसे तो केवल एकमात्र उसी का सहारा है। यह सोचते ही काली को बहुत ज्यादा शर्म महसूस हुई। वह ज्ञानो के लिए कैसा सहारा है कि वायदा करके भी उससे मिलने नहीं गया। वह आधी रात से तड़के तक कँटीले झाड़-झंखाड़ में बैठी इस उम्मीद पर उसका इंतजार करती रही होगी कि वह उसके सब दुख-दर्द दूर कर देगा और उसे उड़नखटोले में बिठा दुश्मनों की नजरों से बहुत दूर सातवें आकाश में ले जाएगा। काली भिन्ना उठा कि वह बहुत बड़ा कायर और विश्वासघाती है और घोर विपदा में ज्ञानो को बिलकुल अकेला छोड़ आया है।

जब रेलगाड़ी ने बाहरी सिगनल के निकट पहुँच जोरदार सीटी दी तो काली

खेत की मुँडेर से उठ फसल को पाँव-तले रौंदता हुआ रेल-पटरी की ओर भागने लगा। वह बार-बार पीछे मुड़कर देखता। गाड़ी को बहुत निकट पा वह पटरी के बीचोबीच चलने लगा। उसके दिल-दिमाग में अँधेरा था और मन में कोई इच्छा नहीं थी।

स्टेशन के पूर्व में फाटक पार करने के बाद रेल-पटरी से एक और पटरी निकल जाती थी। काली छलाँग लगाकर दूसरी पटरी में आ गया क्योंकि शाम की गाड़ी अक्सर इसी पटरी से आया करती थी।

काला-कलूटा रेल-इंजन जोर-जोर से सीटियाँ बजाता, चिमनी से काला धुआँ और पिस्टन से सफेद भाप छोड़ता हुआ रेल के तीन डिब्बों को अपने पीछे खींचता हुआ दनादन काली पर चढ़ा आ रहा था। उसने आँखें बंद कर लीं। गाड़ी चीखती-चिल्लाती और उसके शरीर को गर्म-गर्म भाप में भिगोती हुई स्टेशन की ओर बढ़ गई।

काली ने आँखें खोलीं तो गाड़ी प्लेटफार्म पर धीरे-धीरे रुक रही थी और छुकछुक का स्थान शाँ··· शाँ ने ले लिया था। रेल-पटरी के बीचोबीच खड़ा वह गाड़ी की ओर अविश्वास-भरी नजरों से देखने लगा। उसे महसूस हुआ कि रेलगाड़ी ने भी उसके साथ विश्वासघात किया है।

इंजन पानी भरकर एक बार फिर गाड़ी से आ जुड़ा था। चिमनी से धुएँ के काले बादल बल खाते हुए आकाश की ओर उठ रहे थे। भाप की शाँ··· शाँ भी बढ़ गई थी।

इंजन ने जोर से सीटी बजाई। साथ ही वह भकभक की आवाज पैदा करता हुआ धकाधक धुआँ छोड़ने लगा। भाप की जोरदार शू-शड़ाप की आवाजों के साथ रेलगाड़ी हिचकोले खाती हुई आगे बढ़ने लगी तो काली के दिल-दिमाग भी रोशन हो उठे। उसके मन में जीने की इच्छा इंजन की सीटी की आवाज की तरह उभरी और वह रफ्तार पकड़ रही गाड़ी के पीछे भागने लगा।

आखिरी डिब्बा पानी के बड़े पप से पीछे ही था कि काली ने उसके पिछले दरवाजे के डंडे को पकड़ लिया और डिब्बे के साथ-साथ दौड़ने लगा। उचककर पायदान पर पाँव रखने की कोशिश में वह एक-दो बार लड़खड़ा गया और पटरी के साथ पड़े पत्थरों पर घिसटने से बाल-बाल बचा। अंत में उसने पाँव पायदान पर जमा, डडे को दोनों हाथों से मजबूती से थाम लिया। खिड़की से बाहर झाँक रहे एक व्यक्ति के शोर मचाने पर दो नौजवानों ने काली को ऊपर खींच लिया।

"भाई, लड़-झगड़कर घर से भागा है और मरना चाहता है तो सीधी तरह मर। दूसरों के लिए क्यों मुसीबत खड़ी करना चाहता है।" एक बुजुर्ग ने काली की ताड़ना की।

"टिकट के बिना सफर कर रहा होगा।" दूसरे व्यक्ति ने अविश्वास-भरी नजरों

से काली की ओर देखा, "तभी तो भागकर गाड़ी पकड़ी है।"

"छोड़ो इसे। पहले ही बहुत परेशान दिखाई दे रहा है," तीसरे मुसाफिर ने बात खत्म की।

डिब्बे के सब मुसाफिर एक बार फिर अपने-आपमें सिमट गए। काली दरवाजे से पीछे हटकर फर्श पर ही बैठ गया। उसकी साँस बुरी तरह उखड़ गयी थी और वह अपने होश-हवास को भी पूरी तरह संचित नहीं कर पाया था।

फाटक पार करने के बाद इंजन अगले स्टेशन को गाड़ी की आमद की इतलाह देने के लिए जोर-जोर से सीटियाँ बजाने लगा तो काली को एकदम खयाल आया कि चोलांग स्टेशन आने ही वाला है। उसे एक बार फिर भय ने घेर लिया क्योंकि उसके गाँव के लोग रेल में सफर के लिए प्रायः इसी स्टेशन पर आते हैं।

काली फुर्ती से ऊपर की सीट पर जा बैठा। फिर वह लेट गया और सिर-मुँह चादर में लपेट लिया। लेकिन प्लेटफार्म पर लोगों की चहल-पहल पर नजर रखने के लिए उसने चादर में छोटा-सा झरोखा बना लिया था।

चोलांग का स्टेशन नजदीक आने पर गाड़ी की रफ्तार कम हो गई और इंजन ने जोरदार लंबी सीटी बजायी। फिर क्रच··· क्रच··· क्रीह-करीह की आवाजे पैदा करती हुई गाड़ी रुक गई।

काली चादर के झरोखे से सवारियो की शोर-भरी भागमभाग को देखता रहा। उसकी निगाहे स्टेशन के पार कच्ची सड़क के किनारे झोंपड़ानुमा दुकानों की ओर उठ गईं। उनसे परे पेड़ो मे घिरा एक गाँव था। उससे एक कोस के फासले पर दूसरा और लगभग एक कोस और आगे पूर्व मे उसका अपना गाँव था।

काली को याद आया कि लगभग दो साल पहले वह जालंधर से मुकेरियाँ जानेवाली पहली गाड़ी से इसी स्टेशन पर उतरा था। उस समय मन में गाँव के लिए कितनी चाह थी, बड़े-बड़े अरमान थे, अपूर्व उत्साह और ललक थी। लेकिन आज वह दिन की आखिरी गाडी से इसी स्टेशन से चोर की तरह भाग रहा है जैसे सारा इलाका उसका दुश्मन बन गया है और हर व्यक्ति सरगर्मी से उसे ही तलाश कर रहा है।

स्टेशन की ओर पूर्व से आनेवाली पगडंडी पर कुछ लोगों को गाड़ी की तरफ भागता देख काली घबरा गया। उसने मुँह दूसरी ओर फेर लिया और चादर सिर पर खींच ली।

एक लंबी और एक छोटी सीटी के बाद गाड़ी चल दी। स्टेशन की इमारत, लैंपपोस्ट और बेंच धीरे-धीरे उसकी आँखो के सामने से खिसकते हुए पीछे रह गए थे। जब गाड़ी एक बार फिर खुले खेतों में दौड़ने लगी तो काली ने इत्मीनान की साँस ली और चादर में आँखों के आगे झरोखा बना वह नीचे सीटों पर बैठी सवारियों की बातचीत सुनने लगा।

डूबते सूरज की किरणों की ठंडक और लंबी परछाइयों में काँपते खेत पीछे की ओर भाग रहे थे। काली को भी महसूस होने लगा कि उसकी बीती जिंदगी और सुख-दुख भी पीछे रह गए हैं और वह तेजी से उनसे दूर जा रहा है। यह सोच उसे राहत महसूस हुई।

जालंधर से तीन स्टेशन पहले सूरज अस्त हो गया और पीछे भागते हुए खेत भी अँधेरे में डूब गए। काली ने अपने भविष्य की कल्पना करने की कोशिश की तो वह उसे प्रतिक्षण गहराते हुए अँधेरे-सा प्रतीत हुआ। उसने हताश हो मुँह पर एक बार फिर चादर तान ली।

डिब्बे के अंदर बिजली की मद्धम रोशनी मोटे-मोटे रुपहले धब्बों की तरह फैल गई थी। खिड़कियो से छनकर रोशनी के धब्बे नीचे पटरी पर फिसलते हुए गाड़ी के साथ भाग रहे थे। सारे वातावरण पर इंजन की छुक··· छुक और डिब्बों के पहियों की गड़गड़ाहट छायी हुई थी।

गाड़ी जब जालंधर से केवल एक स्टेशन ही दूर रह गई तो काली को एक बार फिर घबराहट महसूस होने लगी। वह जालंधर शहर के बारे में सोचने लगा। बहुत कोशिश के बावजूद वह अपने दिमाग में शहर की कोई रूपरेखा और नक्शा न बन सका।

अब उसे गाँव के खौफ की जगह शहर का भय घेरने लगा था। उसने सोचा कि शायद यह शहर भी बहुत बड़ा होगा। उसमें कई गाँव आराम से समा सकते होंगे। वहाँ पर छोटे-छोटे मकानो और झोंपड़ों के अलावा आलीशान मकान, बहुत बड़ी खुली कोठियाँ और ऊँचे-ऊँचे महल और हवेलियाँ भी होंगी। शहर आदमियों से खचाखच भरा होगा, जहाँ चलते समय लोगों का आपस में कंधे से कंधा छिलता होगा। लेकिन यह याद आते ही वह बहुत उदास हो गया कि भरे शहर में उसकी जान-पहचान का एक शख्स भी नहीं होगा।

काली को महसूस होने लगा कि अँधेरे में खोए हुए पक्षी की तरह वह भी शहर में भटक जाएगा और उजाला होने से पहले ही दरो-दीवार से टकरा या थकावट से चूर हो दम तोड़ देगा।

जब सवारियाँ अपना-अपना सामान सँभालने लगीं और उसके कानों में आवाजें पड़ने लगीं कि बड़ा स्टेशन आने ही वाला है तो काली भी ऊपरी सीट से नीचे आ गया और खिड़की से सिर बाहर निकाल दूर तक फैली और टिमटिमाती हुई रोशनियों को दिलचस्पी से देखने लगा।

ज्यों-ज्यों शहर नजदीक आ रहा था, काली के मन में उसके प्रति दिलचस्पी और जिज्ञासा और मन में जिंदगी के बारे में उत्साह बढ़ रहा था।

बाहरी सिगनल पार करने के बाद इंजन जोर-जोर से सीटियाँ बजाने लगा। मुसाफिर अपना सामान उठा दरवाजों के निकट जमा हो गए ताकि गाड़ी से उतर

जल्दी से जल्दी घर पहुँच सकें। काली भी अपनी चादर थामे उनमें शामिल हो गया और प्रतिक्षण शहर के मुखर हो रहे शोर और रोशनियों को ध्यान से सुनने और देखने लगा।

गाड़ी प्लेटफार्म पर रुकी तो डिब्बों से बाहर निकलने के लिए सवारियों की उत्सुकता अपनी चरम सीमा तक जा पहुँची और वे आपस में टकराते हुए बोरी के खुले मुँह से लुढ़कते आलुओं की तरह प्लेटफार्म पर फैल गए। सब मुसाफिर तेज-तेज कदम उठाते हुए स्टेशन की ओर जा रहे थे ताकि जल्दी से जल्दी अपने-अपने ठिकाने पर पहुँच सकें।

प्लेटफार्म पर खड़े काली ने जब अपनी मंजिल के बारे में सोचा तो उसे झुनझुनी-सी आ गई। वह गाँव के अपने अधूरे मकान के अतिरिक्त और कुछ न सोच सका।

यह याद आते ही उसकी आँखों में अँधेरा छाने लगा कि उसके पास तो रेल का टिकट भी नहीं है। पकड़ा गया तो उससे पूछताछ होगी। उसको अता-पता बताने के लिए कहा जाएगा। सब कुछ भूल वह इस समस्या में पूरी तरह ग्रस्त हो गया कि वह स्टेशन से बाहर कैसे जाएगा।

जब उसकी समझ में कुछ नहीं आया तो वह दोबारा डिब्बे में घुस गया जैसे उसे इसी रेलगाड़ी में अभी अपना सफर जारी रखना था। लेकिन गाड़ी के बाहर हाथ में झाड़ू और डिब्बे थामे हुए सफाई कर्मचारियों को देख काली के हाथ-पाँव फूल गए और वह दूसरे दरवाजे से बाहर निकल उनसे दूर चला गया।

प्लेटफार्म लगभग खाली हो गया था। मुकेरियाँ से आनेवाली गाडी की सवारियाँ पुल पार करके स्टेशन से बाहर जा रही थीं। लेकिन दूसरे प्लेटफार्म पर दिल्ली जानेवाली गाड़ी के मुसाफिरों की काफी भीड़ थी। काली को याद आया कि कई साल पहले उसने भी दिल्ली जानेवाली गाड़ी वहीं से पकड़ी थी।

खाली प्लेटफार्म पर काली को सामने से पुलिस के एक हवलदार के साथ दो सिपाही आते हुए दिखाई दिए। उसे महसूस हुआ कि वे शायद उसी की ओर आ रहे हैं। काली की खौफ के मारे घिग्घी बध गई और सारे शरीर में कँपकँपी-सी छिड़ गई। भावी खतरे को महसूस करते हुए उसके शिथिल शरीर में एकदम स्फूर्ति आ गई और सन्न हुआ दिमाग भी काम करने लगा।

उसने जल्दी से चारो ओर नजर दौड़ाई ताकि अँधेरे में कहीं छिप जाए लेकिन पूरे प्लेटफाम पर कहीं तेज तो कहीं फीकी रोशनी फैली हुई थी। काली उनसे उलट सिम्मत में चलने लगा और बेन्याजी से टहलता हुआ प्लेटफार्म के अत तक पहुँच गया। उसने पीछे मुड़कर देखा। पुलिस का कहीं अता-पता नहीं था। काली ने इत्मीनान की साँस ली और चारों ओर देख सोचने लगा कि अब कहाँ जाए।

उसने नजर घुमा यार्ड की ओर देखा। वहाँ पर कुछ दूर बूढ़े हाथी-सा इंजन खड़ा था। वह थोड़े-थोड़े समय के बाद सीटी बजाता और बहुत-सी भाप छोड़

खामोश हो जाता।

इस इंजन की फीकी रोशनी पूरे यार्ड पर फैली हुई थी। वह खाली यार्ड के पार देखने लगा। गड़गड़ाहट की आवाजें आ रही थीं जैसे बहुत-सी आटा-चक्कियाँ एकसाथ चल रही हों। उसके दाईं ओर काफी दूर कई बहुत बड़े-बड़े और गोल-गोल ऊँचे ढोल खड़े थे। काली उन्हें हैरान हो देख रहा था कि दो आदमी उसके पास से तेजी से गुजरे और प्लेटफार्म से यार्ड में उतर रेल-पटरियाँ पार करते हुए आगे बढ़ने लगे। उनके सिरों पर मोटी-मोटी बोरियाँ और हाथों में बड़े-बड़े थैले थे।

काली भी उनके पीछे-पीछे चल दिया। वे रेल-लाइनें पार करके एक कच्ची सड़क पर पहुँच बाईं ओर घूम गए। काली भी कुछ फासला छोड़ उनका पीछा करता रहा। लाइन पार करने के बाद उसे बहुत इत्मीनान महसूस हुआ। उसने लंबी साँस छोड़ी। शारीरिक और मानसिक तनाव बहुत हद तक कम हो जाने के कारण वह अब खुलकर चलने लगा था और अपने-आपको हौसला देने के लिए लंबी साँस छोड़ धीरे-से खाँस भी लेता था।

कच्चा रास्ता पक्की सड़क से आ मिला। सड़क के एक ओर कोई सौ-सौ गज के फासले पर खड़े खंभों पर बिजली के बल्ब जल रहे थे और स्याह सड़क पर भूरी-सी रोशनी फैली हुई थी।

थोड़ी ही देर के बाद दोमोरिया पुल आ गया। पुल के नीचे से वह भी उन् लोगों के पीछे-पीछे दाईं ओर घूम गया। काली को जालंधर शहर के भूगोल और सड़कों-स्थानों का कोई ज्ञान नहीं था। वह इस अनुमान के सहारे चल रहा था कि रेलवे स्टेशन के आस-पास पहुँच जाएगा।

दोनों व्यक्ति एक तिराहे में दाईं ओर घूम गए। यह एक बाजार था। सड़क के दोनों ओर दुकानें अभी खुली थी और बाजार में काफी चहल-पहल थी। काली मोड़ पर रुक गया और दोनों व्यक्तियों को बाजार में आगे बढ़ते हुए देखता रहा। अपनी ओर तेजी से बढ़ते हुए ताँगे से बेखबर काली दिलचस्पी और हैरत से बाजार में दूर-दूर तक देखने की कोशिश करता रहा।

"भाई, बच मोड़ तों," कोचवान ने जोर से हाँक लगाई तो वह चौक गया और भागकर दीवार से जा सटा।

"एक सवार टेशन तक।" कोचवान ने काली की ओर मुड़कर देखते हुए हाँक लगाई। लेकिन काली से कोई इशारा न पाकर ताँगा टप-टप की आवाज पैदा करता हुआ उसके पास से तेजी से निकल गया।

काली ने अंदाजा लगा लिया कि रेलवे स्टेशन बाईं ओर होना चाहिए। वह ऊँची दीवार के साथ-साथ उस ओर बढ़ने लगा जिधर ताँगा गया था। अभी वह स्टेशन से काफी दूर ही था कि एक इंजन दीवार के पार आकर रुका और कुछ क्षणों बाद सीटी बजाता और भाप छोड़ता हुआ पीछे मुड़ गया।

यह देख काली का अनुमान विश्वास बन गया कि वह रेलवे स्टेशन की ओर ही जा रहा है। वह इस तरह कदम उठाने लगा जैसे अपने घर की ओर बढ़ रहा हो।

इस शहर में रेलवे स्टेशन के अतिरिक्त काली किसी भी ऐसे स्थान की कल्पना नहीं कर पा रहा था जहाँ रात-भर के लिए शरण और सुरक्षा मिल सकती थी।

रेलवे रोड पर स्टेशन के पास ढाबों की कतार और उनसे दाल-सब्जी के तड़के की खुशबू को नथुनों में समोता और उससे लुत्फ लेता हुआ काली स्टेशन की ओर यूँ बढ़ता रहा जैसे वह अपने पुश्तैनी मकान की ओर जा रहा हो।

रेलवे स्टेशन के बाहर खड़े ताँगों, कोचवानों, कुलियों, सवारियों और उनका पीछा करते हुए भिखारियों और भिखारिनों से बचता-बचाता वह तीसरे दर्जे के विश्रामगृह में पहुँच गया। वहाँ बहुत-से लोग जमीन पर कपड़ा बिछाकर और कुछ बेंचों पर लेटे हुए थे। काली ने इधर-उधर झाँका और एक कोने में खाली स्थान देख उसे राहत मिली। उसने जेब में पड़ी अपनी पूँजी को टटोला। उसने कपडे में बँधे सिक्कों के चौकोर और गोल किनारों को मजबूती से छूकर महसूस किया और मन-ही-मन में हिसाब लगाया। उसके पास कुल पूँजी एक रुपया और दो आने थी।

कोने की बेंच पर बैठा व्यक्ति उठ गया तो काली ने उसके एक किनारे डेरा लगा लिया। वह सोचने लगा कि स्टेशन के बाहर ढाबे पर खाना खाए या फिर यहीं पर कुल्चे-छोले से गुजारा कर ले। वह कुछ समय तक इस बारे में अपने आपसे ही सलाह-मशवरा करता रहा। बहुत सोच-विचार के बाद काली ने फैसला किया कि उसे कुल्चे-छोले खाकर ही पेट भर लेना चाहिए, क्योंकि इन पैसों को अधिक से अधिक समय तक चलाना है।

कुल्चे-छोलेवाला भी अपनी छाबड़ा सरकंडे के तिलौने पर टिकाए हुए अलसाया-सा खड़ा था। काली को अपनी ओर देखता पा कुल्चाफरोश ने हाँक लगाई—"गर्म छोले-भठूरे··· गर्मागर्म छोले-कुल्चे··· काबुली चने··· करारे··· मसालेदार।"

काली लपककर छाबड़ीफरोश के पास चला गया। वह दिलचस्पी से बड़ी परात के एक कोने में चनों की नन्हीं-सी पहाड़ी को देखने लगा। उसके ऊपर हरी मिर्च, टमाटर के टुकड़े, हरे धनिये के पत्ते रखे हुए थे। परात को छोटी अँगीठी पर टिकाया हुआ था ताकि चने गर्म रहें। परात के साथ एक और छोटी अँगीठी थी जिस पर छोटा-सा तवा रखा था।

परात में सजाई सब चीजों का काली ने ध्यान से निरीक्षण किया। उसने देखा कि भठूरा, कुल्चे से ज्यादा मोटा है। उसने भठूरे की ओर इशारा किया, "यह कितने का है ?"

"आने के दो।" छाबड़ीवाले ने तुरंत उत्तर दिया और भठूरे उठाने के लिए

हाथ बढ़ा दिया।

"और इसका ?" काली ने कुल्चे की ओर इशारा किया। "यह भी आने के दो ?"

"और छोले ?"

"मुफ्त।"

"तो एक वह दे दो और एक यह।" काली ने भठूरों और कुल्चों की ओर बारी-बारी संकेत किया।

छाबड़ीवाले ने कागज के एक टुकड़े पर एक कुल्चा और एक भठूरा और पत्ते के दोने में चने डाल दिये।

काली ने दो-दो करके चार कुल्चे और भठूरे खाये। उसने पैसे दिये और नल से पेट भर पानी पिया और डकार मारता हुआ चाय की रेढ़ी के पास आ खड़ा हुआ। वहाँ एक लंबी चोटीवाला तिलकधारी पंडित भी चाय की तलब बुझाने के लिए पहले से ही खड़ा था। उसे देख काली ठिठक गया क्योंकि उसे अपने गाँव के पंडित संतराम की याद आ गई थी। चाय के लिए बोल वह थोड़ा पीछे हट गया। चायवाले ने दो कप चाय बनायी और एक-एक कप पंडित और काली की ओर बढ़ा दिया।

पंडित ने चाय का एक घूँट भरा और बुरा-सा मुँह बना लिया, "मीठा कम है। दो चम्मच और शक्कर डाल दो।"

पंडित की देखादेखी काली ने भी अपना कप आगे बढ़ा दिया और शक्कर का चम्मच डलवाकर कप मे चाय को हिलाता हुआ पीछे हट गया। वह पूरा लुत्फ लेने के लिए चाय के घूँट को अंदर खींच सड़ूप-सड़ूप की आवाज पैदा करता हुआ चोरी-छिपे पडित की ओर देखने लगा।

काली अभी चाय पी ही रहा था कि दूर से रेल-इंजन की सीटी की आवाज सुनायी पड़ी। वह निरंतर नजदीक आ रही थी। साथ ही गाड़ी की गड़गड़ाहट और धमक तीखी होने लगी थी।

तीसरे दर्जे के मुसाफिरखाने के दोनों दरवाजों में नीली और लाल कुर्तियाँ पहने हुए कई कुली बीड़ी-सिगरेट का आखिरी कश खींच उन्हें पाँव-तले मसलते हुए प्लेटफार्म की ओर भाग रहे थे।

काली भी बड़े गेट के निकट चला गया। लेकिन सफेद वर्दी पहने दो बाबुओं को उधर आते देख वह घबराकर पीछे हट गया।

कुछ ही क्षणों में सीटियाँ बजाते हुए मेलगाड़ी ने स्टेशन मे प्रवेश किया। चमचमाते डिब्बे गेट के सामने से निकल गए और चीं··· चीं की आवाजें पैदा करते हुए रुक गए।

प्लेटफार्म पर कुहराम-सा मच गया था। एकसाथ बहुत-सी आवाजें उठने लगी

थीं। कुछ ही देर में सामान से लदी-फदी सवारियाँ बड़े गेट से मुसाफिरखाने में आने लगीं। कोचवान सवारियों को घेरने लगे, "लालाजी, कहाँ जाना है। बाबूजी, पेशावरी ताँगा है।" कोचवान एक ही साँस में इतनी सड़कों, मुहल्लों और बाजारों के नाम ले रहे थे कि समझ पाना कठिन था। कई सवारियाँ किराये का मोल-तोल करती हुई तकरार पर उतर आती थीं।

सवारियों को ले कोचवान आपस में भी उलझ पड़ते थे। एक कोचवान दो सवारियों का सामान अपने ताँगे में रखने लगा तो दूसरे ताँगेवाले ने उसका दामन पकड़ते हुए रोब से पूछा, "कहाँ ले जा रहा है इनका सामान ?" "क्यों तू इनका मामा लगता है ?" पहले कोचवान ने अपना दामन छुड़ा उसका हाथ झटक दिया।

"मामा लगता होगा तू। इनसे पहले मैंने बात की है।" दूसरे कोचवान ने जबर्दस्ती उनका सामान उठा लिया।

धीरे-धीरे सवारियो से लदे-फदे ताँगे स्टेशन के अहाते से बाहर निकलने लगे। मेलगाडी भी प्लेटफार्म से खिसकती हुई आगे बढ़ गई और उसकी गड़गड़ाहट और धमक क्षण-प्रतिक्षण कम हो खामोशी में डूब गई।

मुसाफिरखाने में भीड़ बढ़ती देख काली ने चाय का आखिरी घूँट जल्दी से भरा और खाली कप चायवाले के पाँव के पास रख बेंच पर जा बैठा।

एक व्यक्ति को बेंच की ओर आता देख काली पसरकर बैठ गया और पीठ पीछे फट्टे से टिका दी। बेंच पर अपना कब्जा सुनिश्चित बनाने के लिए उसने टाँगें आधी पसार ऊपर चादर फैला दी।

प्लेटफार्म से यलगार करते हुए भिखारी और भिखारिनें मुसाफिरखाने में घुस आए। उनमे बूढ़े, बुढ़िया, जवान और बच्चे शामिल थे।

वे अलग-अलग गिरोहो मे बँटकर दिनभर की कमाई का हिसाब जोड़ने लगे। वे कभी-कभार आपस में उलझ पड़ते और उनमें तकरार तक की नौबत आ जाती।

कुछ बूढ़े भिखारी और भिखारिनों ने अपनी मैली-कुचैली और फटी-पुरानी चादरें फैला दी ताकि तड़के आने-जानेवाली गाड़ियों में भी भीख माँग सकें। लेटने से पहले उन्होंने पैसों की गुत्थियों को अच्छी तरह टटोला। औरतों ने अपनी-अपनी गुत्थी को नेफे मे बाँध लिया और मर्दों ने उन्हें फटी कुर्ती की अंदरूनी जेबों में बकसुए से सी दिया।

कुछ नौजवान भिखारी एक कोने में बैठे ताश फेटते हुए जुआ खेलने लगे और कुछ स्टेशन के बाहर रेलवे रोड पर ठेका शराब देसी की ओर बढ़ गए।

नौजवान भिखारिनो ने अपनी चादरें बूढ़ी भिखारिनों के बीच बिछा दीं और आपस में दबी आवाज में बातें करने लगीं। कभी-कभी वे मुँह पर हाथ रख हँसी को दबाने के लिए आपस में लिपट जातीं।

काली भी निश्चिंत हो बेंच पर लेटा था कि प्लेटफार्म और मुसाफिरखाने के

बीच सदर दरवाजे से दो सिपाहियोंसमेत हवलदार नमूदार हुआ। हवलदार के पास गज-भर लंबी बेंत की छड़ी और सिपाहियों के पास सुमदार लाठियाँ थीं। हवलदार के साथ एक और व्यक्ति भी था। उसके एक हाथ में छोटा ट्रंक और बगल में थैला था।

हवलदार ने मुसाफिरखाने में चारों तरफ नजर दौड़ाई। सब बेंच रुकी हुई थीं। फर्श पर लोग या तो लेटे हुए थे या फिर बैठे गप हाँक रहे थे।

"यह मुसाफिरखाना है या सराय ?" हवलदार रात के समय वहाँ इतनी भीड़ देख भिन्ना गया।

वह एक बेंच की ओर बढ़ा और उस पर लेटे व्यक्ति को डंडे के टहोके से उठा दिया, "यहाँ क्यों लेटा है ?"

"सवेरे तड़के की गाड़ी पकड़नी है, होशियारपुर के लिए।"

"गाड़ी तड़के पकड़नी है और डेरा अभी से जमा लिया है ?"

"अमृतसर से आया हूँ। इस वक्त होशियारपुर के लिए कोई गाड़ी नहीं है।"

"टिकट कहाँ है ?" हवलदार ने रोब से पूछा।

"टिकट है।" सवारी ने जेब से रुमाल निकाला और गिरह खोल उसमें बँधे टिकट को हवलदार की ओर बढ़ा दिया।

हवलदार ने टिकट का निरीक्षण कर सवारी को लौटा दिया। फिर वह सिपाहियों की ओर मुड़ गया, "मुसाफिरखाने में हर आदमी का टिकट चैक करो।"

सिपाही बेंचो पर लेटे और बैठे लोगों की ओर बढ़ गए। यह देख काली घबैरा गया। हवलदार को अपनी ओर आता देख उसका चेहरा फक् हो गया और धीरे-से चादर समेट वह बेंच के एक कोने में सरक गया।

"टिकट दिखाओ ?"

हवलदार की कड़कती आवाज सुन काली की घिघ्घी बँध गई और उसने हाथ जोड़ इकार में सिर हिला दिया।

"मुसाफिरखाने को ननिहाल का घर समझ रखा है। भागो यहाँ से।" हवलदार ने अपना डंडा काली की ओर लहराया।

काली चादर को समेटता हुआ भाग निकला तो हवलदार ने सिपाहियों को आवाज दी, "जिसके पास टिकट नही है, उसे धक्के देकर बाहर निकाल दो।"

फिर उसने अपने साथ आए व्यक्ति की ओर देखा, "अपना सामान रखो जी। और पूरे बेंच को सँभाल लो। टाँगें पसारकर आराम से नींद पूरी करना।" हवलदार मूँछों पर उँगली से ताव देने लगा।

"बहुत-बहुत शुक्रिया।" व्यक्ति ने अपने हाथ और बगल का सामान बेंच पर टिका दिया और वे चाय की रेढ़ी की ओर बढ़ गए।

"निक्के, चाय बढ़िया बनाना।... पुराना दोस्त है।" हवलदार ने अपने साथी

की ओर इशारा किया, "इसे शिकायत न हो कि हवलदारी के बावजूद कच्ची चाय पिलवाई है।"

"बादशाहो, क्या बात करते हो।" हवलदार के साथी ने हँसते हुए कहा, "जब सोने के लिए पूरी बेंच दिला दी है तो चाय कैसे घटिया हो सकती है ?"

"यार, तू एक बार कहके तो देख। सारा मुसाफिरखाना खाली करा दूँगा।" हवलदार ने अपने दायें कंधे पर लगी तीन फीतियों की ओर इशारा किया।

"बादशाहो, मालिक हो, मालिक।" हवलदार का साथी प्रशंसा में मुस्करा दिया।

चाय पी हवलदार ने सिपाहियोंसमेत मुसाफिरखाने का चक्कर लगाया। एक कोने में जुआ खेल रहे नौजवान भिखारी अपने पत्ते समेटकर चुपके-से खिसकने लगे थे। लेकिन हवलदार ने उन्हें देख लिया था। उसने अपना डंडा हवा में लहराते हुए सिपाहियों को हुक्म दिया, "पकड़ो सालों को, मुसाफिरखाने को जुआघर बना रखा है।"

सिपाहियों ने आगे बढ़ फर्श पर लाठियाँ मारीं तो नौजवान भिखारी भागकर अँधेरे में खो गए।

बूढ़े भिखारी और भिखारिनें अपनी अर्द्धनग्नता को छिपाने के लिए मैली-कुचैली और फटी-पुरानी चादरें अपने इर्द-गिर्द लपेटने लगे। जवान भिखारिनें अपने शरीरों को समेटकर सिकुड़ गई थीं।

"तुम यहाँ क्या कर रहे हो। भागो यहाँ से ?" हवलदार ने भिखारियों की ओर डंडा लहराया।

"सरकार, कमर सीधी कर रहे हैं।" सबसे बुजुर्ग भिखारी ने गिड़गिड़ाते हुए हाथ जोड़े।

"क्यों ? सारा दिन कस्सी चलाते रहे हैं, जो थकावट हो गई है। कमर अकड़ गई है ?... उठो यहाँ से। साले दिन में भीख माँगते हैं, रात को चोरी करते हैं, डाके डालते हैं।" हवलदार ने दाँत पीसे।

"सरकार, डाका-चोरी करने लायक होते तो सबके आगे हाथ क्यों फैलाते... सबका भला क्यों माँगते।"

"बकवास बंद।" हवलदार ने जोर से डंडा लहराया।

फिर वह एक नौजवान भिखारिन को रान खुजाते देख होंठों पर जीभ फेरता हुआ भड़क उठा। "इसे देख, इसे जरूरत से ज्यादा ही खुजली हो रही है।"

हवलदार ने दोनो सिपाहियों को आवाज दी, "इन्हें निकालो यहाँ से। जब से इन लोगों ने मुसाफिरखाने को अपना रैन-बसेरा बनाया है, थाने में चोरी की वारदातों का इंदराज बढ़ गया है।"

दोनों सिपाही झिड़कियाँ देते भिखारियों और भिखारिनों के कपड़े खींचने लगे तो भिखारी उठ गए। "कहर मालिक का।" एक बुजुर्ग भिखारी ने हवलदार की

ओर हाथ लहराया। "सरकार, मरे को मारने में क्या बहादुरी। हम तो पहले ही मरे हुए हैं।"

भिखारी और भिखारिनें बुदबुदाते हुए मुसाफिरखाने से बाहर आ बाहरी दीवार के पास रुक गए। "बैठ जाओ यहीं।"

"यहाँ खुले में ?" एक नौजवान भिखारिन ने आपत्ति की।

"इन्हें जाने दो। फिर अंदर चले जाएँगे।"

स्टेशन के सामने खुली जगह खाली हो गई थी। ताँगों की टाप, घुँघरुओं की छनछनाहट और चाबुक की शूँ··· शाँ··· की आवाजें दूर जा चुकी थीं। कुली भी अपनी दिन-भर की कमाई गिरह में बाँधे अपने-अपने घरों की ओर जा रहे थे।

गाड़ी और मुसाफिरों के जाने के बाद रेलवे स्टेशन बिलकुल वीरान-सा हो गया था। सामने से कई कुत्ते आए और पूँछ उठाये, दनदनाते हुए प्लेटफार्म पर चले गए। स्टेशन के दाईं ओर बस अड्डे के पास की दुकानें भी बंद हो रही थीं।

सड़क की रौनक भी खत्म हो गई तो काली भी अपनी जगह से हिला। उसके कदम एक बार फिर मुसाफिरखाने की ओर बढ़ गए लेकिन वह उलटे पाँव ही वापस आ गया क्योंकि सिपाहियोंसमेत नया हवलदार वहाँ बैठा चाय पी रहा था।

काली बस अड्डे की ओर आ गया। धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ वह बंद दुकानों के निकट आ पहुँचा। दुकानों के सामने पड़ी बेचे खाली थी। काली ने रात वहीं एक बेंच पर लेटकर काटने के बारे में सोचा।

वह अभी बेंच से कुछ दूर ही गया था कि ठंडी हो रही भट्ठी के पास से एक कुत्ता निकला और उछल-उछलकर उसकी ओर भौंकने लगा। अगले क्षण कई और कुत्ते भौंकते हुए बाहर निकल आए और काली को अपने घेरे में लेने लगे।

कुत्तों से बचता-बचाता काली दुकानों से हटकर बस अड्डे की ओर आ गया। उसने सोचा कि शहर का कुत्ता तो कुत्ते का मददगार है लेकिन आदमी नहीं।

अपने अकेलेपन पर काली रुआँसा-सा हो उठा और बस अड्डे के खाली बरामदे के एक कोने में चादर बिछा लेट गया और आनेवाली सुबह के बारे में सोचने लगा।

दो

रेलवे स्टेशन पर तड़के की गाड़ियों की रेल-पेल और शोर-शराबे के कारण काली की आँख जल्दी ही खुल गई। कई दिनों की थकावट और दिमागी परेशानी के बाद वह अपने-आपको किसी हद तक हल्का और स्वस्थ महसूस कर रहा था। जब उसे अड्डे के पिछवाड़े में कुछ आवाजें सुनाई दीं तो वह घबरा गया और दबे-पाँव सड़क के किनारे आ खड़ा हुआ।

कुछ ही समय के बाद अड्डे के पिछवाड़े से चार आदमी बातें करते हुए भीतरी दरवाजे से खुले आँगन में आए। उन्होंने एक कोने में पड़ी खाली बोतलें उठायीं और हैंडपंप से पानी भर वे रेलवे स्टेशन की बाहरी दीवार के साथ चलते हुए रेलवे रोड की ओर बढ़ गए। लेकिन कुछ लोग खाली हाथ ही बस अड्डे की पिछली छोटी दीवार फाँदकर ढलान में उतर गए।

काली भी दीवार फलाँग उनके पीछे-पीछे चलने लगा। वह जल्दी ही खुली जगह में पहुँच गया। वहाँ सैकड़ों लोग फैले हुए थे। काली भी बचता-बचाता एक खाली जगह पर जा बैठा। रफाहाजत के बाद वह छप्पड़ पर चला गया।

वह अपने-आपको और भी हल्का महसूस करने लगा था, क्योंकि एक अनजान जगह में सुबह की एक बहुत बड़ी जरूरत आसानी से पूरी हो गई थी। वह दीवार पार करके अड्डे के अंदर आ गया। दो बसें खुले आँगन में खड़ी थीं। ड्राइवर इंजन को स्टार्ट करने में लगे हुए थे जबकि क्लीनर कपड़े से बस के बाहरी हिस्से को झाड़-पोंछ रहे थे।

बस अड्डे के साथ रेलवे रोड पर हलवाइयों की दुकानों पर अँगीठियाँ जल गई थी और सफाई के बाद साज-सामान करीने से रखने का काम जोर-शोर से जारी था।

बसों की सफाई के बाद ड्राइवर और क्लीनर दुकानो पर आ बैठे तो अपने चारों ओर देखता हुआ काली नल की ओर यूँ बढ़ने लगा जैसे चोरी करने जा रहा हो। उसका जी चाहा कि वह नहा ले ताकि शरीर और भी हल्का हो जाए। लेकिन उसने इरादा बदल लिया कि पता नहीं बाहर के लोगों को बस अड्डे के हैंडपंप पर नहाने-धोने की इजाजत है कि नहीं।

मुँह हाथ धो काली खाली बसों के पास आ गया। अधेड़ उम्र का एक व्यक्ति जोर-जोर से चिल्ला रहा था। "चल भई, लुधियाना, फगवाड़ा, गुरायाँ, फिल्लौर।"

फिर वह दूसरी लारी का बोनट थपथपाता हुआ हाँक लगाता—"चल भई, चहेड़ू, फगवाड़ा, बहराम, बंगा, नवाँशहर।"

वह आवाज बदल-बदलकर और स्थानों के नामों को आगे-पीछे करके बार-बार बोले जा रहा था। "शंगारया, जोर से साफ आवाज दे। फटे हुए ढोल की तरह क्यों बाँ-बाँ कर रहा है ?" बस के क्लीनर ज्ञान ने हँसते हुए कहा।

"क्या करूँ भा, गला बैठ गया है। कल कच्ची सड़क पर लारी में चला गया था। गले में धूल भर गई है।" शंगारे ने खँखारकर गला साफ करने का यत्न किया।

"तो रात को शराब से गरारे कर लेता। इस काम के लिए पाव-भर ही काफी थी। गला भी साफ हो जाता और नींद भी बढ़िया आती।" ज्ञान हल्का-सा हँसा।

"भा जी, बहुत महँगा इलाज बता रहे हो। इस काम में पेट-भर रोटी तो मिलती

नहीं, इतना महँगा इलाज कैसे होगा ?" शंगारा बसों के गिर्द चक्कर काटता हुआ आवाज दे रहा था।

"ओये होके दया पुत्तरा, बाहर सड़क पर जाकर आवाज दे। अड्डे के अंदर तो अंधे और बहरे को भी पता चल जाएगा कि जालंधर-लुधियाना और जालंधर-नवाँशहर की लारियाँ तैयार हैं।" भारी-भरकम ड्राइवर संतासिंह ने शंगारे को प्यार से डाँट दिया।

शंगारा मुस्कराता हुआ सड़क की ओर बढ़ गया। उसने दायें हाथ के अँगूठे को गाल पर टिका चारों उँगलियाँ मुँह के किनारे जोड़ दीं और ऊँची आवाज में होका देने लगा, "चल लुधियाना··· लुधियाना, फगवाड़ा-फगवाड़ा··· बंगा··· बंगा··· फिलौर-गुरायाँ··· नवाँशहर··· नवाँशहर। मेलगाड़ियाँ छूटने ही वाली हैं।"

शंगारे की फटी आवाजों को सुन संतासिंह जोर-जोर से हँसने लगा। उसकी रानों पर झुके पेट में हँसने के कारण लहरें-सी पैदा हो रही थीं। कुछ सवारियों को अड्डे में प्रवेश करते देख संतासिंह और ज्ञान बेंच से उठ अपनी बस की ओर आ गए। ज्ञान गाड़ी के पिछले दरवाजे के पास रुक गया जबकि संतासिंह ने अपनी सीट सँभाल ली। उसने हिल-जुलकर अपने पेट को स्टीयरिंग व्हील और सीट के बीच खाली जगह में अच्छी तरह टिकाया। इस क्रिया मे उसकी साँस फूल गयी थी। उसे दुरुस्त करने के लिए वह खाँसने लगा। संतासिंह की पेट सँभालने की क्रिया को ज्ञान बहुत दिलचस्पी से देख रहा था। शंगारा भी हाँक लगाना भूल गया। उसकी ओर झुकते हुए ज्ञान फुसफुसाया, "ताये के पेट में अगर बच्चे हुए तो आधी दर्जन से कम नहीं होंगे।"

"और अगर गंद भरा है तो कम-से-कम आधे शहर का जरूर होगा।" शंगारा खी-खी हँसा।

"और अगर शराब हुई तो पाँच-सात ड्रम आराम से निकल आएँगे।" ज्ञान खुलकर हँसा।

संतासिंह को पता था कि वे उसकी गोगड़ (बहुत उभरा हुआ पेट) को ले मजाक उड़ा रहे हैं। गर्दन घुमा क्रुद्ध नजरों से दोनों की ओर देख वह दाँत पीसने लगा, "क्या होका तुम्हारा बाप लगाएगा ? साले यूँ खी-खी हँस रहे है जैसे नकले देख रहे हों।"

और शंगारे ने हँसी को दबाने के लिए मुँह पर हाथ रख लिए और दबे-पाँव वहाँ से खिसक गए और अलग-अलग दिशाओं में जा फिर से ऊँची आवाज में होका देने लगे। "भाई, लुधियाना, फगवाड़ा, गोरायाँ, फिल्लौर, बेहराम, बंगा, नवाँ-शहर··· नवाँशहर, लुधियाना। गाड़ियाँ तैयार हैं।"

बसों को तैयार देख सड़क पर जा रही दो भिखारिनें अड्डे में आ गईं। ज्ञान के सामने हाथ फैला गिड़गिड़ाती हुई वे पैसा-दो पैसे की खैरात माँगने लगीं।

"शंगारया, इनका हाल देख।" ज्ञान ने भिखारिनों की ओर इशारा किया, "सुबह से सवारी का मुँह देखा नहीं। अभी एक भी टिकट काटी नहीं और लेनदार बनकर ये बीवियाँ सुबह-सवेरे आ धमकी हैं।"

"रब भाग लगाए। वेहड़े रसदे-बसदे रहें।" भिखारिनों ने अपनी गिड़गिड़ाहट जारी रखी।

"जाओ, बसों का मालिक आगे बैठा है। ड्रैवर साब की सीट पर। उनसे माँगो। मन में दया आ गई तो झोली भर देगा।" शंगारे ने संतासिंह की ओर इशारा किया।

भिखारिने संतासिंह की सीट के सामने हाथ फैला भीख माँगने लगीं। संतासिंह की उम्र के हिसाब से उन्होंने दुआएँ भी बदल दी, "सरदारा, आप बारह पोतों का मुँह चूमें। लारियाँ चलती रहें। रब रजके भाग लगाए। बस, चाय के पैसे दे दे।"

संतासिंह ने पहले तो भिखारिनों को अनदेखा करने के लिए मुँह दूसरी ओर फेर लिया। लेकिन वे जब दुआओं के साथ-साथ खिड़की को भी थपथपाने लगी तो संतासिंह ने क्रुद्ध हो उनकी ओर देखा, "भागो यहाँ से। मुशटंडियाँ कहीं की।"

लकिन जब भिखारिनों की गड़गडाहट तकरार बनने लगी तो सतासिंह ने धमकी दी, "भलमानसी से जाती हो या उठाऊँ हैण्डल ?" "सरदारा, खैर न दे। मीठा तो बोल। बोहनी का टैम है।" एक भिखारिन ने सतासिंह की ओर जोर-जोर से हाथ लहराया और दूसरी भिखारिन की बाँह पकड़ लारी की ओर तिरस्कार से देखा, "चल, टेशन पर ही चलते हैं। सवेरे-सवेरे यहाँ कजूस के माथे लगे हैं। रब खैर करे।"

सतासिंह भिखारिनों की ओर देखता रहा। जब वे अड्डे से बाहर निकल गईं तो वह दोनों हाथ स्टीयरिंग पर टिका इत्मीनान से बैठ गया।

शंगारा और ज्ञान आवाजें लगाते-लगाते थककर खामोश हो गए। शंगारे ने चारों ओर देख ज्ञान से पूछा–"रात मजदूरों में से अड्डे पर कौन रहा था ?"

"सोमा था।"

"वह तो सुबह से नजर ही नहीं आया। कहाँ मर गया है ?"

"सवेरे तो था। जंगल-पानी के लिए हमारे साथ ही गया था।"

सोमे को दीवार फाँद अड्डे में आते देख ज्ञान ने उसकी ओर इशारा किया, "ले, तू याद कर रहा था। सोमा आ गया।"

"कहाँ चला गया था तू ?" शगारे ने रोब से पूछा।

"यारा, गाँव के दुकानदार का मण्डी के लाले के लिए जरूरी पैगाम था। वह देने गया था।"

"सामानवाली सवारी आ जाती तो लारी की छत पर सामान कौन पहुँचाता?"

शंगारे का लहजा सख्त हो गया।

"यारा, पहली लारियों में भारी सामानवाली सवारियाँ कम ही होती हैं। वैसे भी मैंने मण्डी तक आना-जाना ही किया। लाला के घर चाय-लस्सी भी नहीं पी।" सोमा हाथ रगड़ मुस्कराया।

"नहीं, लाला तो तुम्हें देसी घी और केसर-कस्तूरी डाल भूरी भैंस का दूध पिलाता।" शंगारे ने घृणा से सिर झटका। "चल, होका लगा। हम बोल-बोलकर थक गए हैं।"

सोमे ने सिर पर लपेटा साफा उतार बगल में दबा लिया और सड़क के किनारे जा जोर-जोर से लुधियाना, फगवाड़ा, नवाँशहर की हाँक लगाने लगा। बाद में शंगारा और ज्ञान भी इस काम में शामिल हो गए।

दिल्ली, होशियारपुर, अमृतसर से रेलगाड़ियाँ आ जाने के बाद बस अड्डे पर रौनक बढ़ने लगी थी। एक-एक, दो-दो करके सवारियाँ दोनों बसों में बैठ रही थीं। शंगारा, ज्ञान और सोमे की हाँकें भी ऊँची हो गई थीं। सोमा सामान से लदी-फँदी सवारी आने पर हाँक लगाना छोड़ उसके पास चला जाता।

काली को महसूस हुआ कि उसे बस अड्डे पर भी काम मिल सकता है। लेकिन यह खयाल आते ही वह भयभीत हो गया कि गाँव के किसी आदमी ने उसे यहाँ देख लिया तो उसकी पोल खुल जाएगी। वह निराश हो बहुत पीछे हट गया और दीवार का सहारा ले सोच में डूब गया।

मन में यह विचार आते ही काली को कुछ ढाँढ़स बँधी कि गाँव के लोग इस शहर तक कहाँ सफर करते हैं। वे तो आस-पास के गाँवों तक ही रिश्तेदारों के पास आते-जाते हैं। थाने-कचहरी में काम हुआ तो टाँडाउड़मुड़, दसूहा या ज्यादा से ज्यादा होशियारपुर हो आए। हाँ, गाँव का लाला कभी-कभार शायद यहाँ सौदा लेने मण्डी में आता होगा। बहुत-से लोगों ने तो जालंधर देखना तो दरकिनार, शायद इसका नाम भी नहीं सुना होगा। काली दीवार से हट एक बार फिर बसों के आसपास मँडराने लगा।

बसों मे काफी सवारियाँ बैठ चुकी थीं। ज्ञान ने सूरज की ओर देख संतासिंह को आवाज दी, "ताया, दबा दे कीली। टैम हो गया है। अभी कचहरी और फाटक से भी सवारी उठानी है।"

संतासिंह ने बस स्टार्ट कर दी। ज्ञान बस की पिछली खुली खिडकी के पायदान पर खड़ा हो जोर-जोर से हाँक लगाने लगा।

थोड़े ही वक्फे में दोनों बसें काला और बदबूदार धुआँ छोड़ती और लड़खड़ाती हुई बाहर निकल गईं।

अड्डे में फैले हुए लोग सिमटने लगे थे। आपाधापी और शोर-शराबा खत्म हो जाने से वातावरण एक बार फिर शांत हो गया था।

शंगारा और सोमा भी एक चाय की दुकान की बेंच पर बैठ सिगरेट-बीड़ी फूँकते हुए इधर-उधर की बातों में व्यस्त हो गए थे।

काली भी टहलता-टहलता उनके निकट चला गया और कुछ फासले पर खड़ा हो उनकी बातें ध्यान से सुनने की कोशिश करने लगा। उसने सोचा कि अड्डे में ही मजदूरी या कोई और छोटा-मोटा काम ढूँढ़ने के लिए उनसे बात की जाए। वह साहस बटोर उनके बहुत नजदीक जा खड़ा हुआ लेकिन वे उसकी मौजूदगी से बेपरवाह अपनी बातचीत में पूरी तरह खोए रहे।

जब लुधियाना से आनेवाली बस ने अड्डे में प्रवेश किया तो सोमा साफे को सिर पर लपेटता हुआ बस की ओर लपक गया। शंगारा सुस्ताने के लिए खाली बेंच पर लेट गया। फिर वह भी एकदम उठ बस की ओर बढ़ गया।

ड्राइवर ने खिड़की खोल नीचे छलाँग लगा दी। "बाबयो, सत सिरी अकाल।"

"सत सिरी अकाल। क्या हाल है तेरा शंगारया ?"

"बाबयो, ठीक हूँ। वाहेगुरु की फुल मेहर है।" शंगारे ने सूरज की ऊँचाई का अंदाजा लगाते हुए पूछा, "बाबयो, लारी लेट नहीं आई क्या ?"

"हाँ, नकोदर रेल लाइनवाला फाटक बंद था।" ड्राइवर मिलखासिंह ने मैले हाथों को देख उन्हें रगड़ते हुए, क्लीनर को आवाज दी, "ओए मुखत्यारे, जा भागकर वर्कशाप से प्यारू मकैनिक को बुला ला। गाड़ी का इंजन खडखडा रहा है। उसे बोल कि बोनट उठा पड़ताल कर ले।"

"बाबयो, मैं जो हूँ इन कामों के लिए। मुखत्यारे को तो अभी अड्डा इंचार्ज को फेरे का हिसाब-किताब भी देना होगा।" शंगारा वर्कशाप की ओर जाने लगा।

"ओए, तू इतना मोतबर मत बन। मुखत्यारे को ही जाने दे। वैसे भी हम अपना हिसाब-किताब आखिरी फेरे के बाद लुधियाना में ही देते है।" मिलखासिंह ने शगारे को मना कर एक बार फिर मुखत्यारसिंह को आवाज दी।

मिलखासिंह को अपने गंदे हाथ दाढ़ी पर फेरते हुए मुखत्यारसिंह मुस्करा दिया, "चाचा, दाढ़ी काली करने का इतना ही शौक है तो खजाब लगाया कर। इंजन की कालख से यह काम क्यों ले रहा है।"

"ओ दाढ़ी के पुत्तर, भागकर वर्कशाप से प्यारू मकैनिक को बुला ला। इंजन खड़खड़ा रहा है। उसे बोल कि आकर देख जाए और अगले फेरे से पहले इसे ठीक कर दे।"

मुखत्यार के साथ शंगारा भी वर्कशाप की ओर चला गया। मिलखासिंह इधर-उधर झाँकता हुआ दफ्तर में घुस गया।

सवारियों के साथ-साथ बस से बरकत और तोखा भी उतरे। सोमे को बस के पिछले हिस्से में लगी सीढ़ी की ओर फलाँगते देख बरकत ने उसे आवाज दी, "सोमे, रहने दे। छत खाली है। भारी सामानवाली सवारियाँ सदर थाने और कचहरी

चौक में उतर गई थीं। लाडोवाली और नकोदर की सवारियाँ थीं। हम चार आने कमा लाए हैं।"

सोमा बस से हट बरकत और तोखे के पास आ गया।

"शाम के आखिरी फेरे कैसे रहे ?" बरकत ने जेब में पड़ी चार इकन्नियों को खनखनाते हुए पूछा, "बस यूँ समझो कि रात की रोटी के पैसे भी मुश्किल से ही निकले। पेट दबाकर ही खाना खाया।" सोमा कुछ निराश था।

"कोई बात नहीं। दोपहर को पेट-भर खा लेना। मैं दो रोटी फालतू लाया हूँ।" तोखे ने पोटली में बँधी रोटियों की ओर इशारा किया, "जा, इसे बरामदे के झरोखे में रख दे।"

"ले यारा, मेरी पोटली भी ले जा।" बरकत ने कुर्ते की बड़ी जेब से एक पोटली निकाल सोमे के हाथ में थमा दी।

सोमे ने पोटलियाँ ले उन्हें सूँघा, "बरकते, लगता है आज तो गलगल का अचार लाया है।"

"साथ में गुड़ भी है।" बरकत भवें चढ़ा मुस्कराया।

वे बातों में मसरूफ थे कि नवाँशहर से पहली लारी शोर मचाती और लड़खड़ाती हुई अड्डे में दाखिल हुई। बस की छत पर खड़े मनसुख ने बरकत और तोखे को देख छत पर पड़े सामान की ओर इशारा कर जोर-जोर से हाथ हिलाया।

बरकत और तोखा तेज कदमों से बस की ओर बढ़ गए और सोमा रोटियों की पोटलियाँ हाथ में पकड़े उनकी ओर दिलचस्पी से देखता रहा। एक कोने मे खड़ा काली भी इनकी गतिविधियों को बहुत ध्यान से देख रहा था।

मनसुख छत से सामान उठा बारी-बारी बरकत और तोखे को थमाता रहा और वे उसे मालिक के निर्देश के अनुसार टिकाते रहे।

काम से फारिग हो वे सोमे के पास आ गए। उसने पूरी वर्नागी खाल मनसुख का स्वागत किया, "मेरा नाश्ता लाया है ?"

"यारा, कैसे भूल सकता हूँ। मुझे पता था कि तेरे पेट मे तड़के से चूहों ने भगदड़ मचा रखी होगी। दो मोटी रोटियाँ लाया हूँ। आम के अचार के साथ।" मनसुख ने अपनी पोटली भी सोमे की ओर बढ़ा दी।

सोमे ने पोटली को दायें हाथ में तोला, "सचमुच भारी है।"

"यह बस तो अच्छी रही।' बरकत ने मुट्ठी खोल पैसों का हिसाब जोड़ा।

"छः आने मिले होंगे।" मनसुख ने अंदाजा लगाया।

"न, पाँच आने और एक टका। एक नग हल्का था।" बरकत ने बताया।

"चलो, जो वट्टया, सो खट्टया।" तोखा संतुष्ट हो मुस्कराया, "हर बस का फेरा ऐसा ही लगे तो मजा आ जाए।"

वे चारों बरामदे में आ बैठे। सोमे ने मनसुख की पोटली से दो अलग लपेटी

रोटियाँ निकाल लीं और पोटली को दोबारा बाँध बाकी पोटलियों के साथ टिका दिया। रोटियों की तहें खोल उसने अचार को सूँघा। फिर अपने साथियों पर नजर डाली, "आओ सज्जनो। एक-एक ग्राही (ग्रास) हो जाए।"

"न भाई, तू आनन्द ले। हम तो दोपहर तक के लिए गाँव से पेट भरकर चले थे।" बरकत ने दायाँ हाथ थोड़ा ऊपर उठा दिया। फिर उसने अपने साथियों की ओर ध्यान से देखा, "सोच रहा हूँ कि अगले महीने मैं गाँव में ही रहूँ। अड्डा तुम तीनों सँभाल लेना।"

"क्यों, खैर-खैरियत तो है ?" सोमे ने चिंतित हो पूछा।

"हाँ, वैसे तो खैर-खैरियत ही है। गेहूँ की फसल की बवाई के दिन आ रहे हैं। सोच रहा हूँ गाँव में किसी जमींदार के साथ काम करके मन-डेढ़ मन अनाज मिल जाए तो घर में अन्न-दाने की सहूलत हो जाएगी।" बरकत सोच में डूबा था।

"बात तो तेरी ठीक है।" सोमे ने अनुमति में सिर हिलाया।

"ये काम तो हम सब करेंगे। पिता-पुर्खी पेशा तो यही है।" सोमे ने ग्रास को गले से जल्दी नीचे उतारते हुए कहा।

"तो फिर अड्डा बाहर के मजदूर सँभाल लेंगे। सब एकसाथ कैसे जा सकते हैं ?" बरकत ने उन्हें समझाया, "ऐसा करते है कि दो जने अब बवाई पर चले जाएँगे। बाकी गन्ने की पिड़ाई के मौके पर गाँव मे काम कर लेंगे। अनाज न सही, गुड़-शक्कर मिल जाएगा।"

बरकत की सलाह सुन वे सोच मे पड़ गए।

उनकी बातचीत सुन काली के कान खड़े हो गए। वह इधर-उधर झाँकता हुआ उनके गिर्द मँडराने लगा। उसने सोचा कि अगर काम अड्डे पर बन जाए तो उसकी सब समस्याएँ हल हो जाएँगी। अभी खुले दिन हैं। रात को अधिक सर्दी भी नहीं होती। वह बरामदे मे सो सकता है। रोटी-पानी पास के ढाबों से मिल जाएगी। जगल-पानी के लिए दीवार फाँदने की ही जरूरत है।

काली के दिमाग में अपने भविष्य के बारे में एक नक्शा जन्म लेने लगा था। वह अड्डे के मजदूरों से इस बारे मे बात करना चाहता था लेकिन उसे हौसला नहीं हो रहा था।

बरकत ने अपने साथियों पर फिर से नजर डाली। उन्हें दुविधा में देख वह उठ गया, "अभी बसें जाने में टैम है। आओ अड्डा इंचार्ज से सलाह कर लेते हैं। आखिरी फैसला तो वही करेगा।"

वे अड्डा इंचार्ज मीतसिंह के कमरे की ओर बढ़ गए। वह ऐनक लगाए अखबार पर झुका हुआ था और ऐसे बुदबुदा रहा था जैसे अखबार मे छपे एक-एक अक्षर को जोड़कर पढ़ रहा हो। वे चुपचाप खड़े उसकी ओर देखते रहे। फिर आँखों

ही आँखो मे एक-दूसरें को इशारे करने लगे। अंत मे उनमें सबसे पुराना अड्डा मजदूर बरकत बोला, "उस्तादजी, सत सिरी अकाल।"

मीतसिंह ने कंधोंसमेत धड़ ऊपर उठाया और ऐनक के शीशे से ही उनकी ओर देखते हुए पूछा, "क्या हो गया जो लश्कर बनाकर मेरे कमरे में घुस आए हो ?"

"उस्तादजी, एक सलाह लेनी थी।" बरकत ने हाथ जोड़ दिए।

"मेरे सिर पर चढ़कर खड़े तो यूँ हो जैसे मेरा सिर फोड़ना हो।" मीतसिंह ने अखबार पर दोनों बाज़ू फैलाते उनकी ओर घूरकर देखा।

"उस्तादजी, आप यह क्या कह रहे हो।" बरकत ने अपने दोनों हाथ मीतसिंह के घुटनो पर रख दिए। "आप वैसे ही हमारे सिर पर सौ जूते मार लो। इतना बड़ा पाप हमारे ऊपर क्यों चढ़ाते हो ?"

"बोलो, क्या बात है ? मेरे कमरे पर चढ़ाई क्यों की है ?" मीतसिंह ने धड़ का सारा बोझ कुर्सी की पीठ पर डाल दिया।

"उस्तादजी, आप तो जानते ही हैं कि फसल की बवाई के दिन आ रहे हैं। सोच रहे थे हममें से दो जने अपने-अपने गाँव में जमींदारों की फसल की बवाई कर लें। अनाज मिलने से थोड़ी सहूलत हो जाएगी।"

"हूँ।" मीतसिंह सोच में डूब गया। फिर आगे झुकते हुए हाथ इतने जोर से समेटे कि उनमें अखबार भी पूरी तरह सिमट गया।

"बड़े स्याने बनते हो। लगता है कि बोझा उठा-उठाकर तुम्हारी खोपड़ी पिचक गई है," मीतसिंह ने डाँटा, फिर उन्हें समझाया। "मूर्खो··· तुम फसल की बवाई के लिए गाँव जाना चाहते हो। ऊपर से नवरात्रे आ रहे हैं। ज्वालाजी, चिन्तपूर्णी जानेवाले भक्तो की भीड़ लगेगी। चार पैसे कमाने के यही तो दिन हैं।"

"हाँ, उस्तादजी, हमने यह तो सोचा ही नहीं था।" बरकत खिसियाना हो गया।

"भाई, अपना पढ़ा-लिखा अच्छी तरह विचार लो। अड्डे पर मजदूर तो रखने ही पड़ेंगे··· सवारियो की सहूलत और अपनी जरूरत के लिए।··· तुमने एक बार अड्डा छोड़ दिया तो दोबारा नहीं मिलेगा।" मीतसिंह ने अखबार को सामने फैलाते हुए चेतावनी दी।

"ठीक है उस्तादजी। नहीं जाएँगे।" बरकत ने सिर झुका दिया।

वे कमरे से बाहर जाने के लिए मुडे तो मीतसिंह ने उन्हें रोक लिया। "मुण्डयो, तुम्हें पता ही है कि चीजें महँगी हो गई हैं। सतरे का अद्धा ही ले लो, डेढ़ रुपये से दो रुपये का हो गया है। ठेकेदारों ने इकट्ठी आठ आने की कीमत बढ़ा दी है। तुम भी अब फी मजदूर अड्डा फीस छः आने की बजाय आठ आने रोजाना दिया करो।"

"उस्तादजी, हमारी मजदूरी का रेट तो पुराना ही है।" सोमे ने कहा।

"तुम यहाँ क्या रेट से काम करते हो ?··· मुझे मत सिखाओ-पढ़ाओ।" मीतसिंह का लहजा सख्त हो गया। "चाय··· रोटी, दूध सबका दाम बढ़ गया है। पहली तारीख से लारी का किराया भी बढ़ाया जा रहा है। तुम भी अपना रेट बढ़ा देना। इस तरह अड्डा फीस अपने आप ही बढ़ जाएगी।"

"उस्तादजी, सौदा वारा नहीं खाएगा। सवेरे से दो लारियाँ आ चुकी हैं और दो गई भी हैं, लेकिन सिर्फ सोमे ने चार आने कमाये हैं। हम तो चाय-पानी से भी वेजार बैठे हैं।" जेब पर हाथ रख बरकत गिड़गिड़ाया।

"उस्तादजी, फिर इस काम में बँधी आमदन भी नहीं है। मेंह-आँधी आ जाए, गर्मी-सर्दी बढ़ जाए तो सवारी घर से बाहर निकलना बंद कर देती है और हमारे ऊपर मंदा ही मंदा आ जाता है।"

"मंदे देया पुत्तरा, मेले-ठेले पर कमाई भी तो तुम्हीं करते हो। जब सवारियाँ सामान उतरवाने और बस की छत पर चढ़वाने के लिए कतार बाँधकर खड़ी होती हैं। बीस आदमियों का काम सिर्फ तुम चारों जने करते हो और दस गुना कमाई करते हो। अगर कभी एक आदमी का काम चार को करना पड़ जाए तो मौत क्यों पड़ती है। काम-धंधे में मंदा-तेजी तो आती ही रहती है।··· सोच लो··· विचार लो··· अगर तुम्हें मंजूर नहीं तो मैं दो मजदूर और रख लूँगा। मुझे अपना घर भी तो देखना है।" मीतसिह फिर से अखबार पर झुक गया।

कोई उत्तर दिए बिना बरकत, सोमा और उनके दोनों साथी बाहर जाने के लिए मुडे तो मीतसिंह ने उन्हें एक बार फिर रोक अपना फैसला सुना दिया, "तुम्हारी अड्डा फीस मैंने सतरे के अद्धे के साथ बाँध दी है। उसकी कीमत बढ़ेगी तो अड्डा फीस भी बढ़ा दूँगा। अगर कम हो जाएगी तो अड्डा फीस भी घटा दूँगा।"

"उस्तादजी, ऐसा लगता है कि सवेरे-सवेरे ही नशे में गुट हो गए हो।" बरकत हाथ रगड़ता हुआ मुस्कराया।

"गुट देया पुत्तरा, अभी तो मैंने लस्सी भी नहीं पी है। गुट कहाँ से होना है। जा, भागकर मुकंदे हलवाई की दुकान से मीठी लस्सी का गिलास ला।··· थोड़ा परे सतनामे से तीन संतरे भी लेते आना··· सवेरे से खट्टे डकार आ रहे हैं। लगता है पेट में तेजाबी मादा बढ़ गया है।" मीतसिंह ने पेट को दोनों हाथों से दबाया।

"उस्तादजी, पैसे ?" बरकत ने उसकी ओर खाली और खुला हाथ बढ़ा दिया।

मीतसिंह ने घूरकर उसकी ओर देखा तो बरकत बोला, "उस्तादजी, बताया न कि सवेरे से दो लारियाँ गई हैं और दो आई हैं। और कुल मिलाकर चार आने की कमाई की है।··· कोई-कोई तो ऐसा मनहूस दिन होता है कि लारी से भूखी-नंगी सवारियाँ ही उतरती हैं। सामान तो क्या उनके तन पर पूरे कपड़े भी नहीं होते।"

"ट्रंकों, बिस्तरों और बड़ी-बड़ी गठरियों से लदी-फँदी सवारियाँ भी तो इसी अड्डे पर उतरती हैं।" मीतसिंह ने बरकत को डाँटा, "जा, भागकर लस्सी और संतरे

ला। बता देना कि अड्डा इंचार्ज ने मँगवाए हैं। वह पैसे नहीं माँगेगा। जल्दी भाग न। दोनों बसों के जाने का टैम हो रहा है। आगे-पीछे ही चलेंगी।"

बरकत और उसके साथी मीतसिंह के कमरे से बाहर आ गए। बरकत हलवाई की दुकान की ओर बढ़ गया और सोमा, तोखा और मनसुख खुली जगह में आ खड़े हुए। नवाँशहर - बंगा जानेवाली नयी बस लग गई थी और उसके ड्राइवर और क्लीनर बोनट के पास खड़े थे। सोमा और उसके साथी भी उनके पास चले गए।

"मनसुख, इस बस पर तू और तोखा अपनी किस्मत अजमा लो। लुधियाना और नवाँशहर-बंगा से आनेवाली लारियाँ मैं और बरकत देख लेंगे।" सोमे ने सलाह दी।

मनसुख और तोखे को बस की ओर आता देख ड्राइवर सरवनसिंह और क्लीनर फुम्मनराम थोड़ा परे चले गए। सरवनसिंह की ओर झुकते हुए फुम्मनराम फुसफुसाया, "सुना है नया क्लीनर कुलदीपचंद पंडितजी का रिश्तेदार है।"

"सुना तो मैंने भी है। ठीक ही होगा। पंडित कंपनी में अकेला छः आने का हिस्सेदार है। इसलिए बंदे ज्यादा उसी के भर्ती होंगे। दूसरे नंबर पर बरियाम सिंह है। वह कंपनी में चार आने का मालिक है।"

"ये दोनों तो कंपनी को खा जाएँगे।··· मुनाफा साल-पर-साल कम होता जा रहा है।" फुम्मनराम ने चिंता व्यक्त की।

"तू कितना··· दो पैसे का मालिक है ?" सरवनसिंह ने पूछा।

"नही, डेढ़ पैसे का।" फुम्मनराम ने बताया।

"मैं एक पैसे का मालिक हूँ।··· इतना शुक्र कर कि नौकरी लगी हुई है। अपना रोटी-पानी का खर्च लारी से निकाल लेते हैं। रात को मुँह भी कड़वा कर लेते हैं। पूरी तनखाह घर ले जाते हैं। ऊपर से साल बाद थोड़ा-बहुत डिविंड (डीवीडेंड) भी मिल जाता है। तू और क्या चाहता है ? क्या तेरे नाम के साथ-साथ तेरे सिर के ऊपर भी फुम्मन बाँध दिए जाएँ ?" उत्तेजित हो सरवनसिंह ने फुम्मनराम के कंधे पर जोर से हाथ मारा।

"भाई, तेरी सब बातें ठीक हैं। अपना हिसाब-किताब तो ठीक-ठाक है ही। लेकिन मेरा भतीजा अठारह साल का हो गया है। आठ जमातें भी पास कर ली हैं। उसके बारे में सोच रहा था कि कंपनी में पर्ची काटने या क्लीनर की नौकरी मिल जाए तो चिंता दूर हो।" फुम्मनराम गहरी सोच में डूब गया, "जवान लड़का आवारा नहीं फिरना चाहिए।"

"तेरा भाई क्या काम करता है ?"

"गाँव में छोटी-सी किरयाने की दुकान है।"

"तो लड़के को अभी दुकान पर बिठा दो।" सरवनसिंह ने सुझाव दिया।

"दुकान दो आदमियों का बोझ नहीं उठा सकेगी। वैसे भी मेरा भतीजा फेरे टोरे

का शौकीन है।"

"तो फिर पंडितजी या बरियामसिंह से बात कर ले।"

"वे कहाँ मानेंगे। उनकी अपनी रिश्तेदारी बहुत लंबी-चौड़ी है।" फुम्मनराम मायूस था।

"फुम्मना, तेरा काम बन सकता है।" सरवनसिंह ने भवें ऊपर चढ़ा विश्वास भरे स्वर में सरगोशी की।

"कैसे ?" फुम्मनराम उत्सुकता से सरवनसिंह की ओर देखने लगा।

"कंपनी में तीन आने का एक और हिस्सेदार भी है।"

"कौन ?"

"पण्डोरी का महंत संतोखसिंह···। बहुत कम लोगों को पता है इस बात का। हर साल बैसाखी और दीवाली पर उसके डेरे पर भंडारा होता है। कंपनी की सब लारियाँ संगतों को मुफ्त ढोती हैं। वह कह दे तो तेरे भतीजे का खड़े पैर काम बन सकता है। सीधा इंसपैक्टर लग सकता है। वैसे भी महंत दयालु आदमी है। औरत जात की बात को फौरन मान लेता है।" सरवनसिंह आँख दबा मुस्करा दिया।

"चलो, कोशिश कर देखेंगे। पण्डोरी वैसे भी मेरे गाँव के पास ही है। ज्यादा से ज्यादा दो कोस का रास्ता होगा··· पगडंडी से।··· सड़क से आठ-दस कोस पड़ जाता है। पहले बहराम जाओ, फिर वहाँ से नंगल और वहाँ से पण्डोरी।"

"सेवा करो डेरे पर।··· महंत खुश हो गया तो काम जरूर बन जाएगा।··· वह औरतों को पुत्तर तक देता है। तेरा तो काम ही बहुत छोटा है।" सरवनसिंह एक बार फिर मुस्करा दिया।

"कर देखता हूँ।" फुम्मनराम ने अनुमति में सिर हिलाया।

"जरूर करो।··· इस कंपनी में अगर कुत्ता भी भरती करना होगा तो वह या तो कंपनी के किसी बड़े हिस्सेदार का अपना होगा, या फिर उसकी गली-गवाँड से तो अवश्य ही होना चाहिए।" सरवनसिंह ने खिन्न हो सिर झटका। फिर वह चारों ओर देखने लगा, "शंगारा कहाँ मर गया है। कम-से-कम आवाज लगाए··· होका दे कि नवाँशहर-बगा की लारी लग गई है।"

"कहीं इधर-उधर होगा। मैं देखता हूँ।" फुम्मनराम टिकटों की तख्ती को छाती से लगा और थैली को कलाई के गिर्द लपेट दुकानों की ओर बढ़ गया।

बरकत एक हाथ में लस्सी का गिलास और दूसरे हाथ में संतरों का लिफाफा लिए जब सरवनसिंह के पास से गुजरा तो उसने उसे रोक लिया, "किसका माल है ?"

बरकत ने भौंहे ऊपर चढ़ा अड्डा इंचार्ज के कमरे की ओर इशारा किया। सरवनसिंह मुस्करा दिया। "रोटी-पानी, खाद-खोराक, अड्डे की दुकानों के जिम्मे है। साला,

मुफ्त का माल खा-खाकर मोटा हो रहा है। हो भी क्यों न। कंपनी में दो आने का मालिक जो ठहरा।"

"वड़े लोगों के बड़े काम हैं। गरीब आदमी क्या बोल सकता है।" बरकत ने अपना सिर झटका और लस्सी के बड़े गिलास को सावधानी से पकड़े हुए मीतसिंह के कमरे की ओर बढ़ गया।

थोड़ी ही देर में लुधियाना से भी बस आ गई। कुछ समय के लिए अड्डे पर फिर रौनक हो गई। मजदूरों के साथ-साथ ताँगेवाले भी सवारियों को घेरे खड़े थे और जोर-जोर से हाँक लगा रहे थे—"अड्डा होशियारपुर, टाँडा अड्डा··· माई हीराँ गेट"···

"चल कचहरी, अड्डा, अमृतसर··· नकोदर अड्डा··· पक्का बाग··· चहारबाग··· सैयदाँ गेट··· फगवाड़ा गेट।"

भिखारी और भिखारिनें अपने तौर पर सवारियों को घेरने की कोशिश कर रहे थे।

जब सवारियाँ अड्डे से बाहर चली गईं तो वहाँ एक बार फिर खामोशी छा गई। मनसुख और तोखा जेव में पड़े पैसों को गिनते हुए बरकत और सोमे के पास गए। वे बरामदे के दो स्तूनों के साथ आमने-सामने खड़े बीड़ी पी रहे थे।

"सोमे, हम मिलकर एक हुक्का बना लेते हैं। बीडी से होंठ जल जाते हैं।" बरकत ने सुझाव दिया, "दूसरे सस्ता भी पड़ेगा।"

"छोड़ यार, कभी पानी बदलकर हुक्का ताजा करो तो कभी चिलम भरो। बीड़ी ही ठीक है।" सोमे ने इनकार में सिर हिलाया।

बरकत ने कोई उत्तर नहीं दिया और सोमे को भूल तोखे और मनसुख की ओर देखने लगा। जब वे निकट आ गए तो बरकत ने उत्सुकता से पूछा, "कुछ मिला या वस में भिखारी ही भरे थे?"

"मेरा तो ठीक ही है···।" तोखे ने जेब से दस आने निकालते हुए कहा, "मेरी लारी मे तो एक कालजियेट बैठा था। गाँव में बाप को ताजा-ताजा मूँडकर आया होगा। ट्रंक-बिस्तर बस की छत से उतारने और ताँगे में रखने के दस आने दे गया। बारह आने माँगता तो शायद वह उतने पैसे भी दे देता।"

"मुझे तो छः ही आने मिले हैं। आढ़ती की बोरियाँ उतारी थीं। दो पैसे फी नग से तीन आने बनते थे। वह दवन्नी देकर टरकाना चाहता था। लेकिन मैं भी डटा रहा। मजदूरी तो तीन आने दे दी लेकिन बुद-बुद करता रहा कि शहर में तो लूट मची हुई है।"

तोखे और मनसुख ने अपने-अपने पैसे गिनकर बरकत को दे दिए। उसने दिन की अब तक की कमाई को ध्यान से गिना और पैसों को कमीज के नीचे पतूही की अंदरूनी जेब में रखता हुआ सूरज की ओर देखने लगा, "पौने दो रुपये ही

हुए हैं।··· कोई बात नहीं। अभी कम-से-कम आठ-दस बसें जाएँगी और इतनी ही आएँगी। अमृतसर, मुकेरियाँ, नकोदर-लोहियाँ और दिल्ली की पसंजर गाड़ियाँ भी तो आनी हैं।"

वे कुछ क्षण चुप बैठे रहे। फिर मनसुख ने उनकी ओर आँखें उठा दीं, "आओ, खाना खा लें।'

"यार, दिन अभी पूरी तरह चढ़ा नहीं और तुम्हें भूख सताने लगी है। क्या घर से खाली पेट ही चल दिया था ?" बरकत ने तल्ख स्वर में पूछा। फिर उसने बरामदे में लगे मैले-से क्लाक की ओर देखा, "अभी तो ग्यारह भी नहीं बजे हैं और इसका पेट भूख से पिचकने लगा है।"

"मैंने सोचा कि बेकार बैठे हैं, खाना ही खा लें।" मनसुख खिसियाना हो गया।

"बेकार क्यों बैठना है ?" सोमा जेब से ताश निकाल पत्ते फेंटने लगा। "क्या खेलना है ?··· भाभी ?"

"छोड यार। भाभी तो बच्चों का खेल है।" तोखे ने एतराज किया।

"लेकिन मजा बहुत है··· ठोमा देने मे।" सोमा रोमांचक हो उठा। "कोटपीस खेल लो।" मनसुख ने सलाह दी।

"नहीं यारो, सीप (स्वीप) खेलते हैं। थोड़ी दिमागी कसरत भी तो होनी चाहिए।" बरकत ने फैसला सुनाया।

"पहले पीस निकालो।"

"पीस भी निकालते हैं।·· तोखे, तू और मनसुख भाईवाल··· मैं और सोमा।" बरकत ने सोमे से ताश ले पत्तो को तेजी से फेंटते हुए आगे कहा, "जिसे हुकम का गुलाम आएगा, वही पीसेगा।" बरकत सबके सामने एक-एक पत्ता सीधा फेंकता रहा। और सबसे पहले गुलाम उसी के हिस्से में आया।

वे ताश खेलने में मगन हो गए तो काली भी धीरे-धीरे उनके नजदीक खिसक आया और खेल देखने लगा। जब किसी का कोई पत्ता पक्का हो जाता तो वह उसे जोर से फेंकता हुआ हर्षध्वनि करता। काली भी धीरे-धीरे खेल में पूरी तरह तल्लीन हो अपने सब दुख-दर्द भूल गया।

ताश की बाजी अपने जोबन पर थी कि लारी की आवाज सुनाई देने लगी। सबने चौकन्ना हो बारी-बारी से गेट की ओर देखा लेकिन अगले ही क्षण वे एक बार फिर खेल में व्यस्त हो गए।

जब हचकोले खाती हुई बस आँगन में दाखिल हो गई तो बरकत ने अपने पत्तो को दोनों हाथों में दबाते हुए पूछा, "किसकी बारी है ?"

"मेरी···।" मनसुख ने बताया।

"ताश की नहीं।··· बस देखने की।"

"कायदे से तो तेरी और मनसुख की होनी चाहिए।"

"वह क्यों··· हमने नवाँशहर जानेवाली बस देखी तो थी। दो सवारियों का सामान चढ़ाकर चार आने भी लिए थे।" बरकत ने बताया।

"फिर मेरी और तोखे की होगी।" सोमे ने हाथ के पत्तों को ध्यान से देखते हुए गहरी सोच में डूबी आवाज में बताया।

"जाओ, पहले बस देख आओ।" बरकत ने अपने हाथ के पत्ते उलटे करके फर्श पर रख दिए।

"बस, बाजी भी ज्यादा-से-ज्यादा दो-तीन हाथ की रह गई है। फिर बस ही देखनी है।" सोमे ने अपने हाथ में भारी पत्तों को देख गद्गद स्वर में कहा।

"तब तक सवारियाँ अपने-अपने घर पहुँच जाएँगी।" बहुत-सा धुआँ छोड़ने के बाद बस रुकने और फिर ड्राइवर को अपनी सीट से छलाँग मारकर नीचे उतरते हुए देखकर बरकत ने फैसलाकुन लहजे में कहा।

"आप ताश खेलो। अगर बस की छत पर सवारी का सामान हुआ तो मैं नीचे उतार दूँगा।" काली ने पेशकश की।

बरकत और अन्य लोगों ने ध्यान से काली की ओर देखा और एकदम उनके तेवर बदल गए।

"बल्लया, तू अपना काम कर।" बरकत ने काली की ओर घूरकर देखा। "ओये, सोमे, तोखे, भागो यहाँ से। बाजी यहीं छोड़ दो।" बरकत ने बाजू से पकड़ उन्हे उठा दिया।

"पीछे से हमारे पत्ते मत देखना। बहुत बढ़िया बाजी है।" सोमा और तोखा पत्ते फर्श पर उलटे रख कधे के साफों को सिर पर लपेटते हुए बस की ओर भाग गए।

काली ने उनकी आपसी बातचीत और व्यवहार से अनुमान लगा लिया था कि इनका लीडर बरकत है। वह बरकत के निकट बैठ गया और हाथ जोड़ बहुत ही विनम्र स्वर मे बोला, "आपकी तो यहाँ सब बात मानते हैं। मैं बिलकुल बेआसरा और बेकार हूँ। मुझे भी अड्डे पर छोटा-मोटा काम दिला दो तो आपके सदके मेरा भी निर्वाह हो जाएगा।"

बरकत ने बहुत ध्यान से काली को सिर से पाँव तक कई बार जाँचा जैसे नजरों-ही-नजरों में उसे तोल रहा हो। फिर आँखें तरेर ली, "भाई कौन है तू, गाँव कौन-सा है। कहाँ रहते हो ?"

"अब तो मेरा कोई गाँव नहीं है। इस भरी दुनिया में बिलकुल अकेला हूँ। न कोई आगे है, न पीछे। न घर है, न घाट। ले-देके एक चाची थी, वह भी···।" गला रुँध जाने के कारण काली आगे कुछ न कह सका। सिर्फ सिर आकाश की ओर उठा दिया। उसने भीगी आँखों को उलटी हथेली से पोंछा और भर्रायी आवाज में आगे बोला, "चौधरियों ने गाँव से निकाल दिया है। अगर मैं हठ करके

रह भी जाता तो वे मुझे जान से मार देते।"

काली की बात सुन बरकत कुछ सोच में पड़ गया जैसे उसे अपना कोई पुराना दुख-दर्द याद आ गया हो। फिर वह गंभीर हो सिर हिलाने लगा, "गाँव छोड़ शहर मे वही आदमी आता है जिसका वहाँ समाना मुश्किल हो जाए। कोई आस-मुराद न रहे। पाँव-तले की जमीन भी काटने लगे।"

बरकत से तनिक हमदर्दी पा काली की किसी हद तक ढाढ़स बँधी और वह दोनों हाथों से आँखें पोंछ बरकत की ओर देखने लगा। बरकत ने उसकी नीयत भाँप संयत स्वर में कहा, "इस अड्डे पर तो कोई गुंजाइश नहीं है। यहाँ तो कंपनी के मालिकों और रिश्तेदारों को ही काम या नौकरी मिलती है।··· हम भी अड्डा फीस देकर काम करते हैं।··· सारा दिन बोझ ढोने पर भी किसी दिन बारह आने या एक रुपया बनता है। सामानवाली सवारी ज्यादा पड़ गई तो डेढ़-दो रुपये भी मिल जाते हैं। इससे ज्यादा नहीं।"

बरकत की बात सुन काली खामोश हो गया। उसकी आँखों में एक बार फिर आँसू छलक आए और गले में अटकी चीख को उसने बहुत ही ज्यादा कठिनाई से होठों पर आने से रोका।

"गाँव से कब आए हो ?"

"कल रात।"

"रात कहाँ काटी ?"

"पहले मुसाफिरखाने मे लेटा तो पुलिस हवलदार ने वहाँ से भगा दिया। अड्डे के बाहर दुकानों के सामने पड़ी बेंच पर लेटने गया तो कुत्ते पीछे पड़ गए। वहाँ से अड्डे पर आ गया और अँधेरे कोने में जमीन पर लेटकर रात काट दी।" काली ने बताया।

"हूँ···!" बरकत ने सिर हिलाया, "यहाँ अड्डे पर तो कोई काम नहीं मिलेगा। पास ही बर्फ का कारखाना है। सामने सड़क पर बाएँ घूम जाने पर सड़क सीधी बर्फ कारखाने की ओर जाती है। उसे पुरानी रेलवे रोड भी कहते हैं। दोमोरिया पुल के बिलकुल सामने है कारखाना।"

"मैंने वह जगह देखी है। रात में गाड़ी से उतरकर दोमोरिया पुल के नीचे से गुजरकर ही रेलवे स्टेशन से बाहर आया था।" काली ने बताया।

"बर्फ कारखाने के पास कई मालगोदाम और आगे सड़क पर इमारती लकड़ी के बहुत से टाल भी हैं। बर्फ कारखाने के बाहर रोज सवेरे मजदूरों की मण्डी लगती है। काम और हुनर के अनुसार जरूरतमंद दिहाड़ी पर मजदूर ले जाते हैं।··· अब तो देर हो गई है। आधी दिहाड़ी होनेवाली है।··· कल सवेरे सूरज चढ़ते ही वहाँ पहुँच जाना। वहाँ राजगीर भी आते हैं। ईंट-गारा पकड़वाने के लिए उन्हें भी मजदूर की जरूरत होती है। किस्मत अच्छी हो तो थोड़ा-बहुत काम मिल ही

जाता है।" बरकत ने ब्योरा दिया।

काली के मन में प्रबल इच्छा पैदा हुई कि वह बरकत को बताए कि राजगीर के साथ काम करने का उसे थोड़ा-बहुत तजुरबा है। अपना मकान बनाते समय वह राजगीर को ईंट-गारा अपने हाथों से देता रहा है। लेकिन उसने अपनी इस इच्छा को कुचल दिया क्योंकि इस हाल में होते हुए पक्का मकान बनाने की बात करना बहुत बड़ा मजाक लगेगा।

इतनी देर में सोमा और तोखा बस भुगताकर और मनसुख दीवार पार से लौट आए। सोमे और तोखे को देख बरकत ने पूछा, "हाँ भई, कैसा रहा ?"

"बस में कंजर और बाजेवाले भरे हुए थे। कहीं से शादी भुगताकर लौटे थे। दो भाइयों का कुछ सामान बस की छत पर पड़ा था। वह उन्होंने अपने-आप उतार लिया।... साली बस भी खाली गई और इतनी अच्छी बाजी भी बीच में ही टूट गई।" सोमा बहुत खिन्न था।

"चिंता न कर। जो नच्छत्तर में लिखा है, वही मिलेगा।" बरकत ने दिलासा दिया। फिर सूरज की ओर देख बरामदे में लगी घड़ी की तरफ झाँका और छोटी सुई को बिलकुल सीधी देख वह सोच में पड़ गया। काली को बरकत के पास बैठा और बातें करते देख सोमे, तोखे और मनसुख ने अनुमान लगाया कि शायद उसे अपने गाँव का या जान-पहचान का आदमी मिल गया है।

मीतसिंह को अपने कमरे से निकलता देख वे सतर्क हो गए और उसकी ओर ताकने लगे। उन सबमें से सिर्फ बरकत की ही मीतसिंह से जरा खुली बातचीत थी क्योंकि वह उसके ननिहाल के गाँव का था और बचपन में मीतसिंह कई साल वहाँ रहा था। बरकत को अड्डे पर काम भी मीतसिंह ने ही दिलवाया था।

मीतसिंह हलके-हलके कदम उठाता हुआ सड़क की ओर जा रहा था। यह देख बरकत उठ गया और कपड़े झाड़ते हुए पूछा, "उस्तादजी, कहाँ चले ?"

"आदमी काम से बाहर निकले तो इस तरह नहीं टोकते। बदशगुनी होती है।" मीतसिंह ने बरकत को डाँटा।

"चाचा, मैंने तो इसलिए पूछा था कि कोई सेवा हो, कहीं से चाय-पानी मँगवाना हो तो मैं ला देता हूँ। आप क्यों तकलीफ करते हैं।" बरकत आगे बढ़ मीतसिंह के घुटनों की ओर झुक गया।

"बस-बस, परे रह।" मीतसिंह ने पीछे हट उसे प्यार से झिड़का, "सेवा कोई नहीं है। मैं मुकंदे के होटल पर खाना खाने जा रहा हूँ।"

"आप वहाँ झोल खाते हुए टूटी बेंचों पर बैठोगे, मक्खियों के बीच ? आपने जो भी मँगवाना है, बता दें। मैं दफ्तर में ही पहुँचा दूँगा।" बरकत ने बहुत गर्मजोशी से पेशकश की।

"नहीं, मैं वहीं जाऊँगा। मुकंदा बहुत होशियार और चालाक आदमी है। अड्डे

का व्यापारी है न। उड़ते पंछियों के पर गिन लेता है और मुट्ठी में बंद रकम को पकड़ लेता है। वह मेरे देखते-देखते मेरी ही आँखों के सामने हेराफेरी कर लेता है। तड़का देसी घी की बजाय बिलायती घी का लगा देता है। आध पाव दही को फैलाकर पाव-भर बना देता है। मेरी गैरहाजिरी में तो पता नहीं और क्या कुछ करेगा।" मीतसिंह हाथ हिलाता हुआ आगे बढ़ गया, "तुम लोगों के जिम्मे बस एक ही सेवा है। संतरे का आधा सूरज छिपने से पहले मिल जाना चाहिए।"

बरकत और उसके साथी मीतसिंह को जाते हुए देखते रहे। वह पले हुए बूढ़े सॉंड़ की तरह पाँव घसीटता हुआ चल रहा था। फिर बरकत अपने साथियों की तरफ मुड़ा, "यारो, लारी आने में अभी देर है। आओ, हम भी रोटी खा ही लें।"

"खा लेते हैं।" मनसुख ने उचक-उचककर झरोखे में छिपाकर रखी रोटी की पोटलियाँ उठा लीं। "मेरे लिए रोटी लाए हो न ?" सोमे ने पूछा।

"पक्की, तेरा बराबर का हिस्सा है।" बरकत ने उसे भरोसा दिलाया। फिर काली की ओर मुड़ते हुए पूछा, "सज्जना, तूने रोटी खा ली है या नहीं ?"

"मैं खा लूँगा।" काली ने जल्दी-जल्दी कहा जैसे अचेतन में पकड़ा गया हो।

"मैंने पूछा है कि तूने रोटी खा ली है या नहीं ?" लेकिन काली के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही उसने अपने साथियों से पूछा–"कितनी रोटी लाए हो आज ?"

"वही, जितनी रोज लाते हैं। सोमे के हिस्से की भी लाए है। बाकी साथ में गुड़ है और अचार भी।" तोखे ने बताया।

"हूँ।" बरकत सोच में डूब गया, "सोमे, यार तू थोड़ी हिम्मत कर।"

"क्या ?"

"भागके ढाबे से चार फुल्के और साथ मे मुफ्त की दाल, प्याज, चटनी, जो भी मिलता है, ले आ।" बरकत ने काली की ओर इशारा किया, "इसे भी रोटी खानी है।"

सोमे ने ध्यान से काली की ओर देखा। "दाल को तडका भी लगवा लूँ ?"

"नहीं, तड़का रहने दे। वैसे ही चलेगी।" बरकत ने मना किया।

बरकत की बात से सोमे ने अंदाजा लगा लिया कि काली उसका नजदीकी रिश्तेदार नहीं है। वरना वह इसकी पूरी तरह खातिरदारी करता। यार-दोस्त भी मालूम नहीं होता क्योंकि दोनों में कोई बेतकल्लुफी नहीं है। सोमे ने सोचा कि शायद वह बरकत के किसी दूर-पार के रिश्तेदार या जान-पहचान के आदमी से पता लेकर अड्डे पर इससे मिलने चला आया है। बाहर से आए आदमी से रोटी-पानी पूछने का फर्ज तो बनता ही है।

बरकत से पैसे ले सोमा कुछ कदम आगे बढ़कर रुक गया और काली की

ओर देखने लगा जैसे रोटी लाने से पहले उसके बारे में अपना संशय पूरी तरह दूर कर लेना चाहता हो। यह देख बरकत भी उसकी ओर बढ़ गया और बराबर पहुँच वे दोनों धीमी आवाज में बातें करते हुए सड़क की ओर चल दिए।

"यह तुम्हारा रिश्तेदार या यार-दोस्त तो दिखायी नहीं देता ?" सोमे ने आँख से काली की ओर संकेत किया।

"यारा, दोस्त-यार कुछ भी नहीं है। हमारी तरह गाँव में तंगी-तुर्शी से घबराकर शहर को भाग आया है। बता रहा था कि कल ही यहाँ पहुँचा है। रात भी अड्डे में ही काटी है।"

"कहाँ का रहनेवाला है ?"

"टाँडाउड़मुड़ के पास कोई गाँव बता रहा था।"

"काफी दूर से आया है। टाँडाउड़मुड़ मैं एक बार गया था। यहाँ से कम से कम बीस-पच्चीस कोस तो होगा।··· आगे गाँव, पता नहीं, और कितनी दूर होगा।" सोमे ने असमंजस में होंठ पिचका दिए।

बरकत एक बार फिर सोच में डूब गया जैसे कोई पुराना जख्म एकदम हरा हो गया हो। वह अतीत में झाँकने लगा, "एक रात मैं भी गाँव से भागकर इसी शहर में आया था लेकिन भूख-प्यास से तंग आकर दो दिन के बाद ही लौट गया था।"

"खुशी से शहर में कोई नही आता। तंगी-तुर्शी ही गाँव छोड़ने पर मजबूर करती है।" सोमा बोला, "हम तो अभी तक गाँव और शहर के बीच में ही लटक रहे हैं। काम शहर में करते हैं··· सोते गाँव में हैं।"

"उस्तादजी की कृपा बनी रहे। आखिरी बस में घर तो पहुँच जाते हैं।"

"यार, पक्की आमदन बन जाए तो मैं तो यहीं ठिकाना कर लूँगा।" बरकत ने लंबी साँस छोड़ी।

सोमे के लौटने तक तोखा तीन खाली बोतलें नल पर जा पानी से भर लाया। उन्होंने एक साफा जमीन पर बिछा दिया और अपनी-अपनी पोटली खोल रोटियाँ फैला दीं। सबके पास रूखी-सूखी रोटी ही थी और साथ में गुड़ की ढेली का टुकड़ा और आम या गलगल का अचार था। बरकत ने सब पोटलियों से एक-एक रोटी उठा काली को दे दी और ढाबे से लायी गई चपातियाँ एक पोटली में रख दीं। बरकत ने रोटी का टुकड़ा तोड़कर दाल सबमें बराबर बाँट दीं। बरकत और उसके साथी इकट्ठे रोटी खाने लगे जबकि काली थोड़ी दूर हटकर बैठ गया।

दो दिन से काली ने ढँग से खाना नहीं खाया था। हाथ में रोटी देख उसकी भूख चमक उठी और मुँह में पानी भर आया था। अपने-आपको बहुत रोकने के बावजूद वह चपड़-चपड़ खाना खा रहा था। बरकत ने अपने हिस्से की भी आधी रोटी काली की ओर बढ़ा दी क्योंकि वह अपनी आखिरी रोटी भी आधी

से ज्यादा खा चुका था जबकि बाकी लोगों ने अभी दो-दो रोटी ही खाई थी।
"रहने दो भा जी, मेरा पेट भर गया है।" काली ने इंकार में सिर हिलाया।
"खा लो, तुम्हें भूख लगी हुई है। अन्न-जल को नहीं नकारते। पता नहीं फिर कब मिलेगा।" बरकत ने रोटी काली के हाथ में थमा दी।
बाकी लोगों ने भी काली को अपने-अपने हिस्से की आधी-आधी रोटी दे दी। पाँच रोटियाँ खा काली को महसूस हुआ कि पेट खाली नहीं है। इन लोगों का व्यवहार देख उसे ज्ञानो की याद आ गई। लेकिन उसने जोर से सिर झटककर उसे भगा दिया कि कहीं वह पकड़ा न जाए और ज्ञानो की बात सुन ये दयालु लोग उसे धक्के मार-मारकर यहाँ से भगा न दें।
रोटी खाने के बाद उन्होंने पानी पिया। फिर नल पर जा हाथ धोए और तीलियों से दाँत कुरेदने लगे। बरकत ने काली की ओर मुड़ते हुए कहा, "देख मितरा, जैसाकि मैं तुम्हें बता चुका हूँ··· अड्डे में तेरे लिए कोई काम नहीं है। अगर थोड़ी-सी भी गुंजाइश होती तो मैं उस्ताद से तुम्हारी जरूर सिफारिश कर देता। तुम अभी जाकर बर्फ का कारखाना देख आओ। सवेरे सूरज निकलते ही वहाँ पहुँच जाना। रब सबका राखा है। काम का कोई-न-कोई वसीला निकल ही जाएगा।··· शहर देखने मे सुंदर, लेकिन ईट-पत्थर और लोहे-सीमेंट का होता है। यहाँ मेहमान के लिए रोटी भी तैयार होती है और गाड़ी भी। लेकिन दोनों में से सिर्फ एक मिलती है। अक्सर ऐसा होता है कि कोई भी नहीं मिलती।"
काली को अपनी बात बहुत ध्यान से सुनता पा बरकत ने आगे कहा, "बर्फ का कारखाना देखने के बाद अगर तेरे गोड़ों में दम बाकी हो तो शहर देखो।···" बरकत सोच में डूब गया। फिर पूछा, "तेरा कहीं रात को रहने का इंतजाम है?"
काली ने इंकार में सिर हिलाया तो बरकत ने अपने साथियों से पूछा, "आज रात अड्डे पर कौन रहेगा?"
"मैं।" तोखे ने बताया।
"यार, इसको भी अपने पास रख लेना।" बरकत ने सुझाव दिया।
"अगर किसी ड्राइवर-क्लीनर ने मना किया तो?"
"बोल देना कि उस्तादजी का आदमी है। गाँव से आया है।" बरकत आँख दबा मुस्करा दिया।
"ठीक है।" तोखे ने भी जवाब में आँख दबा दी।
बरकत ने काली की ओर देखा, "भा जी, जाओ, शहर देखो। जब थक जाओ तो यहाँ आ जाना। तोखे के पास।··· कल की बात फिर देखेंगे। पहले आज की तो नमेड़ें।"
काली अपना आभार प्रकट करने के लिए बरकत के घुटनों की ओर झुक गया।

लेकिन उसने बीच में ही रोक दिया, "इसकी जरूरत नहीं है। हम भी लगभग तेरी तरह ही यहाँ आए थे और अभी तक बीच में ही लटक रहे हैं, इसलिए तेरी ज्यादा मदद नहीं कर सकते। कोशिश कर देखो। रबजी भली करेंगे। जब तक शहर में हो, मिलते रहना।"

काली ने बारी-बारी सबकी ओर हाथ जोड़े और उनके प्रति अपने आभार के अहसास को रीढ़ की हड्डी तक महसूस करता हुआ वह अड्डे से बाहर आ गया।

तीन

ताँगों, रेढ़ों, रेढ़ियों, साइकिलों, इक्का-दुक्का मोटरसाइकिलों आदि से बचता-बचाता काली पुरानी रेलवे रोड के निकट बर्फ कारखाने के बगलवाले मैदान में पहुँच गया। उसने चारों ओर नजरें घुमा अलग-अलग स्थानों की शिनाख्त करने की कोशिश की।

फिर वह बर्फ कारखाने मे एक ओर पाइपों के जाल पर निरंतर गिरते पानी की ओर ध्यान से देखने लगा। इस दृश्य से रोमांचित हो काली कारखाने की बाहरी दीवार के और भी निकट चला गया। वहाँ एक अजीब-सी बू फैली हुई थी। उसे अपने नथुनों में महसूस कर काली को लगा कि उसकी नाक बिलकुल खुल गयी है। फिर उसे जोर की छींक आई और वह उस बू से बचने के लिए जल्दी जल्दी कदम उठाता हुआ मालगोदामों की ओर बढ़ गया।

गोदामों के निकट बर्फ कारखाने की बू तो खत्म हो गई लेकिन उसकी जगह ऐसी बू ने ले ली जिसको पहचान पाना कम-से-कम काली के लिए असंभव था। उसे महसूस हुआ कि यह एक बू न होकर कई गंधों का मिश्रण है। गोदामों में से किसी में केवल हल्दी की बोरियाँ भरी थीं तो कहीं लाल मिर्च थीं। कहीं कपड़े धोने के साबुन की पेटियाँ रखी थीं तो किसी गोदाम में नसवार का भंडार किया गया था। कुछ गोदामों से माल निकाल रेढ़े और रेढ़ियों पर लादा जा रहा था तो दूसरों में माल भरने के लिए ट्रक और रेढ़े खाली किए जा रहे थे। सिर पर कपड़ा बाँधे और पीठ पर बोरी लपेटे हुए कई मजदूर ढोया-ढायी में व्यस्त थे।

काली सारी कार्रवाई को बहुत ध्यान से देख रहा था ताकि वह इस काम के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा जानकारी प्राप्त कर सके। वह काफी देर तक गोदामों के आसपास इस आशा के साथ मँडराता रहा कि शायद उसे भी आवाज देकर काम के लिए बुला लिया जाए। लेकिन जब किसी ने उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा तो निराश हो वह पीछे हट गया और बर्फ कारखाने के पास से होता हुआ पुरानी रेलवे रोड पर पहुँच गया।

सड़क के किनारे खड़ा वह कुछ समय के लिए आते-जाते वाहनों और लोगों

को निहारता रहा। जब शहरी लड़कों का एक गिरोह हँसता-खेलता और आपस में टकराता और ठट्ठा-मजाक करता हुआ उसके पास से निकला तो वह भी उनके पीछे-पीछे चल दिया। पुरानी रेलवे रोड पर थोड़ा आगे बायीं ओर एक बहुत बड़ा छप्पड था। उसके तीन ओर ऊँचाई पर चौबारोंवाले मकान थे। दूर से ऐसा लगता था जैसे ये मकान एक-दूसरे में फँसे हुए खड़े हैं।

मकानो से हट काली का ध्यान बड़ी-बड़ी आरामशीनों की ओर चला गया जो लकड़ी के बड़े-बड़े और मोटे-मोटे तनों को यूँ चीर रही थीं जैसे छुरी उबले हुए आलू या शकरकंदी को काट रही हो। काली डर के मारे सड़क के दूसरी ओर चला गया और घबराया हुआ आरामशीनों की नजर से भी तेज रफ्तार। आरों की शाँ··· शाँ की तीखी आवाज से भयभीत हो वह और पीछे हट गया। आरे पर काम कर रहे लोगो के चेहरे, सिर के बाल और शरीर लकड़ी के बूरे से पूरी तरह सने हुए थे। आरे पर बहुत फुर्ती से काम करते हुए लोगों को देख काली सोचने लगा कि वे कितने सधे हुए कारीगर हैं। थोड़ी-सी गलती हो जाने पर वे भी लकड़ी की तरह चीरे जा सकते हैं।

आरामशीनों और इमारती लकड़ी की दुकानों और टालों में झाँकता हुआ काली अड्डा होशियारपुर पहुँच गया। इस इलाके में बहुत रौनक थी। इनमें ज्यादा दुकानें किताबों की थीं।

काली अड्डे में जा घुसा। यह लुधियाना-नवाँशहर के अड्डे से छोटा था और इसमें बसें भी कम थीं। लारी पर सामान लादने या उतारने के लिए सिर्फ दो ही मजदूर थे। लेकिन अड्डे के आसपास दुकानों पर बहुत रौनक थी।

होशियारपुर अड्डे का चक्कर लगा काली बाहर आ गया। वह चारों ओर देखता हुआ पुराने रास्ते पर वापस हो लिया। अब उसे अधिक आत्मविश्वास महसूस हो रहा था क्योंकि यह रास्ता अब उसका देखाभाला था।

छप्पड़ के किनारे पहुँच काली रुक गया। फिर धीरे-धीरे कदम उठाता उसके किनारे जा पहुँचा। सूरज की किरणों के प्रतिबिम्ब से पानी में भी एक सूरज चमक रहा था। काली छप्पड़ मे बन रहे बड़े-बड़े टायरों को देखता रहा। उसने इस छप्पड़ का अपने गाँव के जोहड़ से मुकाबला किया तो वह भौंचक रह गया। गाँव के छप्पड के मुकाबले में तो यह कई गुना बड़ा है। काली ने सोचा कि उसके गाँव के छप्पड़ में ज्यादा-से-ज्यादा एक भैंस गहरा पानी होगा। लेकिन इस छप्पड़ में ज्यादा नहीं तो दो हाथी गहरा पानी अवश्य होगा।

काली छप्पड़ के तीन तरफ फैली हुई आबादी को देखने लगा। इन मुहल्लों से कई नाले इस छप्पड़ में गिर रहे हैं। और कई तंग गलियाँ छप्पड़ के किनारों पर खुल जाती थीं। ऊँची इमारतों के पानी में प्रतिबिम्ब को देख काली को महसूस हुआ कि पानी के अंदर भी एक शहर बसा हुआ है। ऊँचे टिब्बों पर बसी इन

आबादियों को देख काली को अपने गाँव से नजर दिखाई देनेवाली शिवालिक की पहाड़ियाँ याद हो आईं जो ऊँची उठती हुई दूर तक फैल गई थीं। उसने सोचा कि गाँव के मुकाबले में शहर कितना बड़ा है, इसमें काम-धंधे भी कितने ज्यादा हैं। लेकिन यहाँ जमीन गाँव की अपेक्षा कितनी ज्यादा तंग है।

बर्फ कारखाना और गोदामों के सामने एक बार फिर काली काफी देर तक खड़ा रहा जैसे उनमें अपना भविष्य तलाश कर रहा हो। इन्हें देख वह आनेवाले कल की कल्पना करने लगा और यह सोच प्रफुल्लित हो उठा कि भगवान का दूत दयालु और कृपालु व्यक्ति के रूप में कल सवेरे वहाँ आएगा और उसे पहचानकर अपने साथ ले जाएगा और उसकी सब चिंताओं और विपत्तियों को दूर कर देगा। लेकिन अगले ही क्षण यह ख्याल आते ही काली का दिल डूब गया कि हो सकता है कि इस अजनबी शहर में भीड़ में खड़ा होकर भी अंत में वह अपने-आपको अकेला ही पाएगा।

इस संभावना से भयभीत हो काली रेलवे स्टेशन की ओर चल दिया। वह नई रेलवे रोड ओर पुरानी रेलवे रोड के तिकोने चौक पर रुक गया। सूरज की ओर देख उसने समय का अंदाजा लगाया और नई रेलवे रोड की ओर बढ़ गया ताकि इस बाजार को भी आज ही देख ले और शहर की थोड़ी-बहुत जान-पहचान पा सके।

काली ने मोड़ काटा तो उसके कानों में कुछ तेज लेकिन रसीली आवाज घुलने लगी। आसपास ही दो स्थानों पर लोगों की भीड़ में कौतूहल देख वह घबरा गया कि शायद वहाँ दंगा हो रहा है। वह जहाँ था, वहीं ठिठक गया। लेकिन यह सोच वह आगे बढ़ गया कि मधुर संगीत और दंगे का आपस में कोई संबंध नहीं है।

पहली भीड़ के निकट पहुँच काली ने देखा कि लोग छोटी-सी खिड़की तक पहुँचने के लिए धक्कमपेल कर रहे हैं। उसे याद आया कि यह सिनेमा हाल है। जब वह कानपुर में था तो उसने भी दो बार सिनेमा देखा था। उसने दिमाग पर जोर दे याद किया कि एक फिल्म का नाम 'आसमान का चाँद' था और दूसरी का नाम 'छिन्न बन्नाकी बवला बू' था और इस फिल्म के हीरो के होंठ हाथ के अँगूठे जैसे मोटे थे।

काली सड़क के दूसरे किनारे पर जा खड़ा हुआ। वहाँ लाउडस्पीकर से गीत और संगीत की आवाज सीधी उसके कानों से टकरा रही थी। आवाजें इतनी ऊँची थीं कि उसे महसूस हुआ कि अगर वह कुछ और समय तक वहाँ खड़ा रहा तो उसके कानों के पर्दे फट जाएँगे। वह एक क्षण सिनेमाघर के माथे पर लगे बड़े-बड़े पोस्टरों को ताकता रहा। उस पर बनी लड़की की तस्वीर को देख उसे ज्ञानो की याद आ गई। वह एकदम घबरा गया और उस याद को दिमाग से झटकता

हुआ आगे बढ़ गया।

अगले सिनेमाघर के सामने जुटी भीड़ में उसने कोई दिलचस्पी नहीं ली और वह लोगों से बचता-बचाता चौक में आ खड़ा हुआ। इसकी पेशानी पर अंग्रेजी शराब का ठेका था। वहाँ खुली अलमारियों में बहुत-सी अलग-अलग तरह की खूबसूरत बोतलें रखी थीं। वह हैरत मे डूबा हुआ उनकी ओर देखता हुआ उन लोगों की कल्पना करने लगा जो इन बोतलों को पीते होंगे। उसका मुँह कड़वाहट से भर गया और उसने शराब की दुकान से नजरें उठा लीं और अपने दायीं ओर देखने लगा जहाँ दुकानों के सामने लोहे की चादर की छोटी-बड़ी पेटियाँ, कई प्रकार के ट्रंक और कनस्तर इत्यादि पड़े थे। काली ने इस बाजार में दूर तक झाँका। बाजार काफी लंबा था और दूर एक तंग गली में खत्म हो जाता था।

चौक पार करके वह आगे बढ़ गया। एक बिल्डिंग के सामने राइफल लिए एक सिपाही को खड़ा देख वह हड़बडा गया और कुत्ते की तरह कान दबा और शरीर को सुकेड़ दबे-पाँव खामोशी से आगे बढ़ गया। कुछ दूर जा उसने पीछे देखा। सिपाही मोड़ की ओट में होने की वजह से नजर नहीं आ रहा था। काली ने इत्मीनान से साँस ली। यह सोच वह फिर डर गया कि पुलिस तो आदमी को पाताल से भी खोज लेती है।

जोर-जोर से साँस लेता और तंग बाजार की भिन्न-भिन्न गधों को नथुनों में समेटता हुआ काली दूसरे चौक मे पहुँच गया। वहाँ निकट ही एक छापाखाना था। छापने की मशीनों की गरड़-गरड़ की आवाज उसे स्पष्ट सुनाई दे रही थी। उसे याद आया कि कानपुर में भी एक बहुत बड़ा छापाखाना दिन-रात चलता था। काली को ख्याल आया कि उसे छापाखाने में भी नौकरी मिल सकती है। हाथ-मुँह जरूर काला होता है लेकिन काम बुरा नहीं है।

छापाखाने के दफ्तर से साईकिल पर सवार एक सिपाही को निकलते देख काली वहाँ से भी भाग निकला और एक चौड़ी सड़क पर पहुँचते ही तेज कदम उठाता हुआ आगे बढ़ गया।

वह एक और चौक में पहुँच गया। वहाँ सड़कें बहुत चौड़ी थी। चौक से दायी ओर जानेवाली सड़क के एक ओर बड़ी-बड़ी दुकानें थीं और दूसरी ओर लाल रंग की फसील थी। दूसरी सड़क के एक तरफ लाल रंग की फसील घूम गई थी और उसके सामने बाग था। लाल फसील के दूर पीछे लाल रंग की एक बहुत बड़ी कोठी थी। उसके बहुत खुले अहाते में बारहदरी थी और कोठी के खुले बरामदे में सदर दरवाजे के बिलकुल सामने बहुत बड़े गोल हौज में ऊँचा फव्वारा बना हुआ था।

कोठी के वैभव से भयभीत हो काली हैरत में डूब गया। वह अनुमान लगाने लगा कि इस कोठी में कितने आदमी रहते होंगे। लेकिन कोठी से आगे पीले रंग

के महल को देख उसकी साँस जैसे रुक गयी। उस महल की खिड़कियाँ गाँव के बड़े-से-बड़े द्वार से भी लंबी-चौड़ी थीं। अपनी कच्ची-पक्की कोठड़ी याद आने पर काली के मन में गुदगुदी-सी होने लगी और उसका कलेजा उमड़कर मुँह को आ गया। वह एकदम उदास हो गया। उदासी से बचने के लिए वह एक बार फिर लाल कोठी और महलनुमा इमारत की ओर झाँकने लगा। उसे याद हो आया कि शायद यह वही स्वर्ग है जिसका वर्णन एक बार उसने पंडित संतराम को कुछ स्त्रियों को बताते सुना था। कोठी के बाग में जब दो युवतियाँ सैर करने निकलीं तो काली को यह विश्वास हो गया कि शायद यही जगह इस धरती का स्वर्ग है। वह एक बार फिर कोठी और महल में रहनेवालों के बारे में सोचने लगा। लेकिन जब अनुमान उसकी कल्पना के घेरे में नहीं आ सका तो काली ने कोठी और महल की ओर पीठ मोड़ ली और सामने कंपनीबाग के बड़े दरवाजे की ओर बढ़ गया।

बाग के अदर सड़क के दोनों ओर चाट, कुल्फी और खान-पान की कई रेढ़ियाँ खड़ी थीं। उनके सामने कुछ औरतें, बच्चे और मर्द चाट, कुल्फी खा रहे थे। काली उनसे बचता-बचाता बाग मे चला गया।

बाग काफी खुला था और उसे छोटे पौदो की बाढ़ लगाकर कई हिस्सों मे बाँट दिया गया था। एक हिस्से में कुछ बच्चे फुटबाल और कुछ गुल्लीडंडा खेल रहे थे, जबकि कोनो में कई बच्चे जुडकर बैठे हुए बन्टे खेलने मे व्यस्त थे। दूसरे पार्क में कई लोग छोटी-छोटी टुकड़ियों में बँट ताश के खेल का लुत्फ ले रहे थे। उनके आगे कई बूढे घास पर बैठे और अधलेटे हुए ऊँची आवाज मे निन्दा-चुगली करते हुए दुनिया और सरकार को कोसते आपस में भी उलझ पडते थे।

काली को बाग का माहौल अच्छा लगा। उसे महसूस हुआ कि शहर मे कम-से-कम एक स्थान तो ऐसा है जहाँ सब लोग आजादी से घूम-फिर और मौज-मेला कर सकते हैं। वह अलग-अलग पार्कों में झूमता हुआ बाग के बीचोबीच बरगद के बड़े पेड़ के नीचे आ गया। इसकी जड़ों के गिर्द बड़ा गोल पक्का चबूतरा बना हुआ था। इत्मीनान की साँस लेता हुआ वह चबूतरे पर बैठ गया लेकिन पेड़ के तने और कहीं-कहीं चबूतरे पर काले और लाल रंग के मकोड़ों को देख वह वहाँ से उठ गया।

पार्क में धीरे-धीरे चहलकदमी करते-करते काली एक खाली स्थान में पहुँच गया। उसे कुछ थकावट महसूस होने लगी थी। वह अधलेटा पिंडलियों को सहलाने लगा। उसे राहत महसूस होने लगी थी। उसने चादर सिर के नीचे रख सिरहाना बना लिया। फिर वह थकावट को दूर करने के लिए सो गया।

काली की आँख खुली तो सूरज सामने महलनुमा इमारत की छत की ऊँची मुँडेर के झरोखों से झाँक रहा था। धूप काफी फीकी पड़ गई थी और बाग के

बड़े हिस्सों में लाल कोठी और महल के आकार की परछाइयाँ फैल गई थीं।

काली ने चादर को अच्छी तरह झाड़ा। फिर उसकी तह लगा कंधे पर रखता हुआ आगे के बड़े गेट की ओर बढ़ गया। तंग और अँधेरी गलियों में रहनेवाले कई लोग अपने परिवारों के साथ खुली हवा में साँस लेने के लिए बाग में जमा हो रहे थे। चाट और खान-पान की रेढ़ियों के गिर्द लोगों की भीड़ पहले से वहुत घनी हो गई थी और पार्कों में जैसे लोगों का टिड्डी दल उतर आया था।

बाजारों में भी रौनक बढ़ गई थी। नई रेलवे रोड सिनेमा शो खत्म होने और अगला शो शुरू होने के कारण लोगों से भरी हुई थी और सारी सड़क पर मेला-सा लगा हुआ था। साइकिलों की घंटियो की टर्र… टर्र, ताँगों की टप-टप और इक्का-दुक्का मोटरों की पौं… पौं वातावरण को कचोट रही थी। काली भीड़ से बचता-बचाता तेज कदमों से लुधियाना के बस अड्डे की ओर भागा जा रहा था जैसे उसे आखिरी बस पकड़नी थी।

वह अड्डे में पहुँचा तो लुधियाना को आखिरी बस जा रही थी और नवाँशहर को जानेवाली लारी भी तैयार थी। शगारा सड़क पर खड़ा रेलवे स्टेशन की ओर मुँह किए जोर-जोर से हॉक लगा रहा था, "आ जाओ… आ जाओ… … नवाँशहर–बंगा… फगवाड़ा जानेवाले। लारी तैयार है।"

बस का ड्राइवर भी बार-बार हार्न बजाता और गाड़ी न्यूट्रल में रखकर किल्ली दबा देता। बस का इंजन ढेर-सा धुआँ छोड़ता हुआ इतना ज्यादा शोर मचाता कि दूर-दूर तक सुनाई दे जाए।

शगारा सड़क से ड्राइवर की खिड़की के पास आ गया। "उस्ताद, बस पहले टेशन पर ले चलो, उसके बाद कचहरी के बाहर… रास्ते में सवारी हाथ दे तो उठा लेंगे। अब यहाँ रुकना बेकार है।"

"ठीक है। बैठो बस में।" ड्राइवर ने गेयर बदल दिया।

"मैं अगले पायदान पर खड़ा हो हाँक लगाता रहूँगा।" शगारा बस की अगली खिड़की की ओर भाग गया।

बस धीरे-धीरे अड्डे से बाहर निकली। पायदान पर खड़ा शंगारा निरंतर पुकारे जा रहा था। "नवाँशहर-बंगा… फगवाड़ा… आखिरी बस जा रही है। जो रह गया वह रात पुलिस हवालात में काटेगा, जो बैठ गया वह अपनी माँ, बहन या नड्डी के हाथ का बना हुआ खाना खाएगा।"

नवाँशहर की बस जाने के बाद अड्डा बिलकुल खाली हो गया था। काली ने चारों ओर झाँका लेकिन उसे कोई भी दिखाई नहीं दिया। उसे चिंता होने लगी क्योंकि इस सारे शहर में वह केवल चार आदमियो को ही पहचानता था और उन्हीं का तिनके-सरीखा सहारा पाकर उसके मन में आत्मविश्वास पैदा हुआ था। भविष्य के बारे में कुछ आस बँधी थी।

वह बेचैन हो चारों ओर देख रहा था कि उसे पीछे से आवाज सुनाई दी, "सुना सज्जना, घूम-फिर आया। कर ली शहर की सैर ?"

चौंककर काली ने एकदम पीछे मुड़कर देखा। मनसुख को पा काली ने इत्मीनान की साँस ली। "अड्डा बिलकुल खाली देख मैं तो घबरा ही गया था।"

"शाम के समय अड्डे की रौनक छत पर चली जाती है। अड्डा-इंचार्ज और कुछ रिश्तेदार ड्राइवर-क्लीनर दिन-भर की कमाई साँझी करते हैं।" मनसुख दायाँ अँगूठा मुँह की ओर उठा मुस्करा दिया, "ऊपर बोतलें खोलकर बैठे हैं। उन्हें पानी देने गया था।"

उत्तर में काली भी मुस्करा दिया, "बाकी सज्जन कहाँ गए ?"

"सब अपने-अपने घर चले गए हैं। बरकत का गाँव छावनी से आगे है। वह जो बस अभी निकली है, उसमें गया है। बस से उतरकर आधा कोस पैदल चलना पड़ता है।··· तोखा और सोमा इससे पहले लुधियाना की बस में गए हैं। उनके गाँव फगवाड़ा से थोड़ा आगे हैं।" मनसुख ने बात जारी रखी, "मेरा गाँव फगवाड़ा के पास है। कल मैं भी नवाँशहरवाली आखिरी बस से जाऊँगा। तुम कहाँ-कहाँ घूम आए हो ?"

"मैं यहाँ से सीधा पहले बर्फखाना, मालगोदाम, फिर आरामशीनों के बाजार से आगे दूसरे बस अड्डे पर चला गया था," काली ने बताया। "वहाँ होशियारपुर का अड्डा है···। और आगे निकल जाते तो टाँडा रोड पर पहुँच जाते।"

टाँडा का नाम सुन काली का चेहरा फक् हो गया और हवाइयाँ उड़ने लगीं। उसे महसूस हुआ कि अब मनसुख उसके गाँव का जिक्र करेगा और फिर उसकी रामकहानी उसी को सुनाएगा।"

"और कहाँ-कहाँ गया ?" मनसुख ने दिलचस्पी से पूछा।

यह सुन काली की घबराहट दूर हो गई और उस पर पूरी तरह काबू पाने के लिए वह सोच में डूब गया। फिर सिर हिलाता हुआ धीमे स्वर में बोला, "उस बाजार में भी गया जिसमें दो सिनेमाघर है।"

"अच्छा, नई रेलवे रोड··· वहाँ पर रायल टाकी और हरी पैलेस सिनेमा हैं।" मनसुख ने बताया।

"नाम तो मुझे मालूम नहीं हैं···।" काली बोला, "वहाँ से मैं आगे गया।··· एक चौक में पहुँच गया। फिर और आगे··· तंग बाजार में।"

"उसका नाम फगवाड़ा गेट है।" मनसुख शहर के बारे में अपनी जानकारी पर प्रसन्न था।

"इस चौक से आगे एक तरफ बहुत ही बड़ी लाल रंग की कोठी और उसकी बगल में एक महल-जैसी बड़ी इमारत थी।" काली इन इमारतों के वैभव से अभी तक भयभीत था।

"दुनिया में बड़े से बड़े लोग हैं।" मनसुख ने दार्शनिक भाव से कहा। "कंपनीबाग भी देखा कि नहीं ?"

"देखा, लाल कोठी के सामने जो बाग है।" उत्सुकता से काली चहक-सा उठा।

"हाँ, वही। जब कभी वक्त मिले तो मैं भी वहाँ जाता हूँ, थकावट दूर करने।..."

रेलवे रोड से अड्डे में मुड़ती हुई बस को देख मनसुख ने अपनी बात बीच में ही छोड़ दी और लपकता हुआ उसकी ओर बढ़ गया। सबसे पहले बस से दो लड़के उतरे। उन्होंने बहुत बढ़िया कपड़े पहने हुए थे। वे बहुत प्रसन्न और उत्साहित थे। एक ने चारों ओर देखते हुए लंबी आवाज दी, "कुली।"

मनसुख लपककर उन नौजवानों के पास चला गया, "हाँ, बाबूजी।"

"ऊपर से सामान उतारो...।" फिर उसे अकेला देख वह शशोपज में पड़ गया, "तुम्हारे साथ और आदमी नहीं हैं ?"

"आदमियों की कोई कमी नहीं है ?" मनसुख ने काली की ओर इशारा किया।

"परवेश, तू भागकर दो ताँगे ले आ। तब तक मैं सामान उतरवाता हूँ।" इन्द्रजीत ने कहा। फिर वह मनसुख की ओर मुड़ गया, "देख क्या रहे हो ? जल्दी सामान उतारो।"

"कौन-कौन-सा सामान है ?"

"सारा सामान अपना ही है।" इन्द्रजीत ने छत की ओर संकेत किया।

मनसुख बस की छत पर जा चढ़ा और एक-एक करके ट्रंक उठा नीचे लटकाता रहा। काली उन्हें पकड़-पकड़ थोड़े फासले पर टिकाता रहा। पूरा सामान उतार मनसुख नीचे आ गया, "कुल कितने नग हैं ?"

"मैंने तो गिने नहीं।" काली ने परेशान हो कहा, जैसे उससे बहुत बड़ी गलती हो गई हो।

"कोई बात नहीं।" मनसुख ने जल्दी-जल्दी नग गिने और इन्द्रजीत के पास आ गया, "कुल सोलह नग हैं। आप देख लें।"

"ठीक है। इतने ही होंगे।" इन्द्रजीत ने उसकी ओर विशेष ध्यान दिए बिना आगे कहा, "सामान को ताँगों पर भी लादना है।"

"इस काम के अलग पैसे लगेंगे। हमारा काम तो सामान को बस की छत से नीचे उतारना ही है।" मनसुख ने बात स्पष्ट की।

"घबरा क्यो रहा है। तेरा दिल खुश करके ही जाएँगे। लड़के की शादी से लौटे हैं, कोई मजाक नही है।"

"जनाब, कोई बात नहीं है। खुशी का मौका है। आपकी मेहरबानी होगी ही।" मनसुख ने हाथ जोड़ दिए।

ताँगे आ गए तो काली और मनसुख ने मिलकर सामान उनमें टिका दिया।

"साब, अपना सामान देख लो।" मनसुख ने ताँगों में लदे सामान की ओर इशारा किया।

इन्द्रजीत ने सामान का निरीक्षण किया और जेब से बटवा निकाला। बोला, "कितना पैसा हुआ ?"

"साबजी, हिसाब के मुताबिक तो तीन रुपये बनते हैं लेकिन खुशी का मौका है, आप जो मर्जी दे दें।" मनसुख ने खुशामद की।

मनसुख जान-बूझकर इन्द्रजीत को परे ले गया ताकि काली को पता न चल सके कि उसने कितने पैसे लिए हैं। इन्द्रजीत ने अपने बटवे से एक-एक रुपये के चार नोट निकाल मनसुख की हथेली पर रख दिए, "क्यों, ठीक है ?"

"जनाब, मालिक हो।" मनसुख ने जोर से मुट्ठी भींचते हुए बंदगी की।

मनसुख ने बस का चक्कर लगाया लेकिन ड्राइवर और क्लीनर में से उसे कोई भी नहीं मिला। फिर परगटसिंह ड्राइवर को नल की ओर से आता देख वह प्रसन्नचित्त हो उठा, "क्यों उस्तादजी, आखिरी टैम तो अभी जाएगा ?"

"क्यों जाएगा ?" परगटसिंह क्षुब्ध हो उठा।

"सारे बाबे ऊपर बैठे हैं।" मनसुख छत की ओर इशारा कर शरारत से मुस्करा दिया।

"कौन··· कौन है ?"

"सारे ढोल ऊपर ही हैं। आगे आप अंदाजा लगा लो।"

"अच्छा है, हम भी बस गाँव ले जाएँगे और रात आराम से काटेंगे।" परगटसिंह ने सिर झटक दिया और क्लीनर को आवाजें देता हुआ मुकंदे की दुकान की ओर बढ़ गया।

"ओये मनसुखे··· मनसुखे ओये," छत में आवाज आयी।

मनसुख सीढ़ियों की ओर भाग गया और पहली सीढ़ी पर ही खड़े हो ऊँची आवाज में पूछा, "हाँ जी। उस्तादजी।"

"नवाँशहर का आखिरी टैम आ गया ?"

"आ गया, उस्तादजी।"

"ड्रेवर कौन है ?"

"परगटसिंह है। उस्तादजी।"

"उसे कहो कि फगवाड़ा या बंगा का आखिरी टैम उठा ले।"

"उस्तादजी, पहले ही कह दिया है। वह मुकंदे की दुकान पर चाय पीने गया है।" मनसुख ने बताया।

"ठीक है। तू ऊपर आकर गिलास, बाल्टी और निक्का-मोटा सामान उठा ले। बस काम खत्म होने ही वाला है।"

"उस्तादजी, आपके नीचे उतरते ही सबकुछ सँभाल लूँगा। मुझे रात यही अड्डे

में ही रहना है। सारे आखिरी टैम देखने की मेरी बारी है आज।" मनसुख जेब में पड़े रुपये-रुपये के चार नोटों का स्पर्श पा प्रफुल्लित हो उठा।

थोड़ी ही देर में परगटसिंह और कुलदीप चाय पीकर आ गए। "ओये मनसुखे, शंगारा तो नवाँशहरवाली बस के साथ ही निकल गया होगा ?" परगटसिंह ने पूछा।

"हाँ उस्ताद।"

"फिर तू ही होका लगा दे··· फगवाड़ा, बहराम और बंगा का।"

"उस्ताद, अड्डा इंचार्ज से पूछ लो। आखिरी टैम कहाँ का बनाना है ?" मनसुख ने सलाह दी।

"ओए तू चुप रह। मैं और कुलदीप भी तो कंपनी में हिस्सेदार हैं। जा, तू होका लगा··· सड़क पर।" परगट ने जोर दे कहा।

फगवाड़ा, बहराम और बंगा की हाँक लगाता हुआ मनसुख सड़क पर आ गया। वह बारी-बारी दायीं और बायीं ओर मुँह घुमा आवाजें लगाता रहा।

"लारी पक्की जा रही है न फगवाड़ा ? आखिरी टैम तो पहले निकल जाता है।" सामान से लदी-फँदी एक सवारी ने अपनी बात की पुष्टि चाही।

"लालाजी, पक्की जा रही है। आप बस में बैठो।" मनसुख ने विश्वास दिलाया और जल्दी से एक बार फिर आवाजें लगा सामान से भरे तांगे के साथ ही बस के पास आ गया।

मनसुख ने काली की मदद से सामान बस की छत पर पहुँचा दिया और आठ आने और कमा लिए। वह अभी आवाजें लगा ही रहा था कि अड्डा इंचार्ज और कंपनी के चार और हिस्सेदार छत से नीचे आ गए। वे सब कंपनी में ड्राइवर, मैकेनिक, इंस्पैक्टर आदि थे। वे बस के पास आ खड़े हुए। परगटसिंह को देख मीतसिंह ने पूछा, "सुना बल्लया, क्या हाल है तेरा ?"

"ठीक हूँ, उस्तादजी। जो दिहाड़ी निकल जाए, सो भली।" परगटसिंह ने हाथ आकाश की ओर उठा दिए।

"क्या बात है ? इतनी छोटी उम्र मे ही बुड्ढों-जैसी बातें करने लगा है। तेरे तो खुल-खेलने के दिन हैं अभी।" मीतसिंह हँस दिया।

"इस पर बोझ बहुत आ पड़ा है। सिर पर बाप का साया रहा नहीं। बच्चों की पनीरी छोड़ खुद रब को प्यारा हो गया है। घर में सबसे बड़ा यही है। तू खुद अंदाजा लगा ले। दो बहनों की शादी कर चुका है। तीन अभी घर में कुँवारी बैठी हैं।" चैकर नसीबसिंह ने मीतसिंह को बताया।

अन्य लोग खामोश थे लेकिन मीतसिंह का नशा खिड़ गया था। वह लगातार बोले जा रहा था। कुलदीप को देख वह चहक उठा, "सुना बल्लया, क्या हाल है तेरा ?"

"ठीक हूँ।" कुलदीप ने नम्रता से हाथ जोड़े।

"टिकट काटना सीख लिया कि नहीं। वे बिल बना लेते हो ?" मीतसिंह ने पूछा।

"हाँ उस्तादजी, सब काम कर लेता हूँ।"

"यह लड़का कौन है। कब रखा इसे ?" नसीबसिंह ने कुलदीप की ओर इशारा किया।

"यह पंडितजी का भतीजा है; भाई का लड़का। दस जमातें पास है। काम सीख रहा है। दो-तीन महीने में इंस्पैक्टर और फिर डिपो मैनेजर बन जाएगा।" मीतसिंह ने सिर हिलाया।

"पंडितजी का भतीजा है तो जरूर मैनेजर बनेगा।" नसीबसिंह ने आँख दबाई।

"परगटसिंघा। बैठें बस में ?" मीतसिंह ने पूछा।

"बैठो उस्तादजी। अभी चलते हैं। बस सड़क पर जरा सवारी देख लें।" परगटसिंह, कुलदीप और मनसुख सड़क के किनारे खड़े हो आवाजें देने लगे।

"ओ बल्लयो, आ जाओ। क्यों गला फाड़ रहे हो। रास्ते में सवारी मिल जाएगी। यहाँ से स्टेशन चलो। वहाँ से कचहरी··· रास्ते में रामा मण्डी भी है। कुछ-न-कुछ तो मिलेगा ही। तेल का खर्च तो निकलेगा ही," मीतसिंह बस की ओर बढ़ गया।

दो-तीन सवारियाँ और बैठ गईं तो परगटसिंह ने बस चला दी। इंजन ने कुछ समय तक छूँ-छूँ की आवाज निकाली, फिर गुर्र··· गुर्र की बहुत तेज ध्वनि पैदा की और अड्डा काले और कड़वे धुएँ से भर गया।

"मनसुख, छत पर पड़ा सामान मुकन्दे की दुकान पर पहुँचा देना।" मीतसिंह ने खिड़की से सिर बाहर निकालने की कोशिश करते हुए ताकीद की।

"उस्तादजी, चिंता न करो।" मनसुख ने ऊँची आवाज में आश्वासन दिया।

बस के जाने के बाद मनसुख और काली छत पर चले गए। उन्होंने बिछी हुई दो चारपाइयाँ उठाकर दीवार के साथ टिका दीं। खाली गिलास, दो खाली बोतलें, पानी की छोटी बाल्टी और एलमूनियम की दो खाली प्लेटें उठा वे नीचे आ गए। मनसुख ने शराब की खाली बोतलें झरोखे से टिका दीं और बाकी सामान मुकन्दे की दुकान पर छोड़ दिया।

वे बगल की दुकान के सामने बेंच पर आ बैठे, "रक्खा सेठ, दो गिलास चाय बनाना। ऊपर मलाई जरूर छोड़ना। छोटी और मोटी इलायची भी डाल देना। स्पैशल चाय हो।" जेब में पड़े पैसों की गर्मी को महसूस करते हुए मनसुख की आवाज में भी खनक आ गई थी।

"क्यों, कोई खास बात है ? लगता है कहीं से माल हाथ लग गया है। क्या किसी सवारी का बटुआ अड्डे में गिरा मिल गया है ?" रक्खा अपनी बदरंग कमीज के अंदर हाथ डाल छाती को खुजाते हुए शरारत से मुस्करा दिया। फिर वह कच्छे में हाथ डाल बारी-बारी दायीं और बायीं रान को खुजाने लगा।

"अब हाथ धो लेना। सारे शरीर की मैल पत्ती की जगह और बदबू इलायची की जगह हमारी चाय में न छोड़ देना।" मनसुख ने हँसते हुए कटाक्ष किया।

"चाय एक जगह या दो···?" रक्खा ने काली की ओर देखा।

"दो जगह।" मनसुख ने दायें हाथ की दो उँगलियाँ ऊपर उठा दीं।

बेंच पर बैठा काली ऊँची दीवार के पास रेलवे स्टेशन के अंदर बहुत ऊँची रोशनियों को देखने लगा। इनके कारण स्टेशन का बहुत-सा हिस्सा जगमगा रहा था। सड़क पर भी रौनक कुछ ज्यादा थी।

चाय खत्म कर मनसुख काली को स्टेशन की ओर ले गया। "आज कमाई अच्छी हुई है। आओ, थोड़ी ऐश करें।" मनसुख मुस्कराया। और वे स्टेशन के सामने से ही मण्डी फैंटनगंज की ओर बढ़ गए।

"मण्डी के बाहर हलवाइयों की बहुत बढ़िया दुकानें हैं।··· उन हलवाइयों के ग्राहक धनाढ्य, लखपति लाले हैं जबकि अड्डे के हलवाइयों के पास ड्रैवर, क्लीनर, कुली और पूँछ में आग लगे हनुमान की तरह जल्दी की मारामारी में फँसी सवारियाँ ही आती हैं।" मनसुख ने जानकारी दी।

धीरे-धीरे कदम उठाते हुए वे दुकानों के सामने जा खड़े हुए। दुकानें वाकई वहुत खुली थीं। मिठाइयाँ लकडी के चौड़े-चौड़े और शीशे-लगे बक्सों में सजाई हुई थीं।

"दूध जलेबी खाते हैं। रात को रोटी की जरूरत नहीं रहेगी।"

मनसुख की बात सुन काली के मुँह में पानी आ गया और वह घूँट भरता हुआ उसे समेटने का यत्न करता रहा।

वे एक दुकान के अंदर घुस गए। वहाँ एक ओर गोल काली टोपी, सोने के बटनोंवाली कमीज पहने हुए और एक पगड़ी-कुर्तेवाला लाला बैठे आपस में हँस-हँसकर बातें करते हुए बर्फी और पनीर के पकौड़े खा रहे थे।

चारों ओर अच्छी तरह देख-भाल मनसुख और काली भी एक कोने में दुबककर जा बैठे। अपने गंदे और मामूली कपड़ों के कारण काली परेशान था। मनसुख ने उसकी परेशानी भाँप ली, "यहाँ गाँववाला भिन्न-भेद नहीं चलता। तू आराम से बैठ। दुकानदार को अपने पैसे से मतलब है। पहले शहर में भी भिन्न-भेद चलता था लेकिन अब कोई नहीं पूछता।"

मनसुख की बात सुन काली मुस्करा दिया और कुर्सी पर डट गया, "मैंने सोचा कि यहाँ भी गाँववाला रिवाज न हो।"

मनसुख ने गर्दन ऊपर उठा दुकान के मुहाने की ओर देख मुंडे को इशारा किया। लपककर उसने मेज पर कपड़ा फेरा, फिर उनकी ओर आँखें उठा दीं।

'गर्म जलेबी है?"

"है।"

"आधा सेर दूध में एक पाव जलेबी।··· दो जगह। दूध भी बहुत गर्म हो।" मनसुख ने ताकीद की।

काली के मन में आया कि वह मनसुख से दूध-जलेबी के पैसे नकद माँग ले ताकि उसकी दो दिन की रोटी का खर्च निकल सके। लेकिन उसे हौसला नहीं हुआ और झेंपकर नजरें झुका लीं।

मेज पर पड़े खाली बर्तनों को समेट मुंडे ने गद्दी पर बैठे दुकान-मालिक के पास जा मनसुख का आर्डर सुना दिया। उसने गर्दन घुमा मनसुख और काली की ओर देखा जैसे उनकी हैसियत का अंदाजा लगाना चाहता हो। फिर वह मुंडे के कान में फुसफुसाया। उत्तर में सिर हिला मुंडा मनसुख के पास आ गया, "आध सेर दूध और पाव-भर जलेबी के दो जगह चौदह आने लगेंगे।"

"चौदह रुपये ले लेना।" मनसुख ने जेब में हाथ डाल नोट निकाले और उन्हें दुकान-मालिक की ओर लहरा दिया, "तू क्या हमें भूखे-नंगे भिखारी समझता है। शक है तो पेशगी पैसे भेज दूँ।"

दुकान-मालिक का इशारा पा मुंडा लौट आया। मनसुख खिन्न हो उठा, "साले आदमी की हैसियत का अंदाजा पहनावे से लगाते हैं।"

अपना गुस्सा ठण्डा करने के लिए मनसुख कभी मेज को थपथपाने लगता और कभी गर्दन ऊपर उठा सड़क पर आ-जा रहे लोगों को निहारता। फिर वह काली की ओर झुक गया, "इस बाजार में हलवाई की यह सबसे बढ़िया दुकान है। यहाँ मिठाइयाँ देसी घी से ही बनाई जाती हैं। मालिक ने गलत साबित करनेवाले शख्स को एक हजार रुपये नकद इनाम देने की मुनादी करा रखी है। दुकान के माथे पर भी इस मुनादी का फट्टा लगा है।"

काली की आँखें हैरानी से फैल गईं। मनसुख जैसे रोमांचित हो उठा, "मैं इस दुकान पर दूध-जलेबी खाने के लिए तीन महीने के बाद आया हूँ। तब भी इसी तरह आखिरी टैम पर भारी सामानवाली सवारी मिल गई थी।··· शायद चौदह आने मिले थे। जिसे भी आखिरी टैम में अच्छी सवारी मिल जाती है, वह उस शाम जरूर ऐश करता है। सारे दिन की कमाई से अड्डा-इंचार्ज के लिए फीस निकाल बाकी रकम हम चार हिस्सों में बाँट लेते हैं। आखिरी टैम की कमाई उसकी अपनी होती है। कई बार तो रोटी के पैसे भी नहीं मिलते और कभी-कभार फुल ऐश करने का मौका मिल जाता है।"

मनसुख की बातो को काली बहुत ध्यान और दिलचस्पी से सुन रहा था। उसने डरते-डरते हिचकिचाते हुए पूछा, "कितने पैसे बन जाते हैं रोज ?"

"कोई बँधी आमदनी नहीं है। सवारी पड़ने पर है। भारी सामानवाली सवारी ज्यादा आ जाए तो आमदनी बढ़ जाती है। कम हो तो आमदनी गिर जाती है। मेले-ठेलों में अच्छा काम रहता है।" मनसुख ने सिर हिलाया, "काम तो और भी

बहुत हैं लेकिन वहाँ मेहनत-मशक्कत बहुत ज्यादा है। इस काम में ज्यादा खजालत और मशक्कत नहीं है लेकिन काम किस्मत गोचरे ही रहता है।"

"मेहनत मशक्कत के काम मे कितनी दिहाड़ी मिल जाती है ?" काली ने पूछा।

"सवा-डेढ़ रुपये तो मिल ही जाते हैं। लेकिन बात वहीं आ पड़ती है। मेहनत-मशक्कत का काम करने के बाद सेर-आध सेर दूध भी पीना पड़ेगा। खोराक भी अच्छी रखनी पड़ेगी। वरना दिनों में ही सरीर टूटने लगेगा।"

मुंडा उनके सामने दो बड़े कटोरे रख गया। उनमें दूध और जलेबियाँ थीं और बीच में एक बड़ा चम्मच धरा था। मनसुख ने सिर आगे झुका कटोरे से उठती भाप को जोर से सूँघा, "भाप में भी देसी घी की खुशबू आ रही है।"

मनसुख की देखादेखी काली भी भाप को सूँघने लगा। उसे अपने नथुनों में खुशबू का एहसास तो हुआ लेकिन उसे इस बात का यकीन नहीं था कि यह खुशबू देसी घी की है क्योंकि इसका बहुत दिनों से कोई अनुभव नहीं था। लेकिन अपनी अज्ञानता पर पर्दापोशी के लिए वह बोला, "बिलकुल नखालिस देसी घी की खुशबू है।"

"अब तो देसी घी मे भी बहुत हेराफेरी और मिलावट होने लगी है। जालसाज लोग विलायती घी में सेंट मिलाकर उसे देसी घी के नाम पर ही बेच रहे हैं।" मनसुख ने चम्मच से जलेबियों को दूध में हिलाते हुए बताया।

मनसुख की देखादेखी काली भी अपने सामने रखे कटोरे में चम्मच से जलेबियो को हिलाता रहा। जलेबियों के कारण दूध का रंग भी गुलाबी-सा और जलेबियों का रंग दूधिया हो रहा था।

मनसुख और काली चम्मच से दूध में से जलेबियाँ निकालकर खाने लगे। जलेबी का पूरा स्वाद उठाने के लिए मनसुख उसे चबाता रहता जबकि काली जलेबी के स्वाद और खुशबू को समेटने के लिए एकदम गले के नीचे उतार लेता। जलेबियाँ खा उन्होने धीरे-धीरे दूध पिया। उसमें जलेबियों ने बहुत-सी मिठास घोल दी थी।

दूध-जलेबी खा मनसुख ने पैसे दिए और बाकी बचे पैसों को गिन वह संतुष्ट हो गया।

वे रेलवे स्टेशन के सामने रुक गए। दिल्ली को जानेवाली गाड़ी की सवारियाँ ताँगों, अन्य वाहनों से और कुछ पैदल ही स्टेशन पर पहुँच रही थीं। उनके सामने एक ताँगा रुका। उससे चार सवारियाँ उतरीं। उनमें एक सुंदर जवान लड़की भी थी। उसे देख मनसुख स्तब्ध रह गया और आँख बचा उसकी ओर उस वक्त तक देखता रहा जब तक कि वह प्लेटफार्म की भीड़ में ओझल नहीं हो गई।

मनसुख होंठों पर जीभ फेरने लगा जैसे दूध-जलेबी के स्वाद को पूरी तरह समेट लेना चाहता हो। फिर वह उस लड़की की तलाश में प्लेटफार्म की ओर झाँकने लगा, "नौकरी रेलवे स्टेशन की भी बहुत अच्छी है। चाहे कुली की ही

हो। लेकिन मिलती बहुत मुश्किल से है।"

"मुश्किल से क्यों मिलती है ?" काली के मन में जिज्ञासा जाग उठी, जैसे उज्ज्वल भविष्य का एक और द्वार खुल रहा हो। "बहुत लंबा चक्कर है। सरकारी मामला है न। बहुत पहुँच चाहिए।" मनसुख उदास हो गया। फिर वह खिल उठा, "एक बार मिल जाए तो वारे-न्यारे हो जाते हैं। लाल या नीली कुरती पहननी पड़ती है। बाजू पर पीतल का नंबर बाँधना होता है। इस तरह पक्की पहचान बन जाती है।"

मनसुख प्लेटफार्म पर खड़ी सवारियों की ओर झाँक रहा था कि छोटा बच्चा गोद में उठाए एक भिखारिन उसके सामने आ खड़ी हुई और हाथ फैला गिड़गिड़ाने लगी। मनसुख ने बहुत ध्यान से भिखारिन की ओर देखा। ढीले और फटे-पुराने कपड़ों से उसकी जवानी फूट रही थी।

"बाबू, कुछ देगा भी या आँखें फाड़ देखता ही रहेगा ?" भिखारिन ने मनसुख की ओर हाथ लहराया।

उससे पीछा छुड़ाने के लिए मनसुख ने उसकी हथेली पर पैसा रख दिया तो वह काली के सामने गिड़गिड़ाने लगी। मनसुख खीज उठा, "दफा हो अब यहाँ से। क्या तन के कपड़े उतार तेरी झोली में डाल दे ?"

भिखारिन एक ताँगे को रुकता देख उसकी ओर लपक गई। प्लेटफार्म पर सुदर और जवान लड़की पर नजर पड़ते ही मनसुख उतावला हो गया।

"आओ, टेशन के अंदर चक्कर लगा आएँ। गाड़ी आने से पहले कोई रोक-टोक नहीं होती।" मनसुख ने आग्रह किया।

मनसुख का प्रस्ताव सुन काली सहम गया। यह देख मनसुख ने काली का हाथ पकड़ लिया, "तू इतना डरता क्यों है ? क्या तेरे पीछे पुलिस लगी हुई है ?··· आ जा। इस समय दिल्ली की गाड़ी के प्लेटफार्म पर बहुत रौनक होगी। दर्शन-परशन का अच्छा मौका है।" मनसुख शरारत से मुस्करा दिया।

काली काँप उठा और उसे अपने शरीर में झुरझुरी महसूस हुई, "आप हो आओ। मैं यही बाहर इंतजार करता हूँ।"

पंद्रह-बीस मिनट के बाद मनसुख लौटा तो काली एक कोने में छिपा खड़ा था। मनसुख को देख वह उसकी ओर लपक गया।

"बहुत रौनक थी प्लेटफार्म पर। लगता था कि सारी दुनिया का सोहप्पन वहाँ पर टूट पड़ा है। एक-से-एक बढ़कर।" मनसुख मस्ती में झूम-सा गया।

धीरे-धीरे कदम उठाते हुए वह बस अड्डे पर आ गए। वहाँ वीरानी छाई हुई थी। अड्डे के पीछे वर्कशाप में एक बल्ब रोशन था और वहाँ कभी-कभार हथौड़ा चलाने या बातें करने की आवाजें आती थीं।

छत पर दो चारपाइयाँ बिछा वे लेट गए। मनसुख धीरे-धीरे गुनगुनाने लगा–

मेरी लगदी किसे न देखी
टुट दी नूँ जग जाण दा।

फिर वह चारपाई से उठ गया और छत पर घूमता हुआ ऊँची आवाज में गाने लगा।

सड़क पर एकदम भीड़ देख और शोर सुन मनसुख को ख्याल आया कि सिनेमाघरों में शो खत्म हुए हैं और आखिरी शो शुरू होनेवाला है। वह लपककर अपनी खाट के पास गया। साफा उठा कंधे पर रख लिया और काली से बोला, "मैं सिनेमा का आखिरी शो देख आऊँ। मैं सीढ़ियों का दरवाजा बाहर से बंद कर दूँगा और आधी रात तक लौट आऊँगा। बहुत दिनों के बाद सिनेमा देखने का मौका मिला है।"

काली के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही मनसुख खुली आवाज में गाता हुआ सीढ़ियाँ उतर गया।

काली मुँडेर के साथ खड़ा मनसुख को फुदक-फुदककर सड़क पर चलते हुए देखता रहा। जब वह लोगों के रेले में खो काली की आँखों से ओझल हो गया तो वह अपनी खाट के पास आ खड़ा हुआ।

पिछवाड़े में वर्कशाप में हरकत देख काली छत के उस ओर चला गया जहाँ से वर्कशाप दिखाई देती थी। लेकिन इस डर से वह उलटे पाँव ही वापस आ गया कि उसे कोई देखकर पूछ न ले कि वह कौन है और इतनी रात-गए वहाँ क्या कर रहा है।

काली खाट पर लेटा रेलवे यार्ड में ऊँचे पोलों पर लगी तेज रोशनियों को देखता रहा। रोशनी उसकी आँखों में चुभने लगी तो करवट बदल उसने आँखें बंद कर लीं और उन फिल्मों के कलाकारों और दृश्यों को याद करने लगा जो उसने कानपुर में कई वर्ष पहले देखी थीं।

चार

मनसुख आधी रात के बाद थप-थप की आवाज पैदा करता हुआ सीढ़ियाँ चढ़ा जैसे वह बहुत उत्तेजित था। वह बार-बार फिल्मी गीत का एक ही बोल गुनगुना रहा था जैसे वे शब्द उसके मन-प्राण को छू गए थे।

मनसुख अपनी खाट पर लेट गया और एक बार फिर फिल्मी गीत गुनगुनाने लगा। वह बार-बार करवटें बदल रहा था जैसे नींद उससे बेजार हो चुकी थी।

मनसुख के लगातार गुनगुनाने और करवटें बदलने से खाट की चुरमुराहट के कारण काली की नींद भी टूट गई थी। लेकिन वह आँखें बंद किए हुए खाट पर पड़ा रहा।

धीरे-धीरे मनसुख की गुनगुनाहट और खाट की चुरमुराहट खत्म हो गई और उसके मुँह और नाक से हल्के-हल्के खर्राटों की आवाज आने लगी।

काली भी सोने की कोशिश करने लगा लेकिन रेलवे स्टेशन पर शंटिंग कर रहे इंजन की निरंतर शाँ-शाँ और तीखी सीटियों के कारण उसकी नींद बार-बार उखड़ जाती थी। जब काली को ख्याल आया कि सुबह-सवेरे उसे बर्फ कारखाने के सामने मैदान में मजदूर मण्डी में पहुँचना है तो उसकी रही-सही अलसाहट भी उड़ गई और वह पूरी तरह सचेत हो गया।

उसने आकाश पर तारों को देख समय का अंदाजा लगाने की कोशिश की लेकिन असफल रहा क्योंकि उसे सौरमण्डल की कोई जानकारी नहीं थी। न ही शहर में मुर्गे थे जो अपनी पहली बाँग से पौ फटने का ऐलान कर देते थे।

जब स्टेशन की ओर जानेवाली सड़क पर ताँगों की टाप सुनाई देने लगी तो काली ने अंदाजा लगाया कि सुबह होने में ज्यादा देर नहीं होनी चाहिए। अड्डे के बाहर दुकान की छत पर सोया हुआ मुंडा जब मालिक की आवाजों से चौंककर भाँ-भाँ जम्हाइयाँ लेने लगा तो काली भी उठ गया।

उसने मनसुख की ओर झाँका। वह गहरी नींद सोया हुआ यूँ खर्राटे ले रहा था जैसे किसी को ललकार रहा हो। मनसुख की ओर देख काली को ईर्ष्या हुई कि वह कितनी बेफिक्री से सो रहा है।

काली छत से नीचे उतर आया। उसने एक खाली बोतल उठाई और नल से पानी भर रेलवे पटरी पर आ गया और उसके साथ-साथ चलता हुआ ढलान मे उतर गया।

जब वह वापस लौटा तो रेलवे रोड पर रौनक बढ़ गई थी। दुकानें खुल गई थी और उनकी सफाई और धुलाई का काम जोर-शोर से जारी था और अँगीठियाँ जलाई जा रही थीं। लेकिन अड्डे में अभी तक सन्नाटा छाया हुआ था और खुले आँगन में काली के सिवा और कोई नहीं था।

उसने अँधेरे और सन्नाटे का फायदा उठाते हुए नहाने के बारे में सोचा। लेकिन अपने पास लँगोट या कछहरा न होने के कारण वह दुविधा में पड़ गया। एक बार फिर उसे अपनी स्थिति पर दया आने लगी। उसे नहाए हुए चार दिन हो गए थे। अपने शरीर से उसे खुद ही बदबू आने लगी थी। उसने साहस बटोर सब कपड़े उतार दिए और हाथ से नल चलाता हुआ नहाने लगा। उसने शरीर को जल्दी-जल्दी मसल-मसलकर धोया और फिर गीले शरीर पर ही कपड़े पहन लिए।

हवा लगने से उसे गीले कपड़ों में ठंड महसूस होने लगी और वह बरामदे में आ गया। जब ठंड कँपकँपी में बदल गई तो वह एक बार फिर बाहर आ गया। वह दुकान के सामने जल रही भट्ठी के पास खड़ा हुआ ताकि शरीर में कुछ गर्मी

महसूस हो और कँपकँपी से छुटकारा मिले। वह काफी देर तक भट्ठी के पास खड़ा आग तापता रहा। जब आँखों में भट्ठी का धुआँ पड़ने के कारण उनसे पानी बहने लगा तो वह पीछे हट गया। कपड़ों का गीलापन खत्म हो गया था और सर्दी का एहसास भी लगभग खत्म हो गया था।

काली पुरानी रेलवे रोड पर चलता हुआ बर्फ कारखाने के पास पहुँच गया। कारखाने की इमारत की पेशानी पर बिजली का मद्धम-सा लट्टू जगमगा रहा था और ऐसा ही एक बल्ब ऊँची दीवार में फँसा हुआ मालगोदामों को जानेवाली कच्ची-पक्की सड़क पर मैली-सी रोशनी फेंक रहा था। वहाँ मजदूरों का शोर और हंगामा तो दरकिनार, आदमी का नामनिशान भी नहीं था। गोदामों के पास दीवार पर लाठी मारकर अपनी मौजूदगी की सूचना देते हुए कुछ चौकीदार जरूर थे। काली लाठी पटकने की आवाजों से डर अड्डे को लौट आया।

अँधेरा कटना शुरू हो गया था। अड्डे और अन्य इमारतों के धुँधले आकार स्पष्ट होने लगे थे। काली छत पर चला गया। मनसुख अभी तक आराम से सोया हुआ था। वह भी खाट पर सीधा लेट आकाश में फीके पड़ रहे तारों को देखने लगा। जब उसे अपने गाँव का तारों-भरा आकाश और मिट्टी की सौंधी गंध से भरी सुबह याद आने लगी तो वह उठ गया और हल्के-हल्के कदम उठाता हुआ छत पर टहलने लगा।

वर्कशाप में रौनक बढ़ गई थी। एकसाथ कई आदमी बोल रहे थे। काली छत के उस हिस्से में चला गया जहाँ से वर्कशाप पूरी तरह नजर आती थी। दो बसों की सफाई हो रही थी और उनके ड्राइवर और क्लीनर वर्कशाप के हैंडपप पर हाथ-मुँह धो रहे थे। मैकेनिक लारी के इंजन का बोनट ऊपर उठा कुछ ठोंका-ठोंकी कर रहा था। फिर बोनट बंद करके उसने इंजन चालू किया और धीरे-धीरे पूरी कीली दबा दी। बस का पिछला हिस्सा धुएँ से भर गया और धड़ा" धड़ा का बहुत ऊँचा और कर्कश शोर उठने लगा। मिस्त्री ने गाड़ी की कीली पर दबाव कम कर दिया तो गाड़ी से गुर्र-गुर्र की समतल आवाज आने लगी। उसने दूसरी बस का भी बोनट उठा इंजन का निरीक्षण किया। उसे चलाया और गुर्र-गुर्र की आवाज पैदा करता छोड़ वह खिड़की से छलाँग मार बाहर आ गया।

"गाड़ियाँ टैस्ट कर दी हैं। हवा, तेल, पानी सब ठीक है। बैटरी भी सही है। ले जाओ अड्डे में।" उसने मैले कपड़े से हाथ पोंछते हुए ड्राइवरों को इशारा किया।

काली जब पीछे मुड़ा तो मनसुख खाट पर लेटा हुआ करवटें बदल रहा था। उसने आँखें पूरी खोल काली की ओर देखा। "तू कब उठ गया ?"

"बहुत टैम हो गया है। मैंने तो जंगल-पानी करके नहा भी लिया है। बर्फ कारखाने का भी एक चक्कर लगा आया हूँ। वहाँ गोदामों के पहरेदारों के सिवा अभी और कोई नहीं था।" काली ने बताया।

"अच्छा। तू तो बड़ा हिम्मती है।… मैं एक तो आधी रात के बाद सोया। फिर साली फिल्म के सीन याद आते रहे। दिल्ली जानेवाली पसंजर गाड़ी के निकलने के बाद कहीं नींद आई। बहुत मीठी नींद थी। बस ने जगा दिया।" मनसुख ने खाट पर बैठते हुए जोरदार अँगड़ाई ली और कंधों और बाजुओं को झटकने लगा। फिर वह खाट से उठ गया।

दोनों चारपाइयों को दीवार के साथ टिका काली भी मनसुख के पीछे-पीछे सीढ़ियाँ उतर आया। मनसुख बोतल उठा नल पर चला गया और दीवार की ओर बढ़ता हुआ बोला, "आज जंगल-पानी के लिए दूर जाना पड़ेगा।… दिन चढ़ गया है न। अँधेरा हो तो पास ही एक जगह है। इधर दायीं दीवार के पार। वहाँ जमीन के अंदर छोटा नाला बहता है। एक-दो जगह उसकी छत टूटी हुई है। वहीं बैठ जाते हैं।"

"मैं बर्फ कारखाने हो आता हूँ।" काली ने कहा।

"वहाँ कोई नहीं होगा इस वक्त। वैसे तुम्हारी मर्जी है।" मनसुख दीवार फलाँगकर पार चला गया।

मनसुख के इंतजार में काली खुले आँगन में चहलकदमी करता रहा। ड्राइवर दोनों बसों को अड्डे के अंदर ले आए और उनके मुँह सड़क की ओर करके बराबर खड़ा कर दिया और स्वय मुकंदे हलवाई की दुकान पर जा बैठे।

मनसुख जल्दी ही पलट आया। बसों को अड्डे के अंदर खड़ा देख उसने काली से पूछा, "बसे कब अदर आई ?"

"बस अभी, थोड़ी देर पहले।"

'ड्राइवर-क्लीनर कहाँ हैं ?"

"हलवाई की दुकान पर गए हैं।" काली ने सड़क पर मुकंदे की दुकान की ओर इशारा किया।

"ठीक है। फिर कोई चिंता नहीं।" मनसुख ने इत्मीनान से साँस ली और कमीज और पाजामा उतारता हुआ बोला, "यार, नल गेड़ दे। जल्दी-जल्दी एक चुब्बी लगा ही लूँ।"

काली नल का हैण्डल ऊपर-नीचे हिलाने लगा और मनसुख मोटी धार के नीचे बैठा सुस्ती दूर करता रहा।

ड्राइवरो के आने से पहले ही मनसुख तैयार हो बसो के पास आ खड़ा हुआ। "उस्तादजी, बंदगी।" मनसुख ने प्रसन्नचित्त हो माथे को छुआ। "बंदगी भाई," ड्राइवर सुरजनलाल ने उत्तर दिया, "नवाँशहर का होका दे दे। होशियारपुर से पहली रेलगाड़ी स्टेशन में लग गई है।"

"बहुत बेहतर, उस्तादजी," मनसुख सड़क की ओर बढ़ गया। काली भी उसके पीछे-पीछे चल दिया और सड़क के किनारे उसके बराबर आ खड़ा हुआ, "मैं चलता

हूँ, बर्फ कारखाने।"

"हाँ, चला जा। मजदूर मण्डी में खड़े का खालसा ही होता है। जिसे भी मजदूरी की जरूरत होती है, वह आता है और आदमी छाँटकर अपने साथ ही ले जाता है। इस तरह वह टैम बचाकर उतने ही पैसों में काम ज्यादा करवा लेता है।" मनसुख ने काली को समझाया और खुद हाँक देने लगा, "आ जाओ फगवाड़ा, बहराम, बंगा, नवाँशहर, गोरायाँ, फिल्लौर, लुधियाना जानेवाले।"

मनसुख की हाँक को पीछे छोड़ता हुआ काली तेज कदमों से बर्फ कारखाने की ओर बढ़ता गया। उसे डर महसूस हो रहा था कि कहीं उसे देर न हो गई हो। सड़क पर काफी रौनक थी। बहुत से ग्वाले साइकिलों के पीछे दोनों ओर दूध से भरी गागरें और ड्रम बाँधे और हैंडल के साथ छोटे डिब्बे लटकाए हुए हलवाइयों की दुकानों और मुहल्लों की ओर भागे जा रहे थे।

काली बचता-बचाता बर्फ कारखाने के सामने पहुँच गया। आँगन में कई रेढ़े और रेढ़ियाँ खड़ी थीं और उन पर बर्फ की बड़ी-बड़ी सिलें लादी जा रही थीं। जिस रेढ़े या रेढ़ी का लदान पूरा हो जाता, वह वहाँ से गेट पर आ जाती और रेढ़े या रेढ़ीवाला राहदारी का पर्चा गेट पर बैठे व्यक्ति के हाथ में थमा आगे बढ़ जाता।

रेढ़ों और रेढ़ियों के लिए जब अंदर जगह नहीं रही तो वे कतार बना गेट के एक ओर खड़े हो गए। काली दिलचस्पी से सबकुछ देखता रहा। फिर गेट से आगे बढ़ गोदामों की ओर देखने गया लेकिन वह जगह बिलकुल सुनसान थी।

मैले-कुचैले कपड़े पहने एक व्यक्ति काली के पास से गुजरा तो वह भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। जब वह गोदामों की ओर बढ़ता ही गया तो काली ने उसे आवाज दे रोक लिया, "भाई जी!"

लपककर उसके पास पहुँच काली ने नम्र स्वर में पूछा, "यहाँ मजदूरों की मंडी कहाँ लगती है?"

"दो जगहें हैं।" उसने गोदामों के निकट एक पेड़ की ओर इशारा किया, "पाण्डियों की मंडी तो उस पेड़ के नीचे लगती है। राज, कारीगर और दूसरे मजदूर रेढ़ों के पास इकट्ठे होते हैं।"

"कितनी देर है अभी मंडी लगने में?" काली ने डरते-डरते पूछा।

"बस मंडी लगने ही वाली है। जरूरतमंद आने शुरू हो जाएँगे।" उस व्यक्ति ने बताया। फिर पूछा, "क्या तुम्हें किसी से मिलना है?"

"नहीं, मुझे भी मजदूरी चाहिए।" काली ने हाथ जोड़े।

"कोशिश कर देखो। लेकिन है मुश्किल।··· यहाँ ज्यादातर बँधे हुए मजदूर हैं। फुटकर मजदूरी भी निकलती रहती है। शायद कोई जरूरतमंद आ ही जाए।"

"क्या मालगोदामों में गुंजाइश हो सकती है?"

"बहुत कठिन है। हर गोदाम के अपने पाण्डी बँधे हुए हैं। जिस दिन काम नहीं होता, वे भी बेकार बैठे रहते हैं। वैसे खड़े होने में कोई हर्ज नहीं है।" उसने हौसला दिया, "यहाँ काम भी बहुत है और आदमी भी अनगिनत हैं। हालत इतनी खराब है कि झोटे-बैल के स्थान पर आदमी रेढ़ा खींचने के लिए तैयार हैं।"

काली बर्फ कारखाने की दीवार के साथ सटकर बैठ गया। गेट के सामने रेढ़े-रेढ़ियों की कतार खत्म हो गई थी। अंदर से भी रेढ़े-रेढ़ियाँ पहले से कम निकल रहे थे और अहाते का हंगामा बहुत हद तक ठंडा पड़ गया था।

यह देख काली की निराशा बढ़ने लगी और अपनी बेबसी और बेकसी का एहसास और जोर पकड़ने लगा। गुजरे हुए कल के बारे में सोचा तो वह उसे बहुत भला लगा। बरकत और उसके साथी उसकी आँखों के सामने घूम गए। मुँह में दूध-जलेबी का स्वाद महसूस करके काली गद्‌गद हो उठा कि यदि सब लोग मनसुख और बरकत-जैसे हो जाएँ तो स्वर्ग इसी धरती पर उतर आएगा!

काली आशा-निराशा के बीच लटका हुआ विचारों में भटक रहा था कि वहाँ साइकिल पर दो आदमी आए। एक नौजवान लड़का साइकिल चला रहा था और पैंतालीस-पचास के घेरे में दूसरा व्यक्ति पिछली सीट पर बैठा था। काली के बराबर के नौजवान लड़के ने साइकिल रोक दी। पीछे बैठा व्यक्ति भी उठ गया। लड़का भी साइकिल से नीचे उतर आया।

"कहाँ है तुम्हारा मिस्तरी और मजदूर?" कुन्दनलाल ने प्रदीप से पूछा।

"तायाजी, यहीं से ले गया था। वह यहां जरूर आता है।" प्रदीप ने भरोसा दिलाया।

वे दोनों वहाँ अलसाए-से खड़े इधर-उधर झाँकते रहे। फिर वे साइकिल को साथ-साथ चलाते हुए सड़क की ओर बढ़ गए। रास्ते में एक व्यक्ति को आता देख प्रदीप ने हर्षध्वनि की, "तायाजी, मैंने बताया था न कि वह यहाँ जरूर आएगा। यह उसका रोज का नियम है। यहाँ चक्कर लगाए बिना न इसे रोटी पचती है और न ही रात को निखरकर नींद आती है।"

"यह तो अकेला है। गारा, मिट्टी और ईंट देने के लिए भी तो एक आदमी चाहिए।" कुन्दनलाल ने चिंता व्यक्त की।

"वह भी आता होगा। ये सवेरे यहाँ इकट्ठे होते हैं और फिर अपने-अपने काम के स्थान को जाते हैं।" प्रदीप इस तरह बता रहा था जैसे वह इन लोगों के बारे में विशेषज्ञ हो।

मिस्त्री ध्यानसिंह उनके पास आ गया। प्रदीप को देख उसकी बाँछें खिल गईं। उसने अपनी खुशी व्यक्त करने के लिए तीन-चार बार औजारों की बोरी को बारी-बारी कंधों पर बदला।

"मिस्तरी, हम तो आपकी तायाजी की दुकान पर इंतजार कर रहे थे।" प्रदीप

ने कहा।

"यहाँ से वही आनेवाला था।" ध्यानसिंह मुस्करा दिया।

"हर आदमी को अपने-अपने धंधे का भेद रखना पड़ता है। बाकी लोगों की तरह हम भी अपनी मार्किट पर नजर रखते हैं। कौन कहाँ लगा है। नया आदमी कौन आया है। क्या काम जानता है। मिलकर काम करने का आदी है या दूसरे के काम में सेंध लगाता है।"

"अच्छा-अच्छा। बात तो ऐसे करता है जैसे हीरों का व्यापारी हो।" कुन्दनलाल ने कटाक्ष किया, "मिस्तरी, तेरा साथी कहाँ है। ईंट-गारा देनेवाला ?"

"वह सीधा वहाँ पहुँचेगा। बल्कि पहुँच ही गया होगा।" मिस्त्री ध्यानसिंह ने कारोबारी ढंग से बताया। "आप चलो, मैं आता हूँ।"

"अभी चलो न।" प्रदीप ने आग्रह किया।

"तुम तो पहुँचो। तुम्हे सैकल पर जाना है सड़क से। मैं तो गलियों से होता हुआ बहुत जल्दी पहुँच जाऊँगा।" मिस्त्री ध्यानसिंह ने भरोसा दिलाया।

"अभी क्यों नहीं चलते ?" कुन्दनलाल ने खीज में सिर झटक दिया, "टैम बरबाद करने का क्या फायदा मिलेगा ?"

"टैम बरबाद नहीं कर रहा हूँ।" मिस्त्री ध्यानसिंह ने समझाया। "लालाजी, खोटे काम के कोई भी खरे पैसे नहीं देता। पूरा काम करके ही गिनकर खरे पैसे लूँगा।"

वे थोड़ी देर तक आपस में बक-बक, झक-झक करते रहे। फिर जोरदार ताकीद करके कुन्दनलाल और प्रदीप चले गए। मिस्त्री ध्यानसिंह काली के पास से गुजरा तो उसने बहुत नम्रता से बंदगी की। ध्यानसिंह रुक गया तो उसने हाथ जोड़ दिए, "मिस्तरीजी, एक विनती करनी थी।"

"बोलो।" ध्यानसिंह ने काली की ओर ध्यान से देखा। कंधे का बोझ हल्का करने के लिए बोरी नीचे पाँव के पास रख ली।

"मुझे काम चाहिए। कैसा भी हो। फाकों की मार झेल रहा हूँ।" काली ने अपनी हालत को अधिक से अधिक दयनीय बताने का यत्न किया ताकि मिस्त्री के मन में दया आ जाए।

मिस्त्री ध्यानसिंह ने एक बार फिर काली पर पूरी निगाह डाली जैसे उसके भीतर झाँकना चाहता हो। "कितने दिन हुए शहर में आए हुए ?"

"परसों रात को आया था। माँ-बाप, ताया-चाचा, फूफा-फूफी, बहन-भाई कोई नहीं है। इस दुनिया में अकेला हूँ। गाँववालों ने मार-मारकर निकाल दिया है।" काली गिड़गिड़ाया।

"किसी की बहन-बेटी को छेड़ा होगा। तभी तो निकाला गया गाँव से।" मिस्त्री ध्यानसिंह ने शक से काली की ओर देखा। "भीख माँगने का धंधा करना हो तो रेल लाइन के पार चले जाओ। भिखमंगों की झुग्गियाँ दूर से ही नजर आ

जाएँगी।··· बाकी काम करना है तो सब्र करो। शहर को देखो-भालो।··· शहर में हर परदेसी को चोर-उचक्का समझा जाता है। काम उसी को मिलता है जिसका कोई अपना सरनामा हो, कोई अता-पता हो, कोई बाली-वारिस हो। वहाँ तो लोग गली के बाहर के कुत्ते को भी टुक्कड़ नहीं डालते, परदेसी को काम के लिए घर में कैसे घुसने देंगे।"

"मैं तो इस शहर में पहली बार आया हूँ। यहाँ किसी को नहीं जानता।" काली ने बेबसी से सिर हिलाया।

"तो फिर गाँव वापस चला जा। जिसकी बहन-बेटी को छेड़ा है, उसके पाँव पर गिरकर माफी माँग लो और टूटे रिश्तों को फिर से गाँठ लो।" ध्यानसिंह ने सलाह दी।

"यह नही हो सकता।" काली ने बहुत निराश हो इनकार में सिर हिलाया।

मिस्त्री ध्यानसिंह सड़क की ओर मुड़ गया और दूर से एक आदमी को देख आवाजें देता हुआ उसकी ओर लपकने लगा, "ओ कशमीरया··· कशमीरया ओये।"

काली कारखाने की दीवार के साथ पीठ टिका और सिर को घुटनों पर रखकर बैठ गया। वह इतना ज्यादा निराश था कि उसे रोना भी नहीं आ रहा था। दीवार की नींव में एक बिल से एक चुहिया बाहर निकलती, चारो ओर फुदकती। पिछले पाँव पर खडी हो इधर-उधर झाँकती और फिर भागकर बिल में जा घुसती। धीरे-धीरे काली अपनी निराशा भूल चुहिया का खेल देखने में व्यस्त हो गया। उसे फुदकता देख काली के होंठो पर मुस्कान आ गई और जब वह अपने बिल में घुसी तो उसकी आँखे नमूदार हो गई। उसे चुहिया से ईर्ष्या होने लगी कि शहर में उसका अपना बिल और पहचान है। वह घुटनों पर हाथ रखकर यूँ उठा जैसे बहुत ज्यादा थक गया हो। फिर वह धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ बर्फ कारखाने के गेट के सामने आ खड़ा हुआ।

सूरज चढ़ने के बाद मालगोदामों और सड़क के दोनों ओर लोग बर्फ कारखाने के पास जमा होने लगे। उनमें अधिकतर लोग एक-दूसरे को जानते थे। वे आपस मे हँस हँसकर बातें कर रहे थे। कुछ छोटे-छोटे गिरोहों में बँटे बीड़ी-सिगरेट फूँक रहे थे। उनमें ज्यादातर लोग पच्चीस और पैंतीस साल के पेटे में थे। कुछ नौजवान भी थे और थोड़े से दाढ़ी-मूँछवाले बुजुर्ग भी।

वे सब अलग-अलग गिरोहों में बँट गए थे। राजगीर अलग थे। सफेदी तथा रंग करनेवालों की अपनी ही टोली थी। बढ़ई अपनी-अपनी बोरी लिए जरा परे हटकर बैठे थे और बेहुनर मजदूर एक तरफ बिखरे हुए थे। वे सबसे अलग और निराश दिखाई दे रहे थे जैसे उन्हें कई दिनों से पेट-भर खाना नहीं मिला था या फिर ज्यादा मेहनत-मशक्कत करने से उनके शरीर सूख गए थे।

धीरे-धीरे लोग वहाँ आने शुरू हो गए। वे घूमते हुए सब पर सरसरी-सी नजर

डालते और जान-पहचान के व्यक्ति की तलाश में आगे निकल जाते। या फिर वह बातचीत में उसका हसब-नसब, निवास, तजुरबे की जानकारी प्राप्त करने के बाद अपने काम का कारीगर चुन लेते। कारीगर भी अपनी साख बताने के लिए उस व्यक्ति के बाजार या मुहल्ले के मोतबर व्यक्तियों का पूरा विवरण, घर का नंबर, गली का नाम इत्यादि बताते।

मजदूरों के मामले में पड़ताल और भी कड़ी थी। उनमें बाकी बातें बराबर होने पर तन्दुरुस्ती को पहल दी जाती थी।

मजदूर लगाने के इच्छुक एक-दो व्यक्तियों ने काली की ओर भी आँख भरकर देखा तो उसे आशा बँधी और अचेतन में ही उसकी छाती और भी चौड़ी हो गई और बाँहों की मछलियाँ फड़कने लगीं, लेकिन अजनबी और बिलकुल देहाती चेहरा देख वे भी आगे बढ़ गए।

कोई आधे घंटे में ही मंडी खत्म हो गई। बहुत-से कारीगरों और उनके साथियों को काम मिल गया। बाकी निराश हो इधर-उधर बिखर गए। कुछ लोग मालगोदामों की ओर चले गए लेकिन वे अभी दूर ही थे कि वहाँ से किसी ने ऊँची आवाज में सूचना दी, "यहाँ हाजरी पूरी है। इधर आने की जरूरत नहीं है।"

सब उलटे पाँव ही बर्फ कारखाने की ओर आ गए और गेट के अंदर घुस गए। काली भी उनके पीछे-पीछे चला गया। वे लोग गेट के अंदर खड़े उत्सुकता से दफ्तर की ओर देखने लगे। जब वहाँ से कोई बाहर नहीं आया तो कुछ लोग जमीन पर ही बैठ गए और कुछ दीवार के सहारे खड़े रहे।

कारखाने के अदर से आवाजें सुनाई दे रही थीं लेकिन बाहर कोई नहीं आ रहा था। जब एक मोटरकार हार्न बजाती हुई गेट के अंदर दाखिल हुई तो कई लोग कारखाने के भीतरी हिस्से से भागकर बाहर आ गए। अधेड़ उम्र का एक व्यक्ति जो बर्फ कारखाने का मैनेजर था, कार के पास गया और उसने कार के अंदर बैटे व्यक्ति को बहुत झुककर बंदगी की और फिर उसकी हर बात के उत्तर में हाथ जोड़कर बहुत नम्र स्वर में··· "जी सर··· हाँ जनाब··· जी बहुत बेहतर"··· कहता रहा।

मोटर हार्न बजाती हुई गेट से बाहर चली गई तो वही व्यक्ति कुछ लोगों के नाम बहुत रोब से पुकारने लगा। गेट के पास बैठे और दीवार के साथ खड़े लोगों को देख वह भड़क उठा। "यहाँ क्यों भीड़ लगा रखी है ? हमें मजदूरों की जब भी जरूरत होगी, बोर्ड पर नोटिस लगा दिया जाएगा। भागो यहाँ से। कैसे लामबंदी करके खड़े हैं।"

मैनेजर की करख्त आवाज सुन कारखाने के कुछ कर्मचारी गेट के पास खड़े लोगों की ओर बढ़े लेकिन वे लोग उनके पहुँचने से पहले ही वहाँ से खिसक गए। सिर्फ एक व्यक्ति बहुत इत्मीनान से अपनी जगह पर डटा रहा। एक कर्मचारी

उसके पास बाजू लहराता हुआ गया, "तुम्हें मैनेजर साहब का हुक्म सुनाई नहीं दिया जो अभी तक समाधि लगाए बैठा है ?"

"चला जाता हूँ। पेट खाली हो तो टाँगों में भी ताकत नहीं होती।" उस व्यक्ति का स्वर बहुत तल्ख था।

"टाँगें खड़ी नहीं होतीं तो सड़क पर जाकर लेट जा।" कर्मचारी ने व्यंग्य किया। "सारी उम्र के लिए ताकत आ जाएगी।"

"बंदे की तरह बात कर। मैंने तेरा कुछ उठाया या चुराया नहीं है।" वह व्यक्ति अकड़ गया।

"भूखा मर रहा है लेकिन अकड़ बदस्तूर कायम है।" कर्मचारी ने दाँत पीसते हुए उसे गेट की ओर धकेल दिया।

काली बेहद निराश था। सब लोग इधर-उधर बिखर गए थे। वह सड़क से थोड़ा पीछे हट इस दुविधा में फँसा रहा कि कहाँ जाए। मजदूर मंडी में तो उसका मोल नहीं पड़ा। वह एक बार फिर मालगोदामों की ओर चला गया और एक पेड़ के नीचे बैठ गया। सामने के गोदाम से दो मजदूर एक रेढ़े पर छोटी-बड़ी बोरियाँ लाद रहे थे।

कुछ और आगे एक पेड़ के नीचे दो ढेरियाँ बनी हुई थीं।

पल्लेदार दोनों ढेरियों से बराबर माल उठा उसे आपस में अच्छी तरह मिलाता और तीसरी ढेरी पर फेंक देता।

"क्या हेराफेरी हो रही है ?" पीठ पर छोटी बोरी टिकाए एक पाण्डी ने पूछा।

"गरम मसाले की तेजी नरम कर रहा हूँ।" पल्लेदार मुस्कराया।

"गरम मसाले में क्या मिला रहे हो ?"

"पक्का तो रब जाने या लाला। मुझे तो घोड़े की लीद लगती है।"

"क्यों लोगों की जान लेने पर उतारू हो ?... बहेड़ा पीसकर मिला दिया करो। सस्ता मिल जाता है।" पाण्डी ने सलाह दी।

"बादाम की गिरी में तू क्या मिला रहा है ?" पल्लेदार ने पूछा।

"खुबानी की गिरी।" पाण्डी मुस्कराया, "दोनों की शकल मिलती है।"

गोदाम से गोल टोपी, कमीज और पाजामा पहने एक लाला बाहर निकला तो पल्लेदार अपनी बातचीत छोड़ काम में व्यस्त हो गए। हाथ में पकडे कागजों के पुलिंदे पर सरसरी नजर डाल वह इधर-उधर झाँकने लगा।

पेड़ के नीचे काली को शिकारी कुत्ते की तरह पंजों के बल बैठा देख वह घबरा गया। उसने दोनों मजदूरों को अपने पास बुला लिया। काली की ओर इशारा कर उसने रोब से पूछा, "यह कौन आदमी है। यहाँ क्यों बैठा है ?"

उन्होंने सिर हिला लाइलमी जाहिर की तो लाला भड़क उठा, "गिरी बादाम की एक बोरी कम-से-कम चार-साढ़े चार सौ रुपये की है। अगर माल चोरी या

खुर्द-बुर्द हुआ तो मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगा। सारी उम्र हरजाना नहीं दे सकोगे। मैं तो आज सहबन गोदाम देखने आ गया। बाहर के आदमी का यहाँ क्या काम ?"

फिर वह गरम मसाले की ढेरियों की ओर देख चिल्लाया, "व्यापार में सौ पर्दे होते हैं और तुम लोग बाहर के आदमी को यहाँ बेरोक-टोक आने-जाने देते हो।"

दोनों मजदूर हाथ झाड़ते हुए काली की ओर यूँ लपके जैसे उस पर हमला करना चाहते हों। उन्हें अपनी ओर आता देख वह हड़बड़ा गया और बाँहें फैला लीं जैसे उनके हमले का मुकाबला करने की तैयारी कर रहा हो।

"कौन है तू। और यहाँ क्यों बैठा है ?" एक मजदूर ने रोब से पूछा।

"मेरा नाम काली है। मैं मजदूरी की तलाश में यहाँ आया था।"

"बैठा तो यूँ था जैसे तेरे मुँह को छुआरा लगाने के लिए थाल उठाए हुए कोई आनेवाला है। बाहर के आदमी का गोदामों के पास आना मना है। भाग जा यहाँ से वरना टाँगे तोड़कर सड़क पर फेंक देंगे।" दूसरे मजदूर ने धमकी दी।

काली चादर को कंधों के गिर्द लपेट गर्दन झुकाए हुए वहाँ से चल दिया।

"हूँ ! भाग आते हैं गाँव से पैसे की तलाश मे जैसे शहर मे नोट पेड़ों से लगते हैं।" एक मजदूर ने कटाक्ष किया।

धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ काली सड़क के किनारे आ खडा हुआ। सूरज आकाश मे काफी ऊपर आ गया था। किरणों से स्टेशन के पार तेल के बहुत बड़े-बड़े और ऊँचे सफेद जखीरे बहुत रौशन हो आँखों को चुँधिया रहे थे और ऐसा प्रतीत होता था कि वहाँ नूर फट पड़ा है।

सड़क के किनारे खड़ा-खडा काली ऊब गया तो वह पुरानी रेलवे रोड पर चल पड़ा। आरामशीनो और इमारती लकड़ी की दुकानो के सामने सड़क की दूसरी ओर उसे तदूर दिखाई दिया। वह वहाँ चला गया। तंदूर के साथ दो बडे सुराखों के ऊपर एलूमीनियम के पर्नाले पड़े थे। थोड़ा हटकर पानी का घडा और एलूमीनियम के चार-पाँच गिलास रखे थे। कच्छा और फटी हुई मैली बनियान पहने एक व्यक्ति खुद ही तंदूर में रोटी लगा रहा था और साथ-साथ परोस भी रहा था। उसके सामने आरामशीनों में काम करनेवाले चार व्यक्ति पंक्ति बनाकर बैठे थे। उनके सामने कटोरियों में दाल पड़ी थी और तंदूरवाला रोटियाँ सेंक लोहे की छड़ी से बाहर निकालता और उनकी ओर फेंक देता। वे चारों जने रोटी खाकर उठ गए। तंदूरवाले ने हिसाब जोड़ पैसे लिए और पाँव के नीचे पड़ी बोरी की तह में दबा दिए।

काली ने अनुमान लगाया कि इस तंदूर पर ढाबे की निस्बत खाना सस्ता मिलना चाहिए। यह सोच उसकी भूख चमक उठी। वह जमीन पर चादर रख उसके ऊपर ही बैठ गया। तंदूरवाले को अपनी ओर आकर्षित पा काली ने पूछा, "क्या भाव

रखा है ?"

"स्पेशल सब्जी आलू-टमाटर—बड़ी प्लेट एक आने की। देसी घी का तड़का दाल में एक आना।··· रोटी एक पैसा। साथ में चने की सादा दाल मुफ्त। बोलो, क्या दूँ ?"

"थोड़ा ठहरो···। विचार कर लूँ।" काली ने उसे रुकने का इशारा किया।

"किससे विचार करना है ?" तंदूरिए ने काली को अकेला देख हैरान हो पूछा।

"अपने-आपसे···। और फिर जेब से।" जेब में हाथ डाल काली कपड़े में बँधे पैसों की गोलाई-चौड़ाई को महसूस करने लगा। अचानक उसके जेहन में दूध-जलेबी का स्वाद आ गया। वह सोचने लगा कि दाल को देसी घी का तड़का लगवा ले। लेकिन यह सोच इरादा छोड़ दिया कि उसने रात में खाना नहीं खाया था। देसी घी के तड़केवाली दाल के साथ रोटी खाने से तंदूरवाले की आटे की परात और उसकी जेब खाली हो जाएँगी।

काली ने तंदूरिए की ओर देखा। "दाल-फुल्का ही दो।"

"कहो तो आधा तड़का लगा दूँ।" तंदूरिए ने काली को असमंजस में देख सुझाव दिया। "सिर्फ एक टका लगेगा।"

"नहीं, सादा दाल-रोटी ही दो। वक्त आया तो डबल तड़के की दाल भी खाऊँगा।" काली मुस्करा दिया और रोटी के इंतजार में हाथ मसलने लगा।

रामू ने एक पतीले से कटोरी में दाल डाली और छाबे में पड़ी दो रोटियों में कच्चा प्याज रख काली के हाथ में थमा दी। काली ने प्याज को घुटने पर रखकर उस पर जोर से बंद मुट्ठी मारी और प्याज फटकर फूल की तरह खिल गया।

"कितनी रोटी खाओगे ?" तंदूरिए ने पूछा।

काली ने रोटी का एक बड़ा निवाला तोड़ा और दाल में भिगो मुँह में रख लिया और फिर प्याज का एक टुकड़ा रोटी के साथ चबाने लगा।

रोटी का स्वाद महसूस करके काली बोला, "चार रोटी तो लगा ही दो।"

"चार और या दो और ? दो रोटी तो तेरे हाथ में हैं।" तंदूरिए ने इशारा किया।

काली एक क्षण सोच में पड़ गया। वह एक बार फिर पेट की भूख और जेब में पड़े पैसों के द्वंद्व में फँस गया। एक क्षण में उसने हिसाब लगाया और रोब से सिर झटक दिया, "चलो, चार और लगा दो।"

तंदूरिए ने परात में पड़े आटे से चार पेड़े बनाए और टप-टप की आवाज पैदा करते हुए उन्हें गद्दी पर टिका तंदूर की दहकती दीवार के साथ चिपका दिया। और गद्दी पाँव में रख लोहे की सलाख से उठा ली। रोटियाँ पक गईं तो उसने लोहे की सलाख से उन्हें तंदूर की दीवार से उतारा और नीचे पड़े कोयलों पर रख दिया। "नर्म चाहिए या कड़क।"

"कड़क।" काली ने एक बड़ा निवाला मुँह में डालते हुए कहा।

तंदूरिए ने रोटियों को कुछ क्षणों के लिए दहकते कोयलों पर ताप दिया। फिर उन्हें बारी-बारी बाहर निकाला। रोटियों का ऊपरी हिस्सा जलकर काला पड़ गया था। उसने रोटियों को थपथपाकर राख उतार दी और एक-एक करके काली की ओर फेंकता हुआ बोला, "लो, एकदम कड़क हैं।"

"यह तो जल गई हैं।" काली ने रोटियों के रंग की ओर इशारा किया।

"अगर जली होतीं तो इनका धुआँ निकल गया होता। इतनी कड़क रोटी किसी और तंदूर पर नहीं मिलेगी।" तंदूरिए ने विश्वासपूर्ण स्वर में कहा।

काली ने आठ रोटियाँ खाईं और दो गिलास पानी पिया और दो आने देकर जोर से डकार ली। उसे पहली बार महसूस हुआ कि शहर इतनी भयानक जगह नहीं है जितने उसे तीन दिन के अनुभव से प्रतीत हो रहा था। अगर यहाँ बर्फ कारखाने का मैनेजर और मालगोदाम का लाला हैं तो यहीं पर बरकत, मनसुख और तंदूरिया भी हैं। काली को विश्वास हो गया कि इस शहर में भी गरीब आदमी किसी-न-किसी तरह समा सकता है, निर्वाह कर सकता है।

उस समय तंदूर पर और कोई गाहक नहीं था। यह देख काली डटा रहा। तंदूरिए ने भी उसके जमे रहने पर कोई एतराज नहीं किया। काली ने डरते-डरते पूछा, "आप कहाँ रहते हैं ?"

"गर्मियों में तो यहीं सो जाता हूँ। बरसात और सर्दियो में अड्डा होशियारपुर में समाज का मंदिर है, वहाँ चला जाता हूँ।"

"वहाँ और जगह है। मतलब रात काटने के लिए ?" काली ने पूछा।

"वहाँ कोई सराय या धर्मशाला नहीं है। वहाँ कुछ कोठरियाँ और एक बड़ा दालान है। जमीन पर पड़े रहते हैं। चौकीदार बिस्तर अपनी कोठरी में रख लेता है।⋯ वह दो पैसे रोज के लेता है।"

"मेरे पास भी रहने की कोई जगह नहीं है। मेरा भी वहाँ बंदोबस्त करा दो।" काली ने हाथ जोड़े।

"बताया न कि वह सराय या धर्मशाला नहीं है। समाज मंदिर है। आजकल तो मैं भी वहाँ नहीं जाता। खुला मौसम है। यहीं पड़ा रहता हूँ। वैसे भी वह मानेगा नहीं। मुझे तो वह इसलिए रख लेता है क्योंकि वह मेरे इलाके का है। फिर हमारी बिरादरी भी एक है।" तंदूरिए ने विस्तार से बताया।

काली खामोश हो गया और गहरी सोच में डूबा हुआ कुछ समय के बाद बोला, "अगर आप कहो तो मैं भी रात यहीं आपके संग काट लिया करूँ। दो आदमी होंगे तो दिल भी लगा रहेगा।"

तंदूरिए ने काली की ओर ध्यान से देखा। फिर उसने लोहे की छड़ी उठा ली, "न जान न पहचान, मैं तेरा मेहमान। दो आने का खाना खाकर तू मेरे साथ

रिश्तेदारी गाँठ रहा है। रात में मेरे पास चार आदमी और भी होते हैं। मेरे ही गाँव और बिरादरी के। जा भाई, अपना काम कर।" तंदूरिए ने दो व्यक्तियों को आते देख सख्त लहजे में कहा। "सरनामे के बिना तुम्हें शहर में कोई अपने पास फटकने तक नहीं देगा। सरनामा बनता है घर-घाट से, रिश्तेदारों-संबंधियों से, दोस्त-मित्रों से। पहले अपना सरनामा बताओ। फिर बात करो।"

काली रुआँसा-सा हो तंदूर से उठ गया और तेज कदमों से सड़क पर आ गया। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था और पेट भर खाना खाने के बावजूद टाँगें उसके धड़ के बोझ को उठाने में असमर्थ थीं। वह पाँव घसीटता हुआ रेलवे स्टेशन के पास लुधियाना के बस अड्डे की ओर चल पड़ा। अड्डे के सामने पहुँच वह रुक गया और दूर खड़ा बरकत और उसके साथियों की आवाजें पहचानने की कोशिश करने लगा। फिर बरकत पर नजर पड़ते ही काली के शिथिल शरीर में एकदम स्फूर्ति आ गई। उसे दिन पहले से भी ज्यादा रोशन दिखाई देने लगा और वह लपकता हुआ बरकत की ओर बढ़ गया।

बरकत ने एक नजर काली की ओर देख उसकी ओर पीठ घुमा ली और ड्राइवर से बात करता रहा। काली उसकी प्रतीक्षा में काफी देर तक खड़ा रहा लेकिन जब उसकी बातें खत्म होने में नहीं आईं तो वह मनसुख को नल के पास खड़ा देख वहाँ चला गया।

मनसुख ने उसकी ओर आँख उठाकर देखा, "कहीं काम मिला ?"

"नहीं।" काली ने बहुत निराश हो सिर हिला दिया।

"इतनी जल्दी तो बहुत खरी किस्मतवाले को ही काम मिलता है। हिम्मत रख। एक-न-एक दिन काम जरूर मिलेगा।" मनसुख ने काली का हौसला बढ़ाया और फिर गेट के पास खड़ी खाली बस की ओर बढ़ गया।

बरकत ने मनसुख को काली से बात करते हुए देख लिया था। उसने मनसुख को अपने पास बुलाया और थोड़ा सख्त लहजे में बोला, "इसको इतना मुँह मत लगा। पता नहीं कौन है। किन हालात में घर और गाँव से भागकर आया है।"

"कल तो तू उसके साथ ऐसे प्यार जता रहा था जैसे अचानक ही देर से बिछड़ा हुआ सगा-संबंधी मिल गया हो।" मनसुख ने कटाक्ष किया।

बरकत ने मनसुख के कटाक्ष की चुभन को महसूस किया। वह क्षणभर खामोश रह उसकी ओर तीखी नजरों से देखने लगा, "मैंने तो गरीब और अनजान जानकर रोटी खिलाई थी। तूने क्या जानकर उसकी दूध-जलेबी से सेवा की ? मेरे मुँह से कुछ और निकल गया तो तू आग-बबूला होगा।"

अपने गुस्से को दाँतों-तले पीसता हुआ बरकत आगे बोला, "इसे अभी गले से उतारकर परे फेंक दो। पता नहीं कौन है, कहाँ का है ? आजकल तो घर के आदमी का भी भरोसा नहीं किया जा सकता।··· उस्तादजी को पता चल गया

कि हमने अड्डे को सराय बना दिया है तो वह हम सबको धक्के देकर निकाल देगा। पहले ही चोरी के इल्जाम से बहुत मुश्किल से बचे हैं।"

"कैसी चोरी ? किसने की ?" मनसुख घबरा गया।

बरकत और मनसुख को इकट्ठे देख तोखा और सोमा भी वहाँ पहुँच गए। उनकी देखादेखी काली भी हौसला करके उनके नजदीक खिसक आया। बरकत को बंदगी करने के लिए काली ने होंठों पर मुस्कान ला माथे की ओर हाथ उठाया ही था कि बरकत ने उसे झिड़क दिया, "क्यों साँड की तरह हमारे ऊपर चढ़े आ रहे हो। बात करने दो ?"

काली सहम गया और एकदम सिकुड़ता हुआ पीछे हट गया। उसकी ओर देख बरकत ने कहा, "किसी को कंधे पर हाथ रखने दो तो वह छाती पर गोडा धरने की कोशिश करने लगता है।"

बरकत कुछ क्षण चुप रहा। फिर सबकी ओर देखते हुए चेतावनी दी, "उस्ताद जी बहुत नाराज था। लगता था कि हम सबकी छुट्टी कर देगा।"

"क्या हुआ ?" सबने घबराकर एक आवाज में पूछा।

"इधर पीछे कोठड़ी है न··· जहाँ मोबिल के खाली डिब्बे, टूटी हुई केनियाँ और बाकी कचरा पड़ा रहता है।"

"हाँ।" उन्होंने सिर हिलाया।

"सुबह उस्तादजी अड्डे का चक्कर काट रहे थे। कोटड़ी की साँकल गिरी हुई थी और खुला ताला लटक रहा था और उसमे चावी नहीं थी।"

"अच्छा।" हैरानी से सबके होंठ खुले रह गए।

"उस्तादजी ने शोर मचा दिया कि कोठड़ी में चोरी हो गई है। अब रात में हमी में से यहाँ एक आदमी रहता है। ड्रैवर-क्लीनर वर्कशाप में होते हैं। गाड़ी की छत या गाड़ी के अंदर दो सीटें जोड़कर सो जाते हैं।"···

"फिर क्या हुआ ?"

"होना क्या था। उस्ताद गालियाँ देने लगा। अड्डे के सब लोग वहाँ इकट्ठे हो गए। कोठड़ी का दरवाजा खोलकर देखा। धूल से अटे मोबिल के खाली डिब्बे और केनियाँ पड़ी थीं।··· नत्थासिंह ड्रैवर ने बताया कि कल शाम वर्कशाप का पोस्ती बलकारसिंह कोठड़ी का ताला खोल रहा था। बलकारसिंह को वर्कशाप से बुलाया गया। उसने मान लिया कि उसने मोबिल का खाली डिब्बा निकालने के लिए ताला खोला था। अपनी ओर से ताला बंद भी किया था लेकिन झोंक और पिनक में शायद खुला रह गया होगा। उसने जेबों में हाथ मारा। पतूही की छोटी जेब से चाबी मिल गई और उस्तादजी का गुस्सा ठंडा हुआ। चाबी न मिलती और पोस्ती अपना कसूर न मानता तो उस्ताद हमें तो सूली पर टाँग देता। सुना है अड्डे में रात को सबका सोना बंद हो रहा है और चौकीदारी के लिए एक गोरखा

रखा जा रहा है। सड़क की ओर पक्की दीवार बनेगी और उसमें लोहे का फाटक लगेगा और आखिरी बस जाने के बाद अंदर से फाटक को ताला लगा दिया जाएगा।" बरकत ने सूचना दी।

सब सोच में डूब गए तो बरकत सड़क की ओर बढ़ गया, "आओ, चाय पी लें।"

काली अड्डे के बाहर सड़क के किनारे बहुत गंभीरता से दाएँ-बाएँ देख रहा था जैसे आ-जा रहे ट्रैफिक का हिसाब लगा रहा हो। बरकत और अन्य लोगों को सड़क की ओर आता देख वह रेलवे रोड की ओर बढ़ गया। वह तेज-तेज कदम उठाता हुआ नई और पुरानी रेलवे रोड के चौक पर आ गया और बीच में बने छोटे-से चबूतरे पर जा खड़ा हुआ।

कंपनीबाग की याद आते ही काली की परेशानी कुछ दूर हुई और उसे राहत का एहसास हुआ। उसने सोचा कि सारे शहर में वही एक जगह है जहाँ सब लोग आजादी से घूमते-फिरते और उठते-बैठते हैं। इस जगह पर हर आदमी अपना हक समझता है।

सूरज की रोशनी से चमकती सड़क पर काली बड़े-बड़े डग भरता हुआ कंपनी बाग की ओर यूँ चल रहा था जैसे अपने घर जा रहा हो।

पाँच

रेलवे स्टेशन के निकट मण्डी फैंटनगंज के सदर दरवाजे के बाहर काली दीवार से पीठ टिका इस ढंग से जमीन पर बैठा था कि राहगीर भिखारी समझ उसकी झोली में या सामने खैरात में पैसा-टका फेंक दें। लेकिन किसी ने भी उसकी ओर फूटी कौड़ी तक नहीं फेंकी थी।

एक लँगड़ा भिखारी अपने अंधे साथी का हाथ अपने कंधे पर रखे काली की ओर बढ़ने लगा तो वह घबरा गया। वहाँ से उठ काली चादर को यूँ जोर-जोर से झाड़ने लगा जैसे वह मिट्टी से सन गई थी।

भिखारियों ने "बाबा, एक पैसे खैर। दूध-पूत की खैर, बच्चों की खैर" की सदा लगाते हुए काली की ओर अपना बर्तन बढ़ाया लेकिन रुके नहीं। वह उनकी ओर देखता रहा। वह हर दुकान के सामने रुकते, एक ही सदा लगाते और बर्तन में गिरे सिक्के की खनक सुनते ही आगे बढ़ जाते।

काली उनकी ओर ध्यान से देखता रहा। वह सोचने लगा कि पेशा बुरा सही लेकिन इसमें कमाई तो है। लेकिन तंदूरिए की बात याद आते ही वह परेशान हो गया कि सरनामे के बिना शहर में कोई नहीं पूछता और पहचान के बिना सरनामा नहीं बनता।

बरकत के व्यवहार के बारे में सोच वह व्याकुल हो गया और तंदूरिए की बात उसे और भी ज्यादा वजनदार महसूस होने लगी। काली दिमाग पर जोर देने लगा कि इस शहर में उसके गाँव का कौन-सा परिवार या आदमी रहता है जिसका वह हवाला दे सके।

बहुत सोचने के बाद उसे याद आया कि एक बार उसने छज्जूशाह को कहते हुए सुना था कि पंडितों के रुलियाराम के छोटे बेटे जगन्नाथ ने ऐसा गाँव छोड़ा कि बिलकुल नाता ही तोड़ लिया। गाँव में उसका घर खँडहर बन गया है लेकिन उसने कोई सुध नहीं ली। छज्जूशाह ने यह भी बताया था कि जगन्नाथ बिजली के दफ्तर में खजानची था। रिटायर होने के बाद उसने जालंधर में ही अपना मकान बना लिया है और बच्चे नौकरी और कारोबार के सिलसिले में और भी आगे निकल गए हैं।

जगन्नाथ का ध्यान आते ही काली का कुछ हौसला बँधा। उसका दिमाग एक बार फिर काम करने लगा। शरीर में भी उसे स्फूर्ति महसूस होने लगी। वह सोचने लगा कि जगन्नाथ को कैसे और कहाँ तलाश किया जा सकता है। अगर उसने सुलह-सफाई से गाँव छोड़ा होता तो एक दिन के लिए वापस चला जाता और छज्जूशाह से जगन्नाथ का पूरा सरनामा ले शाम की गाड़ी से पलट आता। लेकिन गाँव को लौटना मौत के मुँह में जाना है। काली ने फैसला किया कि वह बिजलीघर से जगन्नाथ का सरनामा पता करने की कोशिश करेगा।

यह निर्णय ले काली बहुत हद तक संतुष्ट हो गया। लेकिन वह एक बार फिर बेहद परेशान और उदास हो उठा कि जगन्नाथ से गाँववालों को भी उसके बारे में पता चल सकता है और फिर वह किसी बहुत बड़ी मुसीबत में फँस सकता है।

काली इसी परेशानी और चिंता में फँसा हुआ था कि उसने रेलवे स्टेशन, बस अड्डे और मंडी फैंटनगज के बाहरी बाजारों में घूमनेवाले भिखारियों को आगे निकलने की होड़ में एक-दूसरे को धक्के और धमकियाँ देते हुए मंडी के अंदर घुसते देखा। वे सब बहुत जल्दी में थे जैसे वहाँ उनमें बहुत बड़ा खजाना बँटनेवाला था। उनमें मर्द, औरतें और बच्चे सभी शामिल थे। उनमें वे भिखारी भी थे जिन्हे काली स्टेशन और अड्डे के इर्द-गिर्द लँगड़े-लूलों और अंधों के रूप में देखता आ रहा था।

काली भी उनके पीछे-पीछे मंडी के अंदर चला गया। वे इतनी जल्दी में थे कि रेढ़ों और रेढ़ियों से टकरा चोट खाने के बावजूद भागे जा रहे थे।

वे सब मंडी के कोने में बड़ी-बड़ी दुकानों के सामने पहुँच एक-दूसरे में फँसकर बैठ गए और आपस में झगड़ते हुए हल्ला-गुल्ला करने लगे। सिर पर रंगदार साफा लपेटे, खुला कुर्ता और चादर पहने हुए एक पहलवाननुमा आदमी आगे बढ़ा और

उन्हें शांत रहने का उपदेश दे बोला कि सेठ रत्नचंद को सट्टे में आज बहुत फायदा हुआ है। इसलिए दान-पुण्य के लिए भिखारियों में भी भिक्षा बाँटी जाएगी।

"क्या मिलेगा भिक्षा में ? सेठजी तो बहुत दानवीर हैं।" एक बुजुर्ग भिखारी ने पूछा।

"बहुत बढ़िया खाना मिलेगा।" पहलवान ने बताया।

"खाने में क्या मिलेगा, दाता ?" एक भिखारिन ने गर्दन ऊपर उठाई।

"पूरी, आलू की भाजी और हलवा।"

भिखारियों में खुशी की लहर दौड़ गई और उनमें कौतूहल-सा मच गया।

"दाता, सेठजी पर भगवान की और भी ज्यादा कृपा होगी। उनसे कहो कि हमें एक-एक कंबल या रजाई भी दान में दें। भगवान उनके लिए अपने सब भंडार खोल देंगे।" एक और बूढ़े और बीमार भिखारी ने हाथ ऊपर उठा प्रार्थना की।

भिखारियों को आपस में झगड़ा करते और एक-दूसरे से पहले पूरी-भाजी पाने के लिए निरंतर आगे की ओर उचक-उचककर बैठते हुए देख पहलवान ने तीखे स्वर में चेतावनी दी, "आराम से बैठो। धीरज धरो। कहीं ऐसा न हो कि हलवा-पूरी की जगह डंडे खाने पड़ जाएँ।"

भिखारियों में मच रहा शोर कम हो गया लेकिन बिलकुल खत्म नहीं हुआ था। काली ने अपने पास खड़े एक नौजवान भिखारी से पूछा, "आप कहाँ रहते हो ?"

आप का सबोधन सुन भिखारी हैरान रह गया। उसने बहुत ध्यान से काली की ओर देखा। उसकी वेशभूषा और डीलडौल से वह इतना तो समझ गया कि वह भिखारी नही है लेकिन उसकी हैसियत के बारे में उसे कोई शक नहीं था। उसने तीखी आवाज में पूछा, "क्या न्योते पर बुलाना है ?"

"नहीं, वैसे ही पूछा है। आपका सरनामा क्या है ?"

भिखारी सोच में पड़ गया। कभी वह काली की ओर देखता और कभी जमीन को घूरने लगता जैसे मन में उफन रही शंका पर काबू पाने की कोशिश कर रहा हो। उसने रूखे स्वर में उत्तर दिया, "रेल लाइन के पार बिजलीघर के पीछे, झोंपड़ियों में। अब तो थोड़ी सुविधा हो गई है। एक दानवीर सेठ ने ठेके में बहुत पैसा कमाया और हमारी झोपड़ियों के पास एक नल लगवा दिया है। इससे पहले तो हम पुराने बिजलीघर की कच्ची तल्लैया का पानी ही पीते थे।"

"वहाँ कोई झुग्गी खाली हो या बनाई जा सकती हो ?" काली ने डरते-डरते पूछा।

यह सुन भिखारी चकित हो उछल पड़ा, "इस बारे में पक्की बात तो हमारा मुखिया ही बता सकता है। लेकिन वहाँ केवल हमारी बिरादरी के लोग ही रहते हैं। बाहर के आदमी के आने का प्रश्न ही नहीं उठता।"

भिखारी का जवाब सुन काली को बहुत निराशा हुई। उसे शक होने लगा कि यहाँ खड़े होने पर उसे शायद हलवा-पूड़ी भी नहीं मिलेगा। वह अभी इसी असमंजस में फँसा था कि क्षण-भर में सब भिखारी हैरान और क्रोध की मिली-जुली भावना से उसकी ओर देखने लगे। वह घबराकर वहाँ से हट गया और चक्कर काट उस स्थान पर चला गया जहाँ मैली कुर्तियाँ और कमर के गिर्द अँगोछे पहने या तहबंद को कमर से दोहरा बाँधे हुए कई रेढ़ा मजदूर सेठ रत्नचंद की दुकान की ओर दिलचस्पी से देख रहे थे।

काली उनके निकट जा खड़ा हुआ। लेकिन किसी ने भी उसकी ओर ध्यान नहीं दिया और वे टकटकी बाँध सेठ रत्नचंद की दुकान पर रौनक और चहल-पहल को बहुत ही चाव से देखने में व्यस्त रहे।

"कितना कमाया सेठ ने ?" एक मजदूर ने पूछा।

"हमने क्या रकम गिनकर देखी है ?" दूसरे ने हँसते हुए उत्तर दिया।

"लगता है बहुत बड़ी रकम मिली है।" एक अधेड़ उम्र के मजदूर ने अनुमान लगाया, "भाई, इतना बड़ा फायदा हो भी क्यों न। सुना है सेठ ने अपनी कोठी में ग्यारह पंडित बिठा रखे हैं जिनका काम सिर्फ उसके फायदे के लिए रबजी को खुश करना है। सेठ सारा-सारा दिन पाँधे-पंडितों, ज्योतिषियों और भाटड़ो को जन्मपत्री और हाथ दिखाता रहता है। वे जो भी उपाय बताते हैं, कराता है। सुना है हवन-यज्ञ और दूसरे पूजा-पाठ उसके घर में चलते ही रहते हैं।"

"एक दिन सेठ का मुनीम किसी को बता रहा था कि सेठजी पाँधे-पंडितों से पूछकर ही कपड़े पहनते हैं और संत का पता लगा कोठी से बाहर निकलते हैं।" एक और मजदूर ने सबको नजदीक बुला धीमी आवाज में रहस्योद्घाटन किया।

यह सुन एक नौजवान मजदूर ने, जिसके चेहरे पर अभी आधी दाढ़ी ही आई थी, सबको अपने निकट बुला लिया, "मैंने तो कुछ और भी सुना है।"

"क्या ?" कई धीमी आवाजें एकसाथ आईं।

"कि सेठजी हर रात नई लडकी लाते हैं।··· "

"कहाँ ?"

"शहर के बाहर बड़ी सड़क पर उनके बाग हैं। उसमें बड़ी कोठी है। वहाँ बारादरी भी बनी हुई है। सेठ आधी रात तक वहाँ रहता है। पंडित पत्री मिलाकर बताते हैं कि आज किस लड़की के साथ संभोग करने में फायदा होगा।"

"यह साला··· हर जगह अपना फायदा ही देखता है। घर में जो सेंध लगती है उसके बारे में पाँधे-पंडित उसे क्या कुछ नहीं बताते ?" एक बुजुर्ग मजदूर ने कुछ खिन्न स्वर में कहा।

"क्या हो गया तुम्हें। क्यों इतनी भड़क मार रहे हो ?" एक दूसरे बुजुर्ग मजदूर ने पूछा।

"क्या बताऊँ।" वह और भी खिन्न हो गया, "सब पाखंड है। सेठ आप रोज कहीं और सेंध लगाता है जबकि उसके अपने घर में डबल सेंध लग रही है।"

"बनवारी, कुछ बता भी ?"

"क्या बताऊँ।··· सेठ बारादरी में नित नई लड़कियों से मौज करता है और घर में सेठानी और जवान बेटी की पत्री रोज रसोइया और नौकर मिलाते हैं।" बनवारी फुसफुसाया।

"नहीं यार। ऐसा नहीं हो सकता।" दूसरे बुजुर्ग मजदूर दुल्लूराम ने शंका व्यक्त की।

"दुल्लूराम, बात अपने में ही रहे!" बनवारी ने भवें ऊपर चढ़ा लीं। फिर सबके चेहरों को आश्वस्त देख बोला, "सेठ के घर में रसोइया मेरे ही गाँव का पंडित मायाराम है। सेठ का मुनीम और गुमाश्ता सरेआम कहते हैं कि वह रोज सेठानी की पत्री देखता है।··· बड़े लोगों के ऐसे ही काम हैं।"

इन बातों में बनवारी को रस आ रहा था लेकिन पहलवान को अपनी ओर आता देख वह खामोश हो गया।

पहलवान निकट पहुँच गया तो बनवारी ने हाथ जोड़ दिए, "पहलवानजी, सेठजी को हम सबकी तरफ से बधाई दे देना। यह भी बता देना कि इन दुकानों के पाण्डी बधाई लेने के लिए उनके द्वार पर खड़े हैं।"

"आप सबको भी बधाई है।" पहलवान ने मुस्कराते हुए दोनों हाथ ऊपर उठा दिए, "सेठजी को सबका ख्याल है। और फिर तुम तो अपने आदमी हो। बनवारी, तेरी आँखों के सामने ही सेठजी मामूली दुकानदार से इतने बड़े रुतबे पर पहुँचे है। लाखों रुपये की जायदाद के मालिक बने हैं।··· सब नीयत की मुराद है।"

"ठीक कहते हो पहलवानजी।" बनवारी ने सिर हिलाया।

पहलवान उनको आश्वासन दे फिर दुकान की ओर चला गया तो बनवारी खिन्न हो उठा, "नीयत तो हमारी भी बहुत साफ है, लेकिन मुराद पूरी नहीं होती।"

"मुराद पूरी हुई तो है तेरी ?" दुल्लूराम ने उसका कधा थपथपाया।

"क्या मुराद पूरी हुई है ?" बनवारी तिलमिला उठा।

"पहले तू झोटे की जगह रेढ़े में आप जुतता था। अब झोटा जुतता है। तू झोटे से आदमी बन गया है। क्या यह छोटी मुराद है कि पशु जीवन से तू मनुष्य जीवन में आ गया है।" दुल्लूराम खिलखिला हँस दिया।

बनवारी को तुरंत कोई जवाब नहीं सूझा क्योंकि दुल्लूराम की बात सच्ची थी। कुछ क्षण सोच बनवारी बुझी हुई आवाज में बोला, "यह क्या खाक मुराद पूरी हुई है। जब तक सरीर में जान थी, खुद रेढ़े में जुतता रहा। अब जान नहीं रही तो झोटा जोतने लगा हूँ।··· साला, मेरे से ज्यादा खाता है। मैं तो नमक-पानी से भी रोटी खा लेता हूँ लेकिन उसके लिए हरे पट्ठे और वंड़-वड़ेगा जरूर चाहिए।"

"जान कितनी मारता है ? खाएगा नही तो दो दिन में ही बैठ जाएगा।"

बनवारी और दुल्लूराम की बातचीत में अंतराल आया तो मिट्ठू ने पूछा, "आज सट्टे में पिटा कौन है ?"

"कई पिटे हैं। लेकिन लाला बंगालीराम का सबकुछ लुट गया है। सुना है, दीवाला दे रहा है।" केशो ने बताया।

"अभी दो डाक्टर आए थे बंगालीराम को देखने। सुना है उसे गश पर गश पड़ रहे हैं। ठंडे पसीने छूट रहे हैं। उधर सेठानी की हालत भी बहुत खराब है। दो-दो हाथों से सिर पीट रही है। बाल-बाल उधार में बिंध गया है ना।" करमू ने कानों को छुआ।

"मुन्नयों, यही जिंदगी का खेल है। कहीं बाजे बजते हैं तो कहीं कीरने पड़ते हैं। कहीं बधाइयाँ मिलती हैं तो कहीं अर्थियाँ उठती हैं।" दुल्लूराम अंतर्मुखी हो दार्शनिक भाव से आकाश की ओर देखने लगा।

सेठ रत्नचंद की दुकान से कई लोगों को एकसाथ बाहर निकलते देख सब खामोश हो उत्सुकता से उस ओर झाँकने लगे। सेठ रत्नचंद का मुनीम और गुमाश्ता दो कदम छोड़ सेठ के पीछे-पीछे चल रहे थे।

सेठ बाकी लोगों के साथ पीछे ही रुक गया। लेकिन मुनीम और गुमाश्ता आगे आ गए। पहलवान भी उनके पीछे आ खड़ा हुआ। सब लोग दम साध यूँ खड़े थे जैसे शाही फरमान का इतजार था।

मुनीम ने चारों ओर देख दोनो हाथ ऊपर उठा दिए, "पहले तो सब दानवीर राय साहब लाला रत्नचद की जय बोलो।"

चारों ओर से 'सेठ रत्नचंद की जय' इतने जोर से गूँजी कि मण्डी के कई हिस्सों मे जमीन पर पडे अनाज के ढेरो पर चुगते हुए पक्षी उड़ गए और डार बना मण्डी में घूमने लगे। कव्वे काँ-काँ करते हुए बिजली के तारों और खंभो पर जा बैठे।

कुछ ही समय के बाद एक बार फिर वातावरण सामान्य हो गया। मुनीम ने आगे कहा, "दानवीर सेठ रत्नचंदजी को आज भगवान ने अपने हाथ से आर्शीर्वाद दे कुबेर महाराज के खजाने उनके लिए खोल दिए हैं। सेठजी पर अपार कृपा की है।"

मुनीम की बात सुन सब लोगों के मुँह हैरानी से खुले रह गए। सेठ रत्नचद के पास धन का अनुमान लगाते हुए वे अपने मुँह में आजादी से आ-जा रही मक्खियों को भी भूल गए। उन्हें इस मनःस्थिति से बाहर निकालने के लिए मुनीम की आवाज और भी ऊँची हो गई, "लेकिन सेठजी वह सारा धन अपने या अपने परिवार के ऊपर खर्च नहीं करेंगे। मंदिर में पंडितों के लिए ब्रह्मभोज का प्रबंध किया जा रहा है और साथ में उन्हें दक्षिणा के अलावा वस्त्र आदि भी दिए जाएँगे।

धोतियों और अँगोछों की गाँठें मंदिर में पहुँचाई जा चुकी हैं। मंडी में तमाम भिखमंगों, पाण्डियों और अन्य गरीब लोगों को पेट-भर हलवा, पूरी और भाजी मिलेगी।"

मुनीम की इस घोषणा का जोरदार तालियों से स्वागत किया गया और फिर एकसाथ कई आवाजें आईं, "मालिक, हमें भी कंबल-रजाई दी जाए।"

"सेठजी को हर व्यक्ति का ख्याल है।" मुनीम ने दोनों बाँहें फैला हाथ लहराया। "आप लोगों को पता ही है कि दानवीर राय साहब सेठ रत्नचंदजी बहुत बड़े प्रभु भगत हैं। वे सवेरे-शाम प्रभु-वंदना करते हैं। सवेरे पक्षियों को अपने हाथ से दाना-पानी डालते हैं। उन्होंने मण्डी के अंदर लक्ष्मी मंदिर बनाने का भी फैसला किया है ताकि भक्तों को प्रभु की आराधना के लिए बाहर न जाना पड़े। इसके अलावा गोशाला, अनाथ आश्रम और अंध विद्यालय को भी भारी दान देने का विचार है।" मुनीम ने जोर से ताली बजाई। गुमाश्ता और पहलवान को तालियाँ बजाते देख अन्य लोग भी सेठ रत्नचंद की जयघोष में शामिल हो गए।

तालियाँ बंद हो गईं तो मुनीम ने आदेश सुनाया, "अब आप सब लोग धीरज बाँधकर बैठ जाओ। दुकान के अंदर पूजा हो रही है। पूजा के बाद सेठजी मंदिर जाएँगे। भगवान की अपार कृपा के लिए उनका धन्यवाद करने के लिए पंडितों और कंजकों के लिए अपने हाथ से भोजन परोसेंगे और दक्षिणा-वस्त्र आदि देंगे। बाद में आप सब लोगों को हलवा, पूरी, भाजी का भोजन कराया जाएगा।"

मुनीम की बात सुन लोग खामोश तो हो गए लेकिन उन्हें यह चिंता सताने लगी कि पता नहीं ब्रह्मभोज कब खत्म होगा और उनकी बारी किस वक्त आएगी।

"चलो, एक फेरा लगा लें।" शेरसिंह ने खजानसिंह को सलाह दी।

"कहाँ फेरा लगाना है?" दुल्लूराम ने पूछा।

"लाला घसीटामल के गोदाम से खल की बोरियों का रेढ़ा दुकान पर पहुँचाना है।" शेरसिंह ने बताया।

"लगा लेना फेरा। पहले हलवा-पूड़ी तो खा लें। रोज-रोज ऐसा सट्टा नहीं लगता कि माया की बाढ़ आ जाए। फिर अपना फेरा तू ही लगाएगा। कोई और तो मार नही लेगा।"

शेरसिंह एक क्षण सोच में पड़ गया। फिर खजानसिंह से बोला, "तू भाग के झोटे को चारा डाल आ। कटा हुआ हरा चारा बोरी में पड़ा है।"

"अगर तूने अभी झोटे को चारा डाल दिया तो काम के वक्त वह जुगाली करने बैठ जाएगा।" दुल्लूराम ने चेतावनी की।

"दुल्लू, क्या हुआ है तुम्हें? मैं जो भी बात करता हूँ, तू उसे तुरंत काट देता है।" शेरसिंह ने खिन्न स्वर में आपत्ति की।

"तुम्हारी बात नहीं काटता। ठीक सलाह देता हूँ।" दुल्लूराम ने एक-एक शब्द पर जोर दिया।

शेरसिंह ने क्रोध में आँखें तरेर दुल्लूराम की ओर देखा लेकिन चुप रहा और हाथों से शरीर के अलग-अलग अंगों को इस तरह झाड़ने लगा जैसे गुस्सा उतार रहा हो। फिर वह गर्दन ऊँची उठा पंजों के बल खड़ा हो चारों ओर यूँ देखता रहा जैसे किसी को तलाश कर रहा हो। और फिर उसने दोनों पाँव पर शरीर का बोझ बराबर बाँट दिया, "पता नहीं पहलवान कहाँ चला गया। उसी से पूछ लेते कि हलवा-पूड़ी कब बँटेगा। फिजूल टैम तो बरबाद न हो।"

थोड़ी देर में ही पाण्डियों में से एक ने छींक मारी। भिखारियों में भी एक-दो को छींक आ गई और फिर दाएँ कोने से कई आदमियों के छींकने की आवाजें आने लगीं। दुल्लूराम ने भी जोर से छींक मारी, "लाला सौदागरमल की दुकान पर नसवार की उतरवाई हो रही होगी। जिस दिन नसवार उतारी जाती है, सारी मण्डी छींकने लगती है।"

"पहले तो फैसला हुआ था कि नसवार की उतराई या लदान सवेरे-सवेरे या शाम को देर गए हुआ करेगी।" शेरसिंह छींक को रोकने के लिए नाक को दबाते और मरोड़ते हुए सड़ूँ-सड़ूँ करने लगा था।

"कौन मानता है। सब चलता है। सवेरे फैसला होना है, उसी दिन शाम को बदल दिया जाता है।" एक और पाण्डी छींकने लगा था।

छींकने की आवाजें अब सिर्फ लाला सौदागरमल की दुकान या आस-पड़ोस से ही आ रही थीं।

"चलो यार, कुछ काम करें। कितनी देर तक इसी तरह निठल्ले खड़े रहेंगे।" एक नौजवान पाण्डी ने खिन्न हो सिर झटका।

"पता नही सेठजी हम पर कब दयालू और कृपालू होंगे।" दूसरा पाण्डी वहाँ से खिसक गया।

सेठ रत्नचद की दुकान के बाहर पहलवान को देख शेरसिंह और दुल्लूराम उसकी ओर बढ़ गए।

"पहलवानजी, हम पर कब कृपा होगी ?" दुल्लूराम ने हाथ जोड़ते हुए पूछा।

"अभी तो टैम लगेगा। सेठजी दुकान के अंदर महालक्ष्मी की पूजा कर रहे है। फिर वे मंदिर जाकर पंडितों और कंजकों को भोज कराएँगे, उसके बाद ही तुम्हारी बारी आएगी।" पहलवान ने कार्यक्रम का विस्तार दिया। "पहलवानजी, सेठजी आपके अखाड़े को भी दान दे रहे हैं या नहीं ?"

"जरूर देगे।… अखाड़ा है ही मण्डी का। मेरे अखाड़े के पट्ठों के यहाँ होते हुए किसी की है मजाल कि बिना इजाजत छींक भी मार जाए।…" पहलवान ने छाती तान ली, "एक बात बता दूँ…। जिस दिन अखाड़ा टूट गया, उस दिन मण्डी में भी अमन-चैन नहीं रहेगा। दिन-दहाड़े डाके पड़ेंगे।"

"पहलवानजी, फिर तो मण्डी के लालों को आपकी बहुत कदर करनी चाहिए।"

शेरसिंह ने कहा।

"कदर करते हैं तो मैं यहाँ बैठा हूँ।" अहंकार में पहलवान की आँखें तरेरी गईं, और नथुने फूल गए।

"पहलवान ने एक छोटा ट्रक बना लिया है। लड़का चलाता है। अगले साल तक एक और ट्रक बना लेगा।" दुल्लूराम ने शेरसिंह के कान में फुसफुसाया। "भाई, बिन फायदे के कोई किसी की कदर नहीं करता और फिर व्यापारी तबका··· ये तो मौका मिलने पर अपने बाप को भी चूना लगाने से नहीं चूकते।··· पिछले दिनों थोड़ा सेंक लगा इन्हें।" पहलवान ने छाती फुला ली।

"कैसा सेंक, पहलवानजी ?"

"तुम्हें नहीं पता ?" पहलवान ने अपना तहबंद दायीं ओर से दो उँगलियों से ऊपर उठा लिया।

"ना, इसे नहीं पता। उन दिनों यह बीमार था। इसे खून के दस्त आ रहे थे।" दुल्लूराम ने बताया।

"अच्छा··· अच्छा।" पहलवान ने तहबंद ढीला छोड़ दिया। "यहाँ लालों का बाहर के व्यापारियों के ट्रक ड्रैवरों से झगड़ा हो गया था। ड्रैवरों ने अपने हैण्डल, लाठियाँ और किरपानें निकाल ली थीं। मैं और मेरे पट्ठो ने ईंट-पत्थर मार-मारकर उन्हें मण्डी से भगा दिया था। पुलिस तो बहुत बाद में पहुँची थी।"

एक क्षण चुप रह पहलवान गोपनीय स्वर में बोला, "अगर फिर कभी ऐसा मौका आया तो गोली चलेगी।"

"गोली चलेगी तो जान का नुकसान भी होगा ?" शेरसिंह और दुल्लूराम की चीख़ निकल गई।

"मेरे और दो पट्ठो के लिए सेठ लसैंसदार बंदूकें खरीद रहे हैं। मैं तो फिर सेठजी के साथ ही रहा करूँगा।··· सेठजी बग्घी की सवारी भी छोड़ देंगे।" चारों ओर देख पहलवान फुसफुसाया, "चारों तरफ से खुली होने के कारण पर्दा नहीं रहता और हिफाजत भी मुश्किल हो जाती है। अब वह मोटर ले रहे हैं। बड़ी विलायती गाड़ी। दिल्ली के एक दलाल को मोटर लाने के लिए कह भी दिया है।"

पहलवान की बातें सुन वे भौचक रह गए।

"सेठजी, ज्योतिषियो और पंडितों से निपट लें तो मैं तुम्हारे बारे में बात करता हूँ।" पहलवान ने आश्वासन दिया।

"आप मालिक हैं। जैसा हुक्म हो।" दुल्लूराम ने हाथ जोड़ दिए।

इतने देर में सेठजी का गुमाश्ता भी दुकान से बाहर आ गया।

"तुम यहीं ठहरो। मैं गुमाश्ते से पूछता हूँ," पहलवान उसकी ओर बढ़ गया। फिर उसे अपने साथ ही उनके पास ले आया। उसने भिखारियों की भीड़ और

बिखर रहे पाण्डियों की ओर इशारा किया, "गुमाश्ताजी, इनका भी ख्याल रखो। दान-पुन का खरा लाभ तो इन्हीं से मिलेगा।"

"तुम्हारी बात ठीक है। लेकिन कौन मानता है। आदमी दयालु और कृपालू बनकर चींटे-चींटियों को दाने डालता है। पक्षियों के लिए अनाज फेंकता है। देसी घी लगा गौ को आटे का पेड़ा खिलाता है लेकिन आदमी का पेट भरते समय वह सोच में पड़ जाता है। हालाँकि चींटें-चींटियाँ और पशु-पक्षी उस तरह दानी, दयालू और कृपालू को नहीं पहचानते जैसे आदमी पहचानता है।··· फिर भी कोशिश करता हूँ। पता करके आता हूँ कि अभी पूजा कितनी देर चलेगी।" गुमाश्ता दुकान की ओर मुड़ गया लेकिन अगले ही क्षण पलट आया और हँसता हुआ बोला, "पंडितो का अपना धंधा है। जितनी लंबी पूजा होगी, दक्षिणा भी उतनी ज्यादा मिलेगी। मैं सवेरे से एक दुकान पर भी नहीं जा सका। कम-से-कम पचास दुकानों पर जाकर हिसाब-किताब बताना है।"

एक क्षण चुप रह गुमाश्ता, पहलवान की आँखो में झाँकने लगा, "एक काम हो सकता है।"

"क्या ?"

"ये सब काम-काजवाले आदमी हैं।" गुमाश्ते ने पाण्डियों की ओर इशारा किया, "जब सेटजी का हुकम होगा तो हम यहाँ आगवाला घंटा बजा देंगे। सबको अपने-आप खबर हो जाएगी।"

"इससे तो मण्डी मे भगदड मच जाएगी। लोग समझेगे कि आज कहीं आग लग गई है।" पहलवान ने आपत्ति की।

"इन लोगों के पेट में भी तो भाँवड़ भड़क रहे होंगे। तुम आग की बात कर रहे हो।··· यही ठीक है। फिर सेठ रत्नचंद का सितारा बहुत बुलंद है, सातवें आकाश पर पहुँचा हुआ है। कोई एतराज करेगा तो सेठजी का नाम ले देंगे। सब अपने-आप चुप हो जाएँगे।" गुमाश्ते ने बात स्पष्ट की। फिर उलाहना दिया, "पहलवान होकर इतना मत डरा कर। तेरा शरीर हाथी-जैसा और दिल चिड़ी जितना है। इतनी मामूली-सी बात को लेकर फिक्र मे पड गया है।"

"मेरा दिल तो बहुत बड़ा है। मैं तो सारी मण्डी में आग लगा दूँ। पीछे सँभालनेवाला चाहिए।" पहलवान ने हेकडी जताई।

"चलो, सबसे बोल दो। घण्टा वजने पर यहाँ आ जाएँ। काम-धंधेवाले आदमी हैं। अकारण टैम बरबाद कर रहे हैं।··· वैसे हलवाइयों को भी अभी टैम लगेगा।"

"कितने हलवाई लगाए हैं ?" पहलवान ने पूछा।

"शायद चार हैं। मण्डी के बाहर पहाड़िया हलवाई है न··· सागरचंद। उसे ठेका दिया है।"

"वही, जिसने पम्मा नाम का बदमाश पाल रखा है।" पहलवान ने भवें ऊपर

उठा दीं, "एक दिन मण्डी के अंदर भी भड़क मारने लगा। लेकिन उसे किसी ने समझा दिया कि खैर चाहते हो तो चुपचाप यहाँ से चले जाओ। यहाँ लाली पहलवान का हुक्म चलता है। अगर उसने देख लिया तो तुम्हें तेरे ही कड़ाहे में डालकर उबाल देगा।··· अब मिलता है तो गोडे हाथ लगाता है।" जोश में पहलवान के नथुने फूल गए और उसने तहबंद के दोनों कोने उँगलियों से पकड़ ऊपर उठा लिए।

गुमाश्ते की बात मान पहलवान ने घोषणा कर दी कि हलवा-पूड़ी बाँटने के पहले आगवाला घंटा बजाया जाएगा, उस समय आ जाना। यह सुन भिखारियों में निराशा फैल गई। लेकिन वे कुछ समय तक अपने-अपने स्थान से चिपके रहे। लेकिन जब सेठ रत्नचंद पंडितों, ज्योतिषियों, अपने सगे-संबंधियों, दोस्त-मित्रों और कारिन्दों से घिरा हुआ बग्घी में बैठ मण्डी से बाहर जाने लगा तो कई भिखारी एकसाथ उठे और बग्घी की ओर टूट पड़े। लेकिन लाली पहलवान के पट्ठों ने उन्हें रास्ते में ही रोक लिया।

"हमे सेठजी के दर्शन करने हैं। भिक्खिया भी लेनी है।" एक बूढ़े भिखारी ने हाथ जोड़े।

"सेठजी इस वक्त नही मिल सकते। तुम पीछे हटो··· यहाँ बदबू मत फैलाओ।" पहलवान के पट्ठो ने उन्हें पीछे धकेल दिया।

काले-कलूटे, दुबले-पतले और लगभग नंग-धड़ंग भिखारी पीछे हट गए। लाली पहलवान का एक पट्ठा उनकी ओर बहुत ध्यान से देख हँस दिया, "एक मुट्ठी मे मै दो-दो को तो आसानी से दवा सकता हूँ। साले सलाई की तरह पतले हैं।"

पहलवानों के डर के मारे भिखारी और भी पीछे हट गए। हाँफता हुआ बूढ़ा भिखारी जमीन पर ही बैठ गया। साँस दुरुस्त करने के लिए उसने दोनों हाथ पीछे टिका दिए। उसका एक हाथ ताजा गोबर में जा पडा। हाथ खींच उसे साफ करने के लिए जमीन पर रगड़ने लगा, "पैसा क्या आया, सेठजी भी भगवान बन गए हैं। अपनी इच्छा से ही दरसन देंगे।"

बूढ़े और कमजोर भिखारी खाली जगह पर जा बैठे जबकि बाकी भिखारी भीख माँगने के लिए मण्डी में फैल गए।

काली भी घुटनों पर हाथ रख उठ गया और चारों ओर देखने लगा। मण्डी के खुले चौकोर आँगन में जगह-जगह अनाज और अन्य वस्तुओं से भरी बोरियों की धाँगें लगी हुई थीं। कहीं पर लकड़ी की पेटियों का ऊँचा और चौड़ा चबूतरा-सा बना दिया गया था। कई जगह अनाज और दाने के खुले ढेर पड़े थे। मण्डी में शायद ही कोई खाली स्थान था। लोग रेढ़ों, रेढ़ियों, आवारा पशुओं, और गोबर-गंदगी से बचते-बचाते आ-जा रहे थे।

मण्डी की अपनी विशेष गंध थी जो ज्यादा हिस्सों में दुर्गंध और कहीं-कहीं

महक देती थी। अनाज-दाने के खुले ढेरो पर गोशाला की आवारा गायें, साँड और बछड़े मुँह मारते। पाण्डी उनको डराने-धमकाने के लिए लाठियाँ लहराते तो पशु मुँह में दबाये हुए दाने चारों ओर बिखेरते हुए भागते तो मण्डी के उस हिस्से में कुछ समय के लिए भगदड़-सी मच जाती। लेकिन जल्दी ही वातावरण एक बार फिर सामान्य हो जाता।

काली इस परिवेश को देख इतना हैरान था कि उसके अंदर भूख का एहसास मिट गया। उसे यूँ महसूस होने लगा कि कानपुर में बिताए छः साल गाँव के जीवन-जैसे ही थे। मिल से कोठड़ी में और कोठड़ी से मिल तक का ही फेरा रहता था। वाहर के जीवन की कोई अनुभूति ही नहीं थी।

यह मण्डी उसे बहुत ही विचित्र लग रही थी। इसका अपना अलग ही संसार था। यहाँ आदमी पलों में लखपति बनकर आतिशबाजी की तरह आकाश में जा भगवान की तरह अदृश्य हो जाता है। या फिर पल-भर में ही लखपति से कंगाल हो अपने ही पसीने मे नहाता हुआ गश खाता-खाता गरीबी और गुमनामी के पाताल मे खो जाता है।

मण्डी में कई साधु भी हाथ मे कशकोल और त्रिशूल थामे हुए घूम रहे थे। वह हर दुकान पर जा अलख जगाते और दक्षिणा ले आगे बढ़ जाते। एक साधु ने हनुमान का भेस बनाया हुआ था और कमर के नीचे लंबी पूँछ भी बाँधी हुई थी। एक साधवी ने काली मा का भेस धारण किया हुआ था। उसके काले पुते चेहरे, बाजुओं और काले कपड़ों में सिर्फ लाल-लाल आँखें ही अलग दिखाई दे रही थी।

मण्डी के कुएं के पास खड़ा काली ये सब दृश्य देख रहा था कि एक कोने में लड़ाई-झगड़े की ऊँची आवाजें और चीखें सुनाई देने लगी। थोड़ी ही देर में त्रिशूल और खण्डाधारी साधु अपनी-अपनी कशकोल बगल मे दबाए हुए उस ओर भाग गए।

काली भी तेज कदम उठाता हुआ उनके पीछे चला गया। और भी कई लोग वहाँ इकट्ठे हो गए। वहाँ भिखारियों मे झगड़ा हो रहा था। त्रिशूल और खण्डाधारी साधु और हनुमान, काली माता और अन्य देवी-देवताओं का रूप धारण किए हुए साधु और साधवियाँ भी झगड़े मे शामिल हो गए थे और वे अपने त्रिशूल और खण्डे भिखारियों को डराने के लिए खतरनाक तरीके से लहरा रहे थे।

"यह कैसा झगड़ा हो रहा है ?" बाहर से आए एक व्यापारी ने मण्डी के एक गुमाश्ते से पूछा।

"मण्डी के भिखारियों और बाहर से आए भिखारियों का झगडा है।" गुमाश्ते ने बताया।

"इन्हे कौन-सी जायदाद बाँटनी है जो आपस मे खूनोखून हो रहे हैं ?" बाहर

के व्यापारी ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"यही तो झगड़ा है। बाहर के भिखारी मण्डी में आ गए हैं। और मण्डी के भिखारी उन्हें बाहर निकाल रहे हैं क्योंकि वे समझते हैं कि मण्डी में भीख माँगने का केवल उन्हीं का अधिकार है।"

दिसावर का व्यापारी मण्डी और बाजार के भिखारियो में हो रहे झगड़े को दिलचस्पी से देख रहा था। एक थड़े पर खड़ा काली भी हैरान-परेशान हो कभी इधर देखता और कभी उधर झाँकता। मण्डी के भिखारियों की मदद पर त्रिशूल और खण्डाधारी बहरूपियों के आ जाने से उनका पलड़ा भारी हो गया था। और बाहर के भिखारी गिरते-पड़ते और चीखते-चिल्लाते बड़े दरवाजे की ओर भाग रहे थे।

मण्डी के पहलवानों ने बीच-बचाव करके भिखारियो के दोनों गिरोहों में फैसला करा दिया कि बाहर के भिखारी मण्डी के अंदर प्रवेश नहीं करेंगे और अगर हलवा-पूड़ी बच गया तो बड़े गेट के बाहर उनमें भी बाँट दिया जाएगा।

इस फैसले के बाद मण्डी में हालत एक बार फिर सामान्य हो गई और सब लोग अपने-अपने काम मे व्यस्त हो गए। काली का दिल डूबने लगा कि शहर इतना विशाल होकर भी कितना संकीर्ण है। बुरी तरह बँटा हुआ है। इनका बस चले तो अपने-अपने इलाके की धूप, हवा और पानी भी अलग-अलग बाँट लें।

उसे महसूस हुआ कि यह मालूम होने पर कि वह भी बाहर का आदमी है, मण्डी के पाण्डी और पहलवान उसे भी धक्के दे सड़क पर फेंक देंगे। और वहाँ पर उसकी पहचान ज्यादा कठिन भी नहीं होगी। उनकी नजरो से बचने के लिए वह मण्डी में घूम रहे आवारा पशुओं की आड़ ले उस स्थान के गिर्द मँडराता रहा, जहाँ हलवा-पूड़ी बँटना था।

दोपहर के समय मण्डी में रौनक कुछ कम हो गई। अधिकतर व्यापारी दुकानों के ऊपर चौवारों में अपने-अपने परिवारसहित रहते थे। वे दुकानों पर कारिंदों को छोड़ खाना खाने चले गए। मण्डी के अंदर छोले-भटूरे, आलू की टिक्की और खान-पान का अन्य सामान बेचनेवाले छावड़ीफरोश घुस आए थे और ऊँची आवाज में अपने-अपने सामान की हॉक लगा रहे थे।

मण्डी के अंदर घंटा बजने की आवाज सारे वातावरण पर छा गई और पाण्डी, मजदूर, भिखारी और अन्य लोग सेठ रत्नचंद की दुकान की ओर भागने लगे। एक रेढ़ी पर दो बड़े-बड़े तसले और दो टोकरे रखे हुए थे। टोकरों को अखबारी कागजों से ढाँपा हुआ था।

रेढ़ी जब काली के निकट से गुजरी तो उसके नथुने हलवा-पूड़ी और भाजी की महक से भर गए। वह इन खुशबुओं से बिलकुल अपरिचित था। यह सोचकर इन पकवानों के स्वाद से काली का मुँह पानी से भरी गागर-सा बन गया। उसने

मुंह के पानी को थूका नहीं, निगल लिया।

पाँच-छः पहलवान हाथो में सुमदार लाठियाँ लिए हुए लोगों के उमडते हजूम को नियंत्रण में रखने के भरसक प्रयत्न कर रहे थे। जरूरत पड़ने पर वे लाठी भी लहराते थे और पक्ति तोड़ने की कोशिश करनेवाले व्यक्तियों को डाँट-डपट भी देते थे।

पाण्डी अलग पंक्ति में एक ओर बैठ गए। मण्डी के भिखारियो की कतार दूसरी ओर काफी पीछे हटकर लगी थी। मण्डी में घूमनेवाले बहरूपिए अपने-अपने शस्त्र उठाए हुए अलग बैठे थे। सब लोग हलवा पूडी पाने के लिए बहुत विचलित होने के बावजूद शांत थे। एक ओर खड़े मण्डी के पहलवान आपस मे सलाह-मशवरा करने लगे। लाली पहलवान का फैसला सुन तीन पहलवान दुकानों की ओर भाग गए और थोड़ी ही देर में दो छोटी-छोटी बाल्टियां और एक टोकरी ले आए। उन्होंने टोकरी पूड़ियों से भर ली और एक बाल्टी में हलवा और दूसरी में आलू की भाजी डाल दी।

यह देख मण्डी के भिखारी शोर मचाने लगे। उन्होंने समझा कि पहलवान यह सामान बाहर के भिखारियों में बाँटने के लिए ले जा रहे है। उनका हाहाकार सुन बहरूपिए भी ऊँची आवाज मे आपत्ति करने लगे।

लाली पहलवान ने उन्हें समझाया कि यह हलवा-पूडी और भाजी अखाड़े के लिए अलग रखी है। यह सुन एक पाण्डी ने एतराज किया, "सारा माल तो पहलवानजी, आप सँभाल रहे है।"

"शरीर के अनुसार ही खोराक लेंगे।" दूसरा पाण्डी मुस्करा दिया।

"चेठा हमारे साथ है और तरफदारी पहलवानों की कर रहा है।" तीसरे पाण्डी ने आपत्ति की।

"यह भी आजकल अखाड़े में जाता है न। पट्ठो की मालिश करने के लिए।" एक और पाण्डी बोला।

"हमे पेटभर हलवा-पूड़ी मिलनी चाहिए। बाकी चिट्ठा चोर या काला साधू ले जाए, हमे क्या मतलब।" दुल्लूराम ने बात खत्म की।

थोड़ी ही देर में हलवा, पूडी और भाजी बाँटी जाने लगी। तीन-तीन पहलवानो की तीन टोलियाँ दो-दो पूड़ी के साथ हलवा और भाजी बाँटने लगीं। लोगों के हो-हल्ला मचाने पर लाली पहलवान बोला, "बाहर के भिखारियों को भी पूड़ी-हलवा खिलाना है इसलिए सबको दो-दो पूड़ी ही मिलेंगी। बच गई तो और दे देंगे।"

"पहलवानजी, वे भिखारी क्या तेरे सगे-संबंधी है जो उनका इतना ख्याल कर रहे हो ?" एक त्रिशूलधारी बहरूपिए ने तल्ख स्वर में पूछा।

लाली पहलवान को गुस्सा तो बहुत आया लेकिन लोगों की आँखों में उबलते विरोध को देख वह अपने गुस्से को पी गया।

चार-चार पूड़ी के साथ हलवा और भाजी ले लोग चटखारे मारते हुए खाने में व्यस्त हो गए।

काली ने अपनी जिंदगी में पहली बार इतनी स्वाद पूड़ी-हलवा और सब्जी खाई थी। वह उँगलियों को चाटता और जीभ को होंठों पर और हाथ को पेट पर फेरता हुआ पानी पीने के लिए नल की ओर बढ़ गया।

छह

रोज की तरह काम की तलाश में, मजदूर मण्डी, बर्फ कारखाना और गोदामों का चक्कर लगा काली सीधा फैंटनगंज मण्डी में आ गया। वह लगभग हर रेढ़े और रेढ़ीवाले को पहचानने लगा था और वे भी काली के चेहरे-मोहरे से किसी हद तक परिचित हो गए थे।

काली छोटे-छोटे कदम उठाता हुआ मण्डी में घूम रहा था। एक दुकान के सामने रेढे के पास बैठा आदमी बेचैनी से पहलू बदल रहा था। सामने दुकान के बड़े दरवाजे के पास लदान के लिए कुछ बोरियाँ, तोड़े और लकडी की बंद पेटियाँ रखी थी। रेढे के पास बैठा पाण्डी इस सामान की ओर देखता और घबराकर पहलू बदलता हुआ दुकान से नजरें फेर लेता।

"ओये कानू। वहाँ बैठा क्या कर रहा है। छिब्बू और माँझा कहाँ हैं ?" दुकान की गद्दी पर बैठे गाल टोपीवाले लाला कुन्दनलाल ने उचककर खाली रेढ़े की ओर देखते हुए ऊँची आवाज में पूछा।

"शाहजी, अभी सामान उठाते है। छिब्बू, माँझा को बुलाने गया है।" नमता से उत्तर दे कानू रेढे की ओट में खिसक गया।

लाला कुन्दनलाल और कानू की बातचीत सुन काली के मन में आशा की मद्धम सी जोत जग उठी और वह खरगोश की टोह में घूमते हुए शिकारी कुत्ते की तरह जमीन को सूँघता हुआ दुकान और रेढे के पास मंडराने लगा।

दुकान के बाहर माल का ढेर और भी ऊँचा होता जा रहा था और लाला कुन्दनलाल माल उठाने के बारे में कानू को तीन बार चेतावनी दे चुका था। कानू बहुत परेशान था। वह बहुत बेचैन हो उठ गया और छिब्बू की तलाश में मण्डी के पूर्वी गेट की ओर बढ़ गया।

छिब्बू को बाजार से मण्डी के बड़े दरवाजे में प्रवेश करते देख कानू की जान में जान आई। वह छिब्बू की ओर लपक गया और उसके निकट पहुँचते ही भड़क उठा, "तू क्या गाँव चला गया था जो इतनी देर लगा दी है ? उधर लाला गुस्से में फँकुराता हुआ बार-बार पदिया रहा है।"

फिर उसने छिब्बू की ओर ध्यान से देख उसके आगे-पीछे और दाएँ-बाएँ नजर

दौड़ाई और हाथ ऊपर उठा बहुत तल्ख स्वर में पूछा, "माँझा कहाँ है ?"
"माँझा का जी ठीक नहीं है।" छिब्बू ने कालू का गुस्सा भाँप उसे ठंडा करने के लिए चिंतित स्वर में बताया, "माँझा बहुत बीमार है।"
"क्या हो गया उसे ?" कालू अपना गुस्सा भूल बहुत चिंतित हो उठा।
"खून की पेचिश लगी हुई है। साथ में ताप भी है। हाथ से पानी का डिब्बा नीचे रखता है लेकिन अगले ही क्षण फिर उठा लेता है। मेरे जाने तक दस-पंद्रह बार जा चुका था और आधा गढ़ा पानी पी चुका था। चेहरे का रंग हल्दी-सा हो गया है।"
"सवेरे तो अच्छा-भला था। जब मैं कमरे से निकला था तो वह तैयार हो रहा था।" कालू असमंजस में पड़ गया।
"तेरे आने के बाद हम इकट्ठे कमरे से निकले लेकिन वह पेट को दबाता हुआ पलट गया। कहने लगा कि तुम चलो, मैं अभी आता हूँ।" छिब्बू ने हाथ झटक दिया, "अब जाकर देखा तो लमलेट था।"
छिब्बू की बात सुन कालू खामोश हो गया और चिंता मे डूबा हुआ नाक कुरेदने लगा। "कोई दवा-दारू दिया उसे ?"
"गुणगुणे हकीम को दिखाया है। तुम्हें तो पता ही है, वहाँ बीमारों की कितनी भीड़ होती है।"
"क्या कहा हकीम ने ?"
"नाडी देखकर बताया कि गर्मी हो गई है। खाने के लिए पुड़ियाँ और पीने के लिए शर्बत दिया है। भूख लगे तो दही-खिचड़ी खाने को कहा है।"
"हूँ।" कालू सिर हिलाते हुए बहुत गहरी सोच में डूब गया। फिर छिब्बू की ओर आँखें उठा दी, "अब माल कैसे ढोएँगे ? लाला ने तो दरवाजे के बाहर धाँगें लगा दी हैं। दुकान में आने-जाने का रास्ता रुक रहा है। तीन आदमियों का काम दो कैसे करेंगे ?"
"चलो देखते है। कुछ-न-कुछ तो करना ही पड़ेगा। किसी पल्लेदार की मिन्नत करते हैं। काम तो निकालना ही है।" कालू का हाथ पकड़ छिब्बू रेढे की ओर बढ़ गया।
"अपनी दुकान और काम छोड़ हमारी मदद कोई क्यों करेगा ?" कालू ने छिब्बू के साथ कदम-से कदम मिला चलते हुए शंका व्यक्त की। "कुछ-न-कुछ तो करना ही होगा। दुकान हाथ से निकल गई तो मण्डी से ही उखड़ जाएँगे। बाहर लोगों के झोटे भी हाँकने को नहीं मिलेंगे।" छिब्बू बहुत चिंतित हो उठा।
जब वे दुकान के सामने पहुँचे तो लाला कुन्दनलाल ने धमकी दी, "माल उठाना है या और रेढ़ा-ठेला मँगवाऊँ ?"
"शाहजी, अभी उठाते हैं। बस दो मिनट में।" छिब्बू ने हाथ जोड़े और कंधों

पर पड़े साफे को ठीक किया। सिर का साफा कसकर बाँधा और दुकान के बाहर पड़े सामान को नजरो-ही-नजरों में तोलने लगा।

"शाहजी, कहाँ के लिए माल निकाला है ?" छिब्बू ने पूछा।

"रैनक बाजार का।··· वहाँ से लौटने पर भैरों बाजार और अटारी बाजार का माल उठाना है। जल्दी करो। मुनीम से पर्चे ले लो।"

"कैसे उठाएँगे। तीन आदमियों का काम दो जने कैसे करेंगे ? ज्यादा मशक्कत करने से कही हमें भी खूनी पेचिश न लग जाए।" कालू ने सहमी हुई आवाज में शंका व्यक्त की।

"कालू, तू मुनीम से पर्चा लेकर हर दुकान के माल का अलग-अलग हिसाब लगा ले। तब तक मैं आदमी का इंतजाम करता हूँ," छिब्बू रेढ़ों की ओर चला गया।

छिब्बू और कालू की बातचीत काली ने भी सुनी और बहुत हद तक उनकी समस्या उसकी समझ में आ गई थी। लेकिन उसे झिझक हो रही थी कि उनसे किस तरह बात खोले कि वह काम करने के लिए तैयार है।

कालू को अपने काम में व्यस्त और छिब्बू को धाँगो के पीछे ओझल होते देख काली चुपके से उनके रेढ़े के निकट आ खड़ा हुआ। उसने पहिए पर मजबूती से हाथ रख दिया और दिल की धड़कन पर काबू पाने और अपनी उत्सुकता पर अकुश रखने का यत्न करता हुआ इधर-उधर झाँकने लगा।

काली अपने कंधे पर तगड़ा हाथ पड़ते ही सिहर उठा और घबराकर गर्दन पीछे घुमा दी।

"पहलवान, क्या बात है ? रेढ़े का पहिया पकड़कर खड़े हो ?" छिब्बू ने काली के डील-डौल को जाँचते हुए कुछ रोब से पूछा।

"आपकी ही राह देख रहा था।" काली ने झिझकते हुए हाथ जोड़े।

"क्यों, क्या बात है ?" छिब्बू ने काली के शरीर की और भी गहरी जांच की।

काली को तुरत कोई जवाब नही सूझा और खाली नजरो से छिब्बू की ओर देखता रहा।

"क्यों, रेढ़ा चोरी करने का इरादा था ?" छिब्बू ने काली की कलाई मजबूती से पकड़ ली।

"नही मालको।" छिब्बू के घुटनों की ओर झुकते हुए काली बहुत ही नर्म स्वर में बोला, "मैं तो खुद लुटा-पुटा हुआ हूँ। किसी को कैसे लूटूँगा।···

"मैं तो काम की तलाश में भटक रहा हूँ। आप दोनों की बातचीत सुन मुझे लगा कि आपको तीसरे आदमी की जरूरत है। इसीलिए रेढ़े के पास आ खड़ा हुआ था।" काली ने फिर से हाथ जोड़ दिए।

छिब्बू ने तुरंत कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई। वह गहरी नजर से काली को सिर से पाँव तक जाँचता रहा। फिर सिर ऊपर-नीचे हिलाता रहा जैसे मुँह-जुबानी हिसाब जोड़ रहा हो और फिर उसने आँखें उठा काली की ओर देखा, "काम-धंधे की तलाश में शहर आए हो ?"

"हाँ जी।" काली ने हाथ मसलते हुए सिर हिलाया।

"गाँव कौन-सा है ?"

"गाँव-घर तो सब छूट गया है। जब घरवाले ही नहीं रहे तो गाँव-घर कहाँ से रहता।" काली बहुत उदास हो गया।

छिब्बू एक बार फिर सोच में पड़ गया जैसे कोई भूली-बिसरी बात ताजा हो आई हो। उसने काली की ओर ध्यान से देखते हुए पूछा, "कहीं तो घर-घाट होगा। तेरा घर उजड़ गया होगा। गाँव तो अपनी जगह पर ही आबाद होगा ?"

"मेरे लिए तो घर के साथ-साथ गाँव भी उजड़ गया है। वह गाँव मेरे लिए किस तरह आबाद रहेगा जहाँ मैं वापस नहीं जा सकता।"

"यहाँ कहाँ रहते हो ?"

"कहीं भी नहीं। कोई पक्का टिकाना नहीं है। जहाँ जगह मिल जाती है, रात काट लेता हूँ।"

"देख पहलवान, जड़ से उखड़ा पेड़ जल्दी सूख जाता है। घर-घाट से बिछड़ा हुआ आदमी भी जल्दी ही अपना-आपा खो बैठता है। मर-खप जाता है। पशु की कीले के बिना और आदमी की घर-गाँव के बिना कोई पहचान नहीं है।" छिब्बू ने समझाया और फिर उसे दिलासा दिया, "हम तो पशुओं का काम करते है। बोझा ढोते है। अगर यह काम कर सकते हो तो दो-चार दिन के लिए सोचा जा सकता है।"

"सारी उम्र यही काम किया है।"

छिब्बू फिर से गहरी सोच में डूब गया। वह काली की ओर बार-बार देखता जैसे अपने मन में उसके प्रति उठनेवाली शंकाओं के बारे में अपने-आपको आश्वस्त कर रहा हो। "बेपीर और बेघर आदमी पर भरोसा करनेवाले अकसर धोखा खा जाते हैं क्योंकि ऊँच-नीच हो जाने पर उसे तलाश करना मुश्किल हो जाता है। ऐसे आदमी को साथी बनाने का क्या फायदा जिस पर नजर रखने के लिए एक और आदमी तैनात करना पड़े।··· खैर इस समय तू भी गर्जमंद है और हम भी जरूरतमद हैं। रेढ़े में भींडी का काम कभी किया है ?'

"नहीं, लेकिन सीख जाऊँगा। वैसे गाँव में तो भींडी बैल या झोटे को जोता जाता है।" काली ने बताया।

"मैंने कहा न कि शहरों में पशुओं के कई काम आदमियों को करने पड़ते हैं। जब आदमी रेढ़ा खींचते हैं तो भींडी भी वही लगेंगे।" छिब्बू ने समझाया।

"भींडी लग जाऊँगा।" काली ने आश्वासन दिया और रेढ़े के पहिए पर फिर से मजबूती से हाथ जमा दिया।

छिब्बू आँखों पर बाएँ हाथ से छतरी बना काली की आँखों में झाँकने लगा, "पहलवान, तेरा नाम क्या है ?"

"काली।"

"मेरा नाम छिब्बू है और मेरे दूसरे साथी का नाम कालू है। तीसरा साथी माँझा है। वह बीमार है। उसकी जगह तुम्हें अपने साथ रेढ़े पर माल ढोने के काम पर लगा रहे हैं।" छिब्बू ने बात जारी रखी, "जब तक माँझा ठीक नहीं होता, तू हमारे साथ काम करेगा। उसके ठीक होने में दो-चार दिन तो लग ही जाएँगे। बीमारी से कमजोरी भी होगी। उससे छुटकारा पाने में भी दो-चार दिन का टैम लग सकता है। माँझा के ठीक होने पर तुम हमारे साथ काम नहीं कर सकोगे।"

"ठीक है।" काली संतुष्ट था जैसे चार-छह दिन का समय साल के बराबर हो।

"बाकी हमारा लाला से ठेका है। माँझा को काम करने पर सवा रुपया मिलता है। क्योंकि तू उसकी जगह पर काम करेगा इसलिए आधी दिहाडी उसे और आधी तुम्हें मिलेगी। वह बीमार है। रोटी नहीं खाएगा लेकिन दवा-दारू का खर्च तो है।··· बोलो, सौदा मंजूर है ?"

"सत बचन मालको।" काली ने हाथ जोड़ दिए।

"तुम यही ठहरो। मैं अपने साथी से भी बात कर लूँ।" छिब्बू दुकान की ओर बढ़ गया जहाँ कालू माल का हिसाब लगा रहा था।

काली धड़कते दिल और आशा-निराशा में डूबा हुआ छिब्बू का इंतजार करने लगा। उसके माथे और पाँव के तलवों पर पसीना फूटने लगा था और साँस उखड़-उखड़-सा रहा था। छिब्बू उसके निकट पहुँचा तो काली खुले मुँह से उसकी ओर तकने लगा ओर उसकी आँखों के सामने धूप कटकर कई रंगों में बदलने लगी।

"पहलवान, चल लग भींडी।" छिब्बू ने काली का कंधा थपथपाया।

"लगता हूँ।" काली जोर से साँस खींच माथे से पसीने की बूँदें पोंछने लगा।

छिब्बू और काली रेढ़े को दुकान के सामने ले गए और आने-जाने के लिए रास्ता छोड़ रेढ़ा रोक दिया।

मुनीम ज्वालाराम ने काली की तरफ ध्यान से देख उसकी ओर संकेत करते हुए ऊँचे स्वर में पूछा, "ओये कालू ! यह कौन है ? पहले तो इसे कभी देखा नही।"

"मुनीमजी, अपना ही आदमी है। माँझा बीमार पड गया है। उसकी जगह यह काम करेगा।"

"लालाजी से पूछ लो। सैकड़ों रुपये का माल परदेसी के हाथ मे कैसे सौंपा जा सकता है ?"

"मुनीमजी, हम भी तो साथ हैं। फिर अपना खास आदमी है।"

"तुम्हें भरोसा है न ?" मुनीम ने जोर दे फिर पूछा।

"पक्का। अपना घर का आदमी है।" छिब्बू ने उसे आश्वस्त करने के लिए हाथ छाती पर रख लिया।

"मुझे कुछ पता नहीं। नफा-नुकसान का जिम्मेदार तू होगा।" मुनीम ने चेतावनी दी।

"मुनीमजी, बिलकुल पक्का। पाँच साल से मण्डी में रेढ़ा चला रहे हैं। कभी एक पैसे की भी शिकायत सुनी है ?"

मुनीम ने काली की ओर एक बार फिर बहुत ध्यान से देखा और दुकान के अंदर चला गया।

"चलो, सामान लाद लें।" छिब्बू ने आगे बढ़ रेढ़े के हत्थे में लकड़ी का मोटा डंडा फँसा उसे अच्छी तरह दबा दिया।

"पाँच दुकानों का सामान है।" कालू ने समझाया।

"तू बताता जा। हम रखते हैं।"

"पहले यह रखो। यह माल सबसे आखिर में उतारा जाएगा।" कालू ने इशारा किया।

"चल पहलवान, बोरी उठा।"

छिब्बू की सहायता से काली ने आटे की बोरी पीठ पर टिकाई और उसका निचला हिस्सा दोनों हाथों में थामे हुए रेढ़े की ओर बढ़ गया। काली को बोरी का बोझ अधिक महसूस हो रहा था। लेकिन छिब्बू उसे सहारा दे रहा था। रेढ़े के पास पहुँच छिब्बू आगे बढ़ गया, "पहलवान, यहाँ रखो··· हत्थे के पास। पीछे रखने से रेढ़ा उलारा जाएगा। वैसे भी यह बोरी सबसे आखिर में उतारी जाएगी।"

काली ने रेढ़े के हत्थे की ओर पीठ कर बोरी नीचे खिसका दी और दूसरी ओर से छिब्बू ने उसे नीचे लिटा दिया। काली की पीठ से बोरी खिसकते समय उसकी कमीज की पीठ भी साथ ही सरक गई और कपड़ा फटकर नीचे लटक गया।

यह देख छिब्बू हँस दिया, "कोई बात नहीं। धीरे धीरे आदी हो जाएगा। अभी पीठ पर चादर फैला ले। कल मैं माँझा की बोरी ला दूँगा। वह रखने से तन का कपड़ा नहीं फटेगा।"

काली ने अपनी चादर छाती और पीठ पर इस तरह लपेट ली कि उसकी बाँहों में कोई रुकावट न पड़े। जब काली और छिब्बू सामान लाद चुके तो उनके कपड़ों, शरीर, बाँहों, हाथों और चेहरे पर कई रंग बिखर गए थे। कहीं आटे के सफेद

निशान तो कहीं हल्दी की पीलाहट और कहीं नील की रगड़ थी।

जब सामान लाद दिया गया तो काली को बाँह से पकड़ छिब्बू उसे रेढ़े के जुंगले के पास ले गया। वह झुककर हत्थे के पीछे चला गया और उसे दोनों हाथों से ऊपर उठा नीचे रखी लकड़ी निकाल दी और उसे समझाने लगा। "हत्थे को छाती से लगाकर लड़ें दोनों हाथों से पकड़नी हैं। फिर उलार-दबाव का अंदाज भी रखना है ताकि रेढ़े में माल का बोझा बराबर बँटा रहे और उसे खींचने में ज्यादा दिक्कत न हो।"

छिब्बू की बातें ध्यान से सुनता हुआ काली सिर हिला रहा था। "समझ गया, पहलवान ?"

"हाँ जी, समझ गया।" काली ने अनुमति में सिर हिला दिया।

"तो आ जाओ, भींडी की जगह पर।" छिब्बू जुंगले के ऊपर हाथ रखे एक ओर हट गया।

काली झुककर जुंगले के पीछे चला गया और उसे छाती पर अच्छी तरह टिका रेढ़े की दोनों लड़ें मजबूती से पकड़ लीं। "पहलवान, उलार-दबाव ठीक है न ?"

"ठीक ही होगा। मुझे अभी इसकी समझ नहीं है।" काली ने मुस्कराने की कोशिश की।

"कोई बात नहीं। जल्दी ही सीख जाएगा। रेढ़े में जुतने के बाद तुम्हारा सरीर इसके उलार दबाव के अनुसार अपने-आप ढल जाएगा।" छिब्बू ने काली की ओर देखा, "पहलवान, जरूरत बड़ी चीज है। माँ-बाप तो क्या, रब से भी बड़ी है। सबकुछ सिखा देती है।" फिर वह काली को समझाने लगा, "पहलवान, भींडी का काम उलार-दबाव का पूरा ध्यान रखना होता है। यह काम बाँहों के जोर से किया जाता है। और छाती के जोर से रेढ़े को भी आगे खींचना होता है। मैं और कालू रेढ़े को पीछे से उसे धकेलेंगे। गोडों में दम होना चाहिए। बाकी सब ठीक है।"

क्री··क्री···क्री की आवाज पैदा करता हुआ रेढ़ा आगे बढ़ने लगा। इस काम का अनुभव न होने के कारण काली को रेढ़ा खींचने में काफी कठिनाई महसूस हो रही थी। उससे उलार-दबाव का संतुलन कायम नहीं रखा जा रहा था और रेढ़ा बार-बार डावाडोल हो जाता था। रेढ़े को पीछे से धकेलते हुए छिब्बू ऊँची आवाज में समझाता, "पहलवान, सँभलके। दायाँ हाथ दबाके चल। आगे जाकर बायीं ओर मुड़ना है।"

एक मोड़ पर पहुँच काली बायीं के बजाय दायीं ओर मुड़ गया तो छिब्बू और कालू चिल्ला उठे, "क्या कर रहा है, पहलवान ? इतनी बात तो भींडी जुता हुआ झोटा भी समझ लेता है।"

साँस फूल जाने के कारण काली उत्तर में सिर्फ खाँस ही सका। वह रुक गया। रेढ़े का सारा बोझ उसे अपने बाजुओं, घुटनों, टखनो और पिंडलियों पर महसूस

हो रहा था।

काली के पास आ छिब्बू ने उसे डाँट दिया, "पहलवान, तुम्हें दायें-बायें की भी समझ नहीं है ?"

"हाँ जी, गाँव में मोड़ ही कितने होते हैं और पाँव ऐसे सध जाते हैं कि अपने-आप जिधर जाना हो, उधर मुड़ जाते हैं।··· शहर में रहा तो यहाँ के मोड़ भी समझ में आ जाएँगे।" काली ने बाँह से माथे का पसीना पोंछा।

उसकी बात सुन छिब्बू सोच में पड़ गया और फिर कालू के पास आ गया, "कालू, भीडी लगना इसके बस का नहीं है। इसे सिखाना पड़ेगा।··· ऐसा करते हैं···।"

"क्या ?"

"हम बारी-बारी भींडी लगते हैं।" छिब्बू ने सुझाव दिया।

"इस तरह तो हम ही भीडी बनेंगे।" कालू ने आपत्ति की।

"नहीं, शाम तक मैं इसे भीडी बना दूँगा। अभी दो और फेरे भी तो लगाने है।··· भैरों बाजार और अटारी बाजार के।" छिब्बू ने आश्वासन दिया।

"गाहक तो फगवाडा गेट के भी बैठे थे।" कालू ने बताया।

"यह तो और भी अच्छा है।" छिब्बू ने संतोष व्यक्त किया।

"क्या पहले तू भीडी लगेगा ?" छिब्बू ने पूछा।

"कोई लग जाए।" कालू जुगले की ओर बढ़ गया और उसे दोनों हाथो से मजबूती से पकड़ते हुए काली को इशारा किया, "तू पीछे चल, छिब्बू के साथ।"

काली ने जुगला छोड़ने में कुछ हिचकिचाहट दिखाई तो कालू मुस्करा दिया, "फिक्र न कर। मैंने कसकर पकड़ा हुआ है।"

काली एकदम बहुत सहम गया था। उसे ठंडा पसीना आने लगा कि काम का तजरबा न होने के कारण वे उसे हटा देंगे और···। वह आगे सोचने मे असमर्थ था।

कालू ने ध्यान से काली की ओर देखा, "पहलवान, तेरा जी तो ठीक है ?"

"हाँ, ठीक हूँ।" काली ने सिर हिला दिया। फिर वह गिड़गिड़ाया, "आपको मेरा काम पसंद नही आया। लेकिन मालको, मौका मिला तो जल्दी ही सीख जाऊँगा।"

"माँ के पेट से तो कोई भी कुछ सीखकर नहीं आता। जमाना ही सबकुछ सिखाता है।" कालू ने काली को हौसला दिया, "जब मैंने पहली बार रेढ़ा खींचा था तो जोर लगाते-लगाते मेरा मूत निकल जाता था।··· होले-होले सब ठीक हो गया। तू पीछे जा। छिब्बू के साथ रेढ़े को आगे धकेल। भींडी का काम धीरे-धीरे सीख लेना।"

छिब्बू का इशारा पा काली उसके बायीं ओर आ गया और पिछले फट्टे पर दोनों हाथ जमा दिए। "पहलवान, बराबर जोर लगाना है। कदम साथ मिलाना

है। वरना भींडी को दिक्कत होगी।" छिब्बू ने समझाया।

"ठीक है," काली ने खाँसकर जोर-से साँस अंदर खींची ताकि वह एक बार फिर ताजादम हो जाए।

"चलूँ ?" कालू ने जुंगले को छाती से लगा और लड़ों को मजबूती से पकड़ छिब्बू को आवाज दी।

रेढ़ा एक बार फिर क्री··· क्री··· की आवाज पैदा करता हुआ आगे की ओर रेंगने लगा। धीरे-धीरे उन्होंने रेढ़ा मोड़ लिया और ठीक रास्ते पर आ कालू ने छाती के जोर से रेढ़ा खींचते हुए आवाज लगाई, "शाबाश यारा।"

"शाबाश यारा।" छिब्बू ने उत्तर दिया।

तीनों जने सिर नीचे किए हुए रेढ़े को खींचते गए। जहाँ कहीं चढ़ाई आती तो कालू जोर से पुकारता, "शाबाश यारा··· लगा दो जोर।"

"शाबाश यारा। लगा दिया जोर।" छिब्बू और भी ज्यादा ऊँची आवाज में पुकारता।

जहाँ कहीं ढलान आ जाती तो कालू पुकारता, "शाबाश यारा। पैर दबाके।"

"शाबाश यारा। दबा लिया पैर।" छिब्बू उत्तर देता।

आधा रास्ता तय करने के बाद छिब्बू ने आवाज दी, "कालू, ठहर जा। मैं भींडी की जगह पर आता हूँ।"

"नहीं, चलने दे। इस समय मन रमा हुआ है।" कालू ने आवाज दी।

रेढ़ा खींचते-खींचते वे खुली-चौड़ी सड़क से सँकरी सड़क पर आ गए।

दोनों ओर छोटी-बड़ी दुकानें थीं और काफी भीड़ थी। मर्द, औरतें और बच्चे, बाजार मे घूम रहे थे। दुकानों के आगे कहीं-कहीं फल-सब्जी की रेढ़ियाँ भी खड़ी थीं। अधिकतर सब्जी और फलफरोश अलग-अलग सब्जियाँ और फल ही बेच रहे थे।

रेढ़ियो, राहगीरों, टन-टन घंटी बजाते साइकिल सवारों को टक्कर से सावधान करते वे आगे बढ़ गए। कालू ने एक स्थान पर रेढ़ा रोक दिया, "पता करो, देहाती किरयाना स्टोर कहाँ है ? यहीं कहीं आसपास ही होना चाहिए।"

छिब्बू रेढ़े से हटकर एक दुकान पर गया। दुकानदार ने गद्दी से उचक छिब्बू को हाथ के इशारे से देहाती किरयाना स्टोर बता दिया। वापस आ उसने रेढ़े पर दोनों हाथ टिका दिए, "चार दुकानें छोड़ पाँचवी दुकान है। बायी ओर।"

वे रेढ़े को धीरे-धीरे धकेल उस दुकान के सामने ले गए और रेढ़ा रोक दिया, "यही है। "सामने।"

कालू ने रेढ़ा ऊटने पर टिका दिया। छिब्बू ने घूमकर सामान के ऊपर रखा डंडा उठाया और उलार के मोटे सुराख में फँसा दिया।

काली एक तरफ जा खड़ा हुआ और दिलचस्पी से बाजार की रौनक देखने

लगा।

कालू ने पतूही की जेब से पर्चे निकाले और देहाती किरयाना स्टोर का पर्चा निकाल दुकान के अंदर चला गया और मालिक की ओर एक पर्चा बढ़ा दिया, "बोला, यह पर्चा आपका है न ?"

दुकानदार ने पर्चा ध्यान से पढ़ा। फिर कालू को लौटाता हुआ बोला, "नहीं, यह पर्चा महँगाराम-तरसेमलाल का है।"

कालू झेंप गया जैसे उसकी बहुत बड़ी गलती पकड़ी गई हो। उसने सारे पर्चे पतूही की जेब से निकाले और दुकानदार के हाथ में थमा दिए, "आप अपना पर्चा पहचान लें।"

दुकानदार ने अपने नाम का पर्चा निकाल बाकी कालू के हवाले कर दिए। कालू उन्हें लौटाता हुआ बोला, "शाहजी। जरा बता दें, किस-किसका पर्चा है?"

दुकानदार पर्चों को उलट-पलटकर देखने लगा ताकि वह पता लगा सके कि बाकी दुकानदारों ने क्या-क्या माल मँगवाया है। यह भाँप कालू ने दुकानदार की ओर हाथ बढ़ा दिया, "शाहजी, नही पढ़ना आता तो पर्चे मुझे लौटा दो।"

"पता नहीं पर्चे लण्डो में लिखे हैं।" दुकानदार खिसियाना हो गया और पर्चे कालू को लौटा दिए।

"शाहजी, आपके कितने नग लिखे हैं ?"

"पाँच···। एक बोरी आटा, एक बोरी चीनी, एक टोटा चावल, एक पेटी चाय और एक पेटी साबुन।" दुकानदार ने ब्योरा दिया।

"ठीक है। आपका सामान ऊपर ही पडा है।"

सामान की शिनाख्त के बाद कालू ने छिब्बू की मदद से काली की पीठ पर बोरी रख दी और दुकानदार के संकेत के अनुसार एक कोने में टिका दी।

सामान अंदर चला गया तो कालू ने पूछा, "शाहजी, सारे नग अंदर पहुँच गए न ?"

दुकानदार ने पीछे गर्दन घुमा नगों को गिना, "पहुँच गए।"

"तो पर्चे पर दस्तखत कर दो। सेठजी को पर्चा हमें लौटाना है।" कालू ने बताया। "पहुँच की रसीद देनी है।"

"मेरा पर्चा नहीं लाए ?" दुकानदार ने पूछा।

"वह तो मुनीमजी को पता होगा। यह पर्चा तो माल के दलान का है।"

दुकानदार ने पर्चे पर दस्तखत करके कागज कालू के हाथ में थमा दिया। उसने पर्चे को सावधानी से पतूही की अंदरूनी जेब में रख लिया। उसने बाकी पर्चे निकाले और उन्हें ध्यान से देखकर पहचानता हुआ बोला, "अगली दुकान गली के अंदर है। थोडी दूर आगे जाकर।"

वे रेढ़ा खींचकर गली के मुहाने पर ले गए। रेढ़ा रोक कालू गली में घुस गया

और दोनों ओर मकानों और दुकानों के दरवाजों के अंदर झाँकने की कोशिश करता हुआ एक दुकान के सामने जा खड़ा हुआ। "आपने लाला कुन्दनलाल की दुकान से माल मँगवाया है ?"

"ओये, मैं दो नंबर का माल नहीं रखता। आगे चला जा। दुकान पर गैंडेवाली माचिस का बोर्ड लगा है।" दुबले-पतले बूढ़े दुकानदार ने हाथ लहराया।

खिसियाना हो कालू गली में दोनों ओर देखता हुआ आगे बढ़ने लगा। थोड़ी ही दूरी पर वह दुकान आ गई जिसकी पेशानी पर गैंडे की माचिस का बोर्ड लगा हुआ था। दुकान का दरवाजा छोटा और तंग था, इसलिए दुकान के अंदर अधिक रोशनी नहीं थी। दुकानदार भी लंबा-चौड़ा और तगड़ा-तंदुरुस्त था। और वह नीम अँधेरी दुकान में गुफा में बैठा गैंडे-सा ही दिखाई दे रहा था। पहले दुकानदार के रूखेपन को याद करते हुए कालू नम्र स्वर में बोला, "शाहजी, राम-राम।"

"राम-राम।" दुकानदार ने कारोबारी अंदाज में जवाब दिया।

"शाहजी, आपने लाला कुन्दनलाल की दुकान से माल मँगवाया है ?"

"हाँ मँगवाया है।" दुकानदार कुछ उचककर बैठ गया।

कालू ने पर्चे उसके हाथ में थमा दिए। "आप अपना पर्चा निकाल लो।"

"ऐनक लगानी पड़ेगी।" दुकानदार ने लगभग गंजे सिर पर हाथ फेरा। फिर उसने झुककर संदूकची से ऐनक निकाली और ध्यान से पर्चों को पढ़ने लगा। उसने एक पर्चा हाथ में रख बाकी कालू को लौटा दिए। "यह मेरा पर्चा है।"

"ठीक है। मै अभी माल लाता हूँ।"

कालू बायीं ओर दुकानों-मकानों के दरवाजे गिनता हुआ जब उनके पास पहुँचा तो छिब्बू ने ऊब-भरी आवाज में शिकायत की, "बहुत देर लगा दी, कालू ?"

"दुकान गली के अंदर है। असल में मॉझा को सब दुकानों की पहचान है।... चार नग हैं इसके। दो फेरे लगेंगे।"

कालू ने आटे की बोरी काली और चाय की पेटी शिब्बू को उठवा दी। "दायीं ओर दस दरवाजे गिन लेना। ग्यारहवाँ दरवाजा दुकान का है। ऊपर गैंडा छाप माचिस का फट्टा लगा है। दुकानदार भी गजा गैंडे-जैसा ही है।"

छिब्बू के पीछे-पीछे काली भी बोरी उठाए हुए गली में चल दिया। ईंटों का फर्श काफी पुराना और घिसा-पिटा होने के कारण बहुत ऊबड़-खाबड़ हो गया था। काली ने पीठ पर लदी हुई बोरी को दोनों हाथों से सँभाला हुआ था और पक्के पाँव छिब्बू के पीछे चल रहा था।

अगले फेरे में काली ने चीनी की बोरी और कालू ने साबुन की पेटी उठाई और दुकान पर आ सामान टिका दिया, "शाहजी, दस्तखत करके पर्चा मुझे लौटा दें। मुनीमजी के पास जमा कराना है।"

"माल पहुँच गया। दस्तखत किस बात के ?" दुकानदार ने आपत्ति की।

"महाराज, मुनीमजी को कैसे पता चलेगा कि माल आपकी दुकान में पहुँच गया है।"

दुकानदार ने नजर-भर कालू की ओर देखा और पर्चे पर दस्तखत करके उसे लौटा दिया, "बोरियों में माल बराबर भरा है न ? तोल ठीक है न ? कहीं रास्ते में सूए मार-मारकर चीनी तो नहीं निकालते रहे हो ?"

"शाहजी, हम सबको रब को जान देनी है। शक है तो तलाशी ले लो।"

"भाई, आजकल कुछ पता नहीं चलता। हर आदमी टाँका लगाने में लगा हुआ है। चोर से जहाँ सीधे चोरी नहीं होती वहाँ वे साधू बनकर सेंध लगाने लगे हैं। धंधा है न।" दुकानदार ने शंका व्यक्त की।

उसकी वात काली को बहुत नागवार गुजरी लेकिन वह चुप रहा। कालू ने पर्चा ध्यान से देखा। दस्तखत पर विशेष रूप से निगाह डाली और राम-राम बुला गली में पीछे मुड़ आया।

तेज कदम उठा काली उसके बराबर आ गया, "भा जी, एक वात पूछूँ ?"

"पूछो।" कालू ने काली की ओर हैरानी से देखा।

"लाला कैसी बातें कर रहा था। यहाँ तक सामान लाने में हमारी खुच्चें टूट गई हैं और शरीर का इंजर-पिंजर ढीला पड़ गया है लेकिन लाला को हमारी नीयत पर बराबर शक है।"

"सब चलता है। गरीव आदमी की जरूरत भी चोरी है। और वड़े आदमी की चोरी भी उसका शौक समझी जाती है।" कालू ने उसे समझाया। "गली का दुकानदार छोटी ठगी-ठोरी करता है। आने-दो आने-चार आने की गाहकी भुगताता है। उसका शक भी छोटा ही होगा। ढाई मन की चीनी की बोरी में दो-चार सुए मार भी लिए तो क्या फर्क पड़ेगा। भैंस की पूँछ से दो बाल झड़ जाएँ या उखाड़ लिए जाएँ तो भैंस का वजन कम थोड़े हो जाएगा।"

कालू की बात सुन काली चुप हो गया। उन्हें आते देख छिब्बू भींडी के स्थान पर चला गया लेकिन कालू ने उसे रोक दिया, "भा, तू पीछे ही आ जा। आज भींडी मुझे लगने दे। इस तरह दुकानों की पहचान हो जाएगी।"

"भा जी, एक बात और भी पूछना चाहता हूँ।" काली ने डरते-डरते अपनी बात कही।

"पूछो ?" कालू और छिब्बू ध्यान से उसकी ओर देखने लगे।

"आप कुछ पढ़े-लिखे नहीं हैं ?"

"पढ़े-लिखे होते तो किसी दुकान में मुनीम होते। चिट्टे कपड़े पहनते। हमारी पढ़ाई तो डंगरों के बीच में ही हुई है। उन्होंने जो काम सिखाया वही कर रहे हैं।"... छिब्बू मुस्कराया।

"पहलवान, क्या तू पढ़ा-लिखा है ?"

"गाँव के मदरसे में चार जमातें पास की तो थीं। बहुत पुरानी बात है।"
"जमातें अभी तुम्हारे पल्ले में हैं या डंगरों ने चर ली हैं।" कालू हँस दिया।
"उर्दू तो पढ़ लेता हूँ। मदरसे में उर्दू ही पढ़ाते थे।"
कालू और छिब्बू ने हैरानी से काली की ओर देखा। फिर कालू ने पतूही की बाहरी जेब से तीन पर्चे निकाल काली की ओर बढ़ा दिए, "ले, तू पढ़ ले। हमें किसी और से पढ़ाने की क्या जरूरत है।"
पर्चे अपने हाथ में ले काली उन पर झुक गया। कालू भी उसके पीछे जा खड़ा हुआ। उसने पर्चों की ओर इशारा किया, "अनपढ़ों की अपनी ही भाषा होती है।"··· उसने पर्चे काली के हाथ से ले उनके कोनों में लगाई गई लकीरों को गिना। "अब जिस दुकान पर जाना है उस पर तीन लकीरें हैं। चौथी के पर्चे पर चार और पाँचवीं दुकान के पर्चे पर पाँच लकीरें हैं··· मोटी··· मोटी।"
काली ने लकीरों को ध्यान से देखा। फिर पर्चों को तरतीब से रखा और पहले पर्चे पर नाम पढ़ा, "महँगाराम··· तरसेमलाल।"
"ठीक है।" कालू ने चहकते हुए सिर हिलाया, "आगे कौन-सी दुकान है?"
काली ने अगला पर्चा पढ़ा, "हरबंससिंह-बलवंतसिंह। रौनक बाजार।"
"रौनक नहीं, रैनक बाजार।" कालू का स्वर ऊँचा था जैसे काली की बहुत बड़ी गलती पकड़ ली हो।
"मैंने तो अंदाजे से बाजार का नाम ले दिया।" काली हँस दिया और इससे उसे काफी राहत महसूस हुई।
"पाँचवी दुकान लाला पन्नामल की है··· दायीं ओर कोने में··· काफी बड़ी दुकान है। उसके सात नग हैं।" कालू ने बताया।
"तू पहले क्यों नहीं बोला?" छिब्बू ने कहा।
"भूल गया था। काली ने बताया तो याद आया कि मॉझा दुकानों के बारे में मुनीम से पर्चों पर लकीरें खिचवा लेता है।" कालू खिसियाना हो मुस्कराया।
आखिरी और पाँचवीं दुकान पर माल छोड़ने के बाद रेढ़ा खाली हो गया। कालू ने सब पर्चों को ध्यान से देख उन्हें लकीरवार तय करके पतूही की अंदरूनी जेब में रख लिया।
रेढ़े को धीरे-धीरे खींचते हुए वह रैनक बाजार के चौक में आ गए।
"यारो, पानी पी लें। प्यास लगी है।" छिब्बू ने रेढ़ा रोक दिया।
"प्यास तो मुझे भी बहुत लगी है।" कालू ने इशारा किया, "सामने हलवाई की दुकान के बाहर कमेटी का नल है। वहाँ से पानी पीते हैं।"
काली भी उनके पीछे-पीछे खुश्क होंठो पर सूखी जीभ फेरता हुआ नल की ओर बढ़ गया। उस समय नल भी खुश्क था क्योंकि कमेटी की पानी की सप्लाई बंद थी। उन्हें देख हलवाई ने कहा, "पीछे जाकर बायें घूम जाओ··· आजादी चौक

मे। वहाँ प्याऊ है।"

"शाहजी, पता है।" वे रेढ़ा खींचते हुए आजादी चौक की ओर बढ़ गए। वे एक धर्मस्थान की दीवार के साथ बनाई गई प्याऊ के सामने खड़े हुए। वहाँ कई घड़े रखे हुए थे। उनके सामने कुछ छोटे सिक्के पड़े थे और पीछे एक बूढ़ा बैठा था।

उन्हें अपनी ओर आता देख बूढ़े ने एक घड़े का ढक्कन उठाया और पानी का लोटा भर उनकी ओर देखता हुआ प्रतीक्षा करने लगा। सबसे पहले छिब्बू उसके सामने गया और वह पानी के तीन लोटे गटागट पी गया।

उन्हें पशुओं की तरह पानी पीता देख बूढ़े ने लोटे में कम पानी भरना शुरू कर दिया। जब काली की बारी आई तो लोटे में पानी और भी कम हो गया था। काली ने पाँच लोटे पानी पी लिए तो बुड्ढे ने हाथ खींच लिया। काली ने और पानी माँगा तो वह बहुत क्रुद्ध हो उठा, "और पानी नहीं है। इस तरह तो पशु ही पानी पीते हैं।"

"भाईया, हमारा काम भी तो पशुओं का ही है। पानी भी उन्हीं की तरह पिएँगे।" छिब्बू ने रेढ़े की ओर इशारा किया।

वे गीले हाथ मुँह पर फेरते हुए बिना कोई पैसा-धेला फेंके प्याऊ से पीछे हट गए। वहाँ वैठा व्यक्ति पहले तो बुदबुदाता रहा, लेकिन जब उन्होंने उसकी ओर पीठ मोड़ ली तो उसका स्वर ऊँचा हो गया, "तुम न सिर्फ प्यासे हो बल्कि जन्मजात से भूखे भी हो। डेढ़ बाल्टी पानी पी गए और यूँ हाथ झाडते चल दिए जैसे ताऊ का प्याऊ हो।"

"ताऊ का ही तो प्याऊ है।" कालू पीछे मुड हँस दिया।

"भाईया, परसों ही ताँबे का डबल पैसा रखा था। दूध तो पिलाया नहीं जो चाँदी का सिक्का चाहते हो।... वैसे भी ताऊ तेरी उम्र सेवा करने और पुण्य कमाने की है, न कि लालच करने की।"

भाईया की बुदबुदाहट को पीछे छोड़ते हुए वे रेढ़े के पास आ गए। छिब्बू ने ऊटना उठा दिया, "पहलवान आ जा, तुम्हे भींडी लगना सिखाएँ।"

काली झुककर जुंगले के पीछे चला गया और दोनो हाथों से लड़ें पकड़ लीं। छिब्बू और कालू उचककर रेढ़े पर चढ़ गए। वे मोड़ी से पीठ टिका आमने-सामने वैठ गए और बीड़ी सुलगा इत्मीनान से धुआँ छोड़ने लगे।

"पहलवान, रास्ते का पता लग गया या नहीं ?"

"थोड़ा-थोड़ा पता लग गया है। मोड़ आने पर आप भी वताते रहना।" काली ने जुंगले में अपने-आपको सँजोते हुए उत्तर दिया।

छाती के जोर से काली धीरे-धीरे रेढ़ा खींचने लगा। उसे अपनी पिंडलियों पर लगातार बोझ महसूस हो रहा था। लेकिन कुछ समय के बाद वह बोझ केवल

नाड़ियों और मांसपेशियों पर तनाव बनकर रह गया था।

छिब्बू और कालू आपसी सलाह से कभी रेढ़े को उलार और कभी दाबू कर देते ताकि काली स्थिति के अनुसार अपने-आपको ढालना सीख जाए। जहाँ कहीं मोड़ आता, वे काली को रास्ता बता देते और एक बार फिर बीड़ी फूँकने में व्यस्त हो जाते।

मण्डी के नजदीक पहुँच छिब्बू और कालू रेढ़े से नीचे उतर गए तो वह काफी हल्का हो गया और काली को यूँ महसूस होने लगा जैसे अब रेढ़ा उसे चला रहा हो।

लाला कुन्दनलाल की दुकान के सामने काली ने रेढ़ा रोक दिया। कालू और छिब्बू दुकान की ओर बढ़ गए और काली रेढ़े को ऊटने पर टिका उसके पास ही बैठ गया। बैठते समय उसे पिंडलियों में खासतौर पर और मांसपेशियों में आमतौर पर तनाव और दर्द महसूस हुआ। जमीन पर बैठ वह अपनी पिंडलियों को दबाने लगा।

काली ने चारों ओर नजर दौड़ाई। वहाँ पल्लेदार और रेढ़ेवाले फैले हुए थे। कुछ लोग सुस्ता रहे थे, कुछ ताश खेल रहे थे और कुछ छोटे-छोटे गिरोहों में बँटे हुए बातों में मसरूफ थे। काली बारी-बारी से उनकी ओर ध्यान से देखने लगा। उनमें प्रौढ़ व्यक्तियों में से अधिक के पाँव के पंजे टेढ़े हो गए थे, पिंडलियाँ पकी हुई लौकी की तरह दिखाई दे रही थीं और घुटने अंदर को पिचक गए थे। टाँगों की नसें फूलकर हल्के नीले रंग की बेल-सी बन गई थीं।

काली का दिल डूबने लगा कि कुछ वर्ष तक रेढ़ा खींचने के बाद उसकी भी ऐसी ही हालत हो जाएगी। वह घबराकर उठ गया और ऊटने के ऊपर बैठ अपनी पिंडलियो को मजबूती से पकड़ लिया।

छिब्बू और कालू को अपनी ओर आता देख काली उठ गया और उत्सुकता और घबराहट की मिली-जुली भावना से उनकी ओर ताकने लगा। वे काली के पास आकर रुक गए। फिर जमीन पर बैठ कंधे पर पड़े साफों को हाथ में ले अपने-आपको हवा देने लगे।

"छिब्बू, मुनीम आज हमें जानबूझकर परेशान कर रहा है। क्या उसे दौरा पड़ा है या कोई और कारण है ?" कालू ने पूछा।

"कारण मुझे मालूम है।" छिब्बू ने आँख दबाई। फिर उसने पतूही की बाहरी जेब से डिबिया निकाली और हथेली पर खैनी बना उसे जीभ के नीचे रख लिया।

"क्या कारण है ?" कालू ने पूछा।

छिब्बू ने उसे रुकने का इशारा किया और खैनी को जीभ के नीचे उँगली से अच्छी तरह जमाया। फिर थूक अंदर खींच लिया, "जब भी हम बीमारी-ठीमारी या घरेलू परेशानी से मजबूर हो अपने साथ नया आदमी लेते हैं, मुनीम को तकलीफ

हो जाती है। उसे शक होने लगता है, हम माल खुरद-बुरद करके भाग जाएँगे। ··· फिक्र न कर। मैं अभी उसे ठीक करता हूँ।"

छिब्बू मण्डी के बड़े द्वार की ओर बढ़ने लगा तो कालू चीखा, "कहाँ जा रहा है ?"

"अभी आता हूँ।" छिब्बू ने उसे हाथ के इशारे से समझाने की कोशिश की। कालू परना समेटता हुआ उठ गया और रेढ़े के ऊटने पर बैठ पतूही की अंदरूनी जेबों में हाथ फेरने लगा। उसने पर्चों को अच्छी तरह टटोला और निश्चित हो दो पल्लेदारों से बातें करने लगा।

काली जमीन पर बैठ एक बार फिर पल्लेदारों, रेढ़े और ठेलेवालों को देखने लगा। कई लोगों की टाँगें तो इतनी टेढ़ी हो गई थीं कि अगर वे पाँव जोड़कर भी खड़े हों तो उनके घुटनों में इतना फर्क रह जाता था कि उसमें छोटी ढोलक को आसानी से फँसाया जा सके। उसको अपने बारे में फिर से चिंता होने लगी। उसने अपनी दोनों टाँगें सीधी पसार दीं और पाँव जोड़ दिए। फिर उसने घुटनों के बीच खाली जगह को टटोला। उसमें सिर्फ दो उँगली की ही जगह थी। निश्चित हो टाँगें सुकेड़ वह आराम से बैठ गया।

बड़े दरवाजे से बोरियों से ऊपर तक लदे तीन गड्डे दाखिल हुए तो कई पल्लेदार सतर्क हो गए।

"उठ ताया। गड्डे आ गए हैं। माल उतारकर अंदर लगाना है।"

"ताए को बोरियाँ ढोने के लिए उठा रहा है। क्या उसे मावा (अफीम) की गोली दे रखी है ?" एक और बुजुर्ग पल्लेदार ने लेटे-लेटे ही सिर ऊपर उठाया।

"डबल गोली दी है। देख नही रहे··· ताया का चेहरा धूप की तरह तमतमा रहा है।" नौजवान पल्लेदार मुस्करा दिया।

"फिर फिक्र न कर। बुड्ढा बैल दिन ढले तक पानी-पेशाब पिए-किए बिना बोरियाँ ढोता रहेगा।··· काका, रात को इसे सेर-आध सेर दूध जरूर पिला देना ताकि मावा की खुश्की दूर हो सके।"

"चाचा, चिंता न कर। ताये की खोराक का म बहुत ध्यान रखता हूँ। बिना खोराक खाए इस उम्र में बछड़े जितनी ताकत नहीं हो सकती।" नौजवान पल्लेदार ने विश्वास दिलाया और वे अपनी-अपनी बोरी पीठ पर जमा और सिर पर कपड़ा लपेटते हुए गड्डों की ओर बढ़ गए।

छिब्बू के हाथ में पुड़िया देख कालू उसकी ओर लपक गया, "क्या लाए हो ?"

"पान··· जरदेवाला।"

"किसके लिए ? तू तो खैनी खाता है ?"

"मुनीम के लिए। वह पान का बहुत शौकीन है। मुफ्त का मिल जाए तो उसका

सूखे बेर-सा चेहरा भी मक्की की खील-सा खिल जाता है।" छिब्बू ने बायीं आँख दबाई, "क्या पर्चे उसे लौटा दिए हैं ?"

"कहाँ, उसने जाते ही मुझे झिड़क दिया।" कालू ने खिन्न हो बताया।

"कोई बात नहीं। मेरे पीछे-पीछे आओ। अभी थोड़ी देर में ही सब ठीक हो जाएगा।" कालू को अपने पीछे आने का इशारा करते हुए छिब्बू दुकान की ओर बढ़ गया। कालू भी लंबे-लंबे डग भरता हुआ उसके पीछे चल दिया।

थोड़ी ही देर में छिब्बू और कालू दुकान से लौट आए और आपस में खुसर-फुसर करने लगे।

काली को परेशानी होने लगी कि उसकी वजह से उन्हें मुसीबत का सामना हो रहा है। उसने गर्दन झुका ली और सोचने लगा कि वह उनकी परेशानी कैसे दूर कर सकता है। लेकिन उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उसने आँखें मूँद लीं और इस तरह लेट गया जैसे उसे नींद आ गई हो लेकिन कान खड़े किए वह सचेत मन से उनकी बातें सुनने की कोशिश करता रहा। उनकी बातचीत में अपना जिक्र न पा काली को राहत मिली।

छिब्बू और कालू बातें करते-करते काली के निकट आ गए। कालू के कंधे पर हाथ रख छिब्बू ने उसे समझाया, "तू तो छोटी-से-छोटी बात को लेकर परेशान हो उठता है। तुम्हें वहम हो गया है। मुनीम की अपनी मजबूरियाँ हैं।··· माल तो उसे भिजवाना ही है।"

"अगर उसने दूसरे रेढ़ेवाले को दे दिया ?" कालू ने शंका व्यक्त की।

"दूसरे रेढ़ेवालों के पास क्या धर्मराज की चिट्ठी है कि वे बहुत ईमानदार हैं। तुम्हें गैंडे दुकानदार की बात करनी ही नहीं चाहिए थी।"

"मैंने तो उसे सहवन बताया कि गैंडा दुकानदार पूछ रहा था कि बोरियों का तोल ठीक है। कहीं सुए मारकर चीनी तो नहीं निकाल ली है। इसमें बुरी बात क्या है ?" कालू ने खिन्न हो सिर झटक दिया, "मुनीमजी ने मखौल में कही गई बात को उलटा ले लिया। हमें चोर बताने लगा।"

"भाई गुस्सा मत खा। मुनीम का और हमारा बहुत फर्क है।··· हम ठहरे रेढ़ेवाले और वह है सेठ कुन्दनलाल का मुनीम।" छिब्बू ने समझाया।

"सेठ भी तो उस पर हजारों रुपये का भरोसा करता है। क्या वह हम पर सैकड़ों रुपये का यकीन नहीं कर सकता ? मुनीम, पता नहीं, सात दिन, पंद्रह दिन या महीने के बाद हिसाब देता है। हम तो फेरे से लौटते ही हिसाब दे देते हैं।" कालू ने भवें ऊपर चढ़ा चेतावनी दी, "मुझे तो उसकी नीयत पर शक है। वह जरूर कोई दूसरा रेढ़ा लगाना चाहता है।"

"इतनी जल्दी शक न किया कर। उसने दोपहर के बाद माल उठाने के लिए कहा है। दोपहर होने में कौन-से गोडे रह गए हैं।··· चलो, घर चलते हैं··· माँझा

की भी खबर लेनी है। पता नहीं हकीम की दवाई ने फायदा किया है कि नहीं।" छिब्बू चिंतित था। फिर माथे से साफा उतार कंधे पर फैलाता हुआ बोला, "पहलवान, तुम भी रोटी-पानी खा लो। थोड़ा आराम कर लो। तुम्हारा पहला दिन है। थक गए होगे। रेढ़े से ज्यादा दूर मत जाना। लोग-बाग अपनी सहूलत के लिए खाली रेढ़ा आगे-पीछे धकेल देते हैं।··· हम घर जा माँझा की खबर ले आएँ," छिब्बू और कालू बड़े दरवाजे की ओर बढ़ गए।

काली उन्हें जाते हुए देखता रहा। उसे उनके साथ ईर्ष्या होने लगी कि शहर में उनका घर है। वह उनके मकान के बारे में सोचने लगा। उसकी नजरें मण्डी में चारों ओर बड़े-बड़े और ऊँचे चौबारों पर घूमने लगीं। सब चौबारों की खिड़कियाँ मण्डी की ओर खुलती थीं और उन पर नीले, लाल, पीले रंगों के शीशे लगे हुए थे। काली को अपनी कोठड़ी याद आने लगी तो वह भिन्ना गया। और रेढ़े को अच्छी तरह ऊटने पर टिका और उसके पहियों के पीछे छोटे-छोटे पत्थर रख तंदूर की तलाश में इधर-उधर दूर तक झाँकने लगा। फिर एक स्थान पर रोटियाँ थापने की आवाज सुन उस ओर बढ़ गया।

शाम तक छिब्बू, कालू और काली ने चौक पंजपीर, अटारी बाजार और भैरों बाजार के तीन चक्कर और लगाए। तीनों बहुत थक गए थे लेकिन काली का तो विशेष रूप से बहुत बुरा हाल था और उसका सारा शरीर कोड़े की तरह टीसें मार रहा था। ऊपर से छिपते हुए सूरज ने उसे और भी ज्यादा परेशान कर दिया था। उसे यह चिंता सता रही थी कि वह रात कहाँ काटेगा। पहले तो वह सारा दिन घूम-फिरकर रात काटने का कोई-न-कोई ठिकाना बना लेता था।

काली रेढ़े के ऊटने पर बैठा अपने-आपको चादर से हवा करता हुआ खाली हाथ से कभी पिंडलियों को दबाने लगता और कभी रान पर हाथ फेरता। जहाँ भी हाथ लगाता उसे दर्द की टीस महसूस होती। वह कभी-कभार दुकान की ओर भी झाँक लेता जहाँ मुनीम की गद्दी के सामने खड़े छिब्बू और कालू दिन-भर की मजदूरी का हिसाब कर रहे थे। मुनीम अपने बही-खातों में व्यस्त था और वे इंतजार में अपनी उकताहट और थकावट पर काबू पाने के लिए बार-बार पहलू बदल रहे थे।

मुनीम ने बही-खातों से फारिग हो उनकी ओर देखा और तल्ख स्वर में पूछा, "क्या है ? क्यों मेरे सिर पर यमदूत बनकर खड़े हो ?"

"मुनीमजी, हम तो आपके दास हैं।" छिब्बू उसके पाँव की ओर झुक गया। फिर उँगलियाँ अँगूठे के साथ जोड़ मुँह की ओर उठा दीं, "आज का दाना-दुनका लेने के लिए खड़े हैं। घर जाकर माँझा का भी हाल देखना है। खूनी पेचिश लगी हुई है। ऊपर से ताप भी चढ़ गया है।"

"उसे मावा कम दिया करो।··· उसे खूनी पेचिश नहीं लगेगी तो क्या दूध के

जलाव आएँगे।" मुनीम ने ऐनक नाक की कोठी से नीचे खिसका छिब्बू की ओर झाँका।

"मुनीमजी, हम क्या कर सकते हैं। बहुत मना किया है। वह मानता ही नहीं।" छिब्बू ने हाथ पलट असमर्थता व्यक्त की।

"बच्चू, तुम बहुत होशियार हो।··· वह तो मान जाए लेकिन तुम उसे मनाना नहीं चाहते।··· मावा की गोली खाकर माँझा भींडी लग जाता है। झोटे की तरह गर्दन फेंक रेढ़ा खींचता है और तुम चींचीं उँगली से उसे धकेलते रहते हो। बात करो स्वार्थ की।" मुनीम ने और भी तेज निगाहों से छिब्बू और कालू की ओर देखा।

उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया लेकिन काली अवश्य घबरा गया कि रोज भींडी लगने से उसे भी एक दिन खूनी पेचिश हो सकती है। उसके पास न तो पैसे हैं और न ही ठिकाना। आदमी तो क्या, शहर के कुत्ते भी उसके पाँव नहीं जमने दे रहे। उसे वाकई अपने पेट में गुड़गुड़-सी महसूस होने लगी जैसे उसके अंदर कोई चीज घूमती हुई अपने पीछे हल्की-सी टीस छोड़ रही हो।

कुछ ही समय के बाद मुनीम से पैसे ले छिब्बू और कालू दुकान से बाहर आ गए। उन्होंने आपस में पैसे बाँट पतूही की अंदरूनी जेब में डाल लिए। फिर वे काली के पास आ गए। छिब्बू ने दो चवन्नियाँ काली की हथेली पर रखते हुए कहा, "पहलवान, यह लो आठ आने। दस आने तेरी मजदूरी बनी थी। दो आने रेढ़े का किराया कट गया है।"

काली ने हथेली में चवन्नियों को हिलाया जैसे उन्हें तोलकर उनका वजन महसूस करना चाहता हो। फिर उसने चवन्नियोंवाली मुट्ठी माथे को लगा ली क्योंकि शहर में आने के बाद यह उसकी पहली कमाई थी। काली की ओर देख छिब्बू मुस्करा दिया, "पहलवान, कहाँ ठिकाना है तेरा ? मेरा मतलब, कोई कमरा लिया हुआ है ?"

"नहीं जी।" काली ने बैठे-बैठे आँखें ऊपर उठा छिब्बू की ओर देखा।

"तो रात को कहाँ रहते हो ?" छिब्बू ने आश्चर्य से पूछा। फिर वह एकदम सन्ना गया जैसे उसे अपने पुराने दिन याद आ गए थे और काली का उत्तर भी मिल गया था। वह कालू के कंधे पर हाथ रख उससे खुसर-फुसर करने लगा।

"क्यों कालू ? इसे अपने पास ही रख लेते हैं। रात को कहाँ जाएगा। फिर इसे सवेरे काम पर भी आना है और रेढ़े में भींडी लगना है।"

"देख लो। पराए आदमी पर इतनी जल्दी भरोसा करने में खतरा हो सकता है। इसके न घर का पता न घाट का। कौन गाँव है, कौन जात है।" कालू ने शंका व्यक्त की।

"जात तो हमारी ही होगी।" छिब्बू ने अनुमान लगाया।

"कहीं बाजीगर··· साँहसी न हो। यह लोग जरायमपेशा माने जाते हैं।" कालू ने अपनी जानकारी पर प्रसन्न हो भवें चढ़ा लीं।

छिब्बू को सोच में पड़ा देख काली का दिल डूबने लगा और रात की स्याही उसके दिल और दिमाग में फैलने लगी। छिब्बू ने अपना हाथ कालू के कंधे पर रख दिया, "यारा, इसे कोठे पर सुला देंगे। छत पर सिर्फ एक टूटी खाट ही पड़ी है। उसे उठाकर कहाँ ले जाएगा। बाकी कमरे का दरवाजा अंदर से रोज की तरह बंद करना ही है।"

"तेरी मर्जी है।" कालू ने बात खत्म की।

कालू के कंधे से हाथ उठा छिब्बू काली की ओर मुड़ गया, "पहलवान, कहाँ जाओगे रात को ? शहर का मामला है। यहाँ तो विना पैसा लिए कोई जखम पर पेशाब भी नहीं करता। आओ, हमारे साथ।"

रेढ़े को अच्छी तरह सँभाल छिब्बू और कालू बड़े दरवाजे की ओर बढ़ने लगे। काली उनके पीछे-पीछे चल रहा था। उसके अंदर थकावट का एहसास खत्म हो गया था और मन में अपार प्रसन्नता थी कि उसे भी शहर में कुछ वक्त के लिए ठिकाना मिल गया है।

सात

छिब्बू, कालू और माँझा के साथ काम करते हुए काली को एक महीना हो गया था। बीमारी से उठने के बाद माँझा एक सप्ताह के लिए अपने गाँव चला गया था। उसके आने के बाद छिब्बू को गाँव में काम पड़ गया था और उसकी वापसी के बाद कालू को गाँव जाने की जरूरत पैदा हो गई थी।

आधी मजदूरी मिलने के बावजूद काली संतुष्ट था क्योंकि उसे रोजाना काम मिल रहा था। वह सुबह से शाम तक रेढ़ा लादने, खींचने और माल उतारने मे मसरूफ रहता था। उसे इस बात की बहुत खुशी थी कि माँझा, छिब्बू और कालू को उस पर भरोसा हो गया था और थोड़ा पढ़ा-लिखा होने के कारण पर्चों का हिसाब-किताब उसे दे दिया गया था। मुनीम की भी उस पर बेऐतबारी खत्म हो गई थी और अब वह काली को देख नाक-भौं नहीं चढ़ाता था और न ही फूँ-फाँ करता था।

रात में भी काली उन्हीं के पास सो जाता था। कबाड़ी की दुकान से उसने एक पुरानी दरी खरीद ली थी। मोटे कपड़े की कमीज सिला ली थी और टायर के रबड़ की एक चप्पल भी ले ली थी। वे खाना भी इकट्ठे खाते थे। खाली समय में उसे ताश के खेल में भी शामिल किया जाता था और उनका व्यवहार भी ऐसा हो गया था जैसे काफी पुरानी जान-पहचान हो। वे काली के बुरे-भले के बारे

में भी सोचने लगे थे और तीनों मन से चाहते थे कि उसे भी किसी-न-किसी तरह पूरी मजदूरी दिलाई जा सके। इन सब बातों को ले काली का दिल लग रहा था। मन का बोझ हल्का हो रहा था। और उसे अपनी ही साँस की आवाज, अपने ही कदमों की आहट और अपनी ही परछाईं से डर महसूस होना बंद हो गया था। जब वह दोनों के साथ शाम को घर में कदम रखता और सवेरे वहाँ से काम के लिए निकलता तो काली को बहुत खुशी महसूस होती कि शहर मे उसका भी सरनामा बन गया है।

दोपहर का खाना खा काली रेढ़े पर ही लेट गया। छिब्बू और माँझा पीपल के नीचे चले गए थे। काली ने चादर को गोल लपेट सिर के नीचे रख लिया और रोशनी से बचने के लिए आँखों पर बायीं बाँह की छतरी बना ली। काली सामने दुकान पर भी नजर रखे हुए था। एक व्यक्ति को लाला कुन्दनलाल की दुकान की ओर बढ़ते देख वह पूरी तरह सचेत हो गया।

छज्जूशाह को दुकान के सामने देख काली बहुत ही ज्यादा घबरा गया और जी चाहा कि वह रेढ़े के नीचे छिप जाए। उसे महसूस होने लगा कि वह अब पकड़ा जाएगा। जिस गाँव से वह भागकर आया था वही गाँव उसके सिर पर आ खड़ा हुआ था और पलक झपकते में ही उसे गले से दबोच लेगा।

काली ने बाँह से अपना पूरा चेहरा ढाँप लिया और साँस रोके यूँ लेट गया जैसे गहरी नींद सोया हुआ हो। कुछ ही समय में काली अपने ही ठंडे पसीने में पूरी तरह नहा लिया और उसे सर्दी महसूस होने लगी। उसने अपनी टाँगें सुकेड़ लीं ताकि छज्जूशाह उसकी ओर आकर्षित न हो।

छज्जूशाह क्षण-भर अगली दुकान के सामने भी रुका। उसने मुनीम से कुछ बातचीत की और फिर तेज कदमों से आगे बढ़ गया। काली चोर-नजरों से उसका पीछा करता रहा और छज्जूशाह को स्टेशनवाले गेट से मण्डी से बाहर निकलते देख वह उठ बैठा। उसने पूरी चादर दोनों हाथों में थाम ली और उससे सिर, मुँह और शरीर का पसीना पोंछने लगा। शरीर को अच्छी तरह सुखा वह ऊटने की ओर से छलाँग मार नीचे उतर गया। शरीर में शिथिलता और कमजोरी को दूर करने के लिए उसने दो-चार बैठक निकाली और टाँगों और बाँहों को जोर-जोर से झटका।

"क्यों, क्या हुआ, पहलवान। क्या कुश्ती लड़ने की तैयारी में हो ?" छिब्बू ने मुस्कराते हुए पूछा।

"नहीं, लेटने से सुस्ती पड़ गई थी। उसे उतार रहा था।" काली खिसियाना हो गया जैसे किसी बुजुर्ग ने उसे चोंचले करते हुए पकड़ लिया हो।

"ले चल रेढ़ा दुकान पर। खिंगरा गेट का माल भरना है।" छिब्बू दुकान की ओर बढ़ गया।

काली रेढ़े के पास खड़ा चारों ओर ध्यान से देखने लगा जैसे किसी को तलाश कर रहा हो। यह याद आते ही वह एक बार फिर सकपका गया कि छज्जूशाह के साथ जगता भी गड्डा लेकर आया होगा। अगर उसका गड्डा कहीं आसपास हुआ तो वह भी उसे पहचान लेगा। मण्डी के अंदर खड़े और घूम रहे गड्डों की ओर देखता हुआ काली उनमें जुते या जोता से बँधे हुए बैलों और गड्डेवानों की पहचान करने लगा।

"पहलवान, क्या कर रहे हो। रेढ़ा क्यों नहीं लाते ?" छिब्बू ने आवाज दी।

काली चौंक गया और रेढ़े को एक हाथ से खींचता हुआ दुकान के सामने ले आया और उसे ऊटने पर टिका दुकान के अंदर चला गया। बाहर खड़े माँझा और छिब्बू अपनी-अपनी हथेली पर खैनी रगड़ने लगे।

काली को देख मुनीम ने जेब से इकन्नी निकाल उसकी ओर फेंक दी, "जा, बनारसी पानवाले से मेरे लिए एक स्पैशल पान ला। उसे बोल देना कि मुनीम जी का पान है। वह समझ जाएगा… जल्दी आना।"

मुट्ठी में इकन्नी दबाए हुए काली दुकान से बाहर आ गया। उसकी आँखों के सामने एक बार फिर छज्जूशाह घूम गया और उसकी साँस खुश्क हो गई। काली ने जल्दी-जल्दी चारों ओर नजर दौड़ाई और फिर दुकानों के रास्ते को छोड़ रेढ़ों और रेढ़ियों में फँसता-फँसाता कृष्णनगर दरवाजे की ओर बढ़ने लगा।

"इसे हो क्या गया है ?" छिब्बू ने हैरान हो काली की ओर इशारा किया। "बनारसी पानवाले की दुकान स्टेशनवाले गेट के बाहर है और यह कृष्णनगरवाले दरवाजे की ओर जा रहा है।"

"सवेरे तो चंगा-भला था।" माँझे ने पीक गले से नीचे उतारते हुए होंठ पिचका दिए।

"दोपहर तक इसने भींडो बनकर दो फेरे भी लगाए हैं। शेखाँ बाजार और बाँसा बाजार के।" छिब्बू शशोपंज में डूब गया।

गेट से बाहर जाते हुए काली ने चादर सिर पर रख ली और जानबूझकर उसका एक पल्ला इस तरह ढीला छोड़ दिया कि उससे मुँह ढँक जाए। वह अपने शरीर को सुकेड़े, लंबे-लंबे डग भरता हुआ बनारसी पानवाले के खोखे की ओर बढ़ गया। उस समय वहाँ दो गाहक खड़े थे। काली खोखे की बगल में इस तरह जा खड़ा हुआ जैसे दीवार के साथ पेशाब कर रहा हो।

जब दोनों गाहक खोखे से हट गए तो काली लपककर सामने आ गया और इकन्नी पनवाड़ी की ओर फेंक दी, "मुनीमजी के लिए पान लगा दो। स्पैशल।"

पनवाड़ी ने एक नजर उसकी ओर देखा। फिर पान लगाने में व्यस्त हो गया। उसने पान बना कागज में लपेट दिया और एक पत्ती पर थोड़ा-सा चूना और कत्था रख काली के हाथ में थमा दिया, "मुनीमजी से कह देना बनारसी पनवाड़ी

ने पान में ऐसा मसाला डाला है कि दो दिन तक उसका जायका मुँह में बना रहेगा।"

"कह दूँगा।" काली पान और पत्ती को सँभाले मण्डी के गेट की ओर बढ़ गया।

मण्डी में प्रवेश करते ही काली को एक बार फिर छज्जूशाह की याद आ गई और उसका कलेजा मुँह को आ गया। उसे महसूस होने लगा कि उसकी साँस रुक रही है। टाँगें उसका बोझ उठाने में असमर्थ हो रही हैं और बाँहें उसके बचाव का शायद प्रयास भी नहीं कर पाएँगी।

दुकान की ओर सीधा जाने की बजाय वह वहाँ खड़े रेढ़ों में चला गया और उनके पीछे लंबा चक्कर लगा सीधा दुकान के सामने आ निकला। उसने दुकान के सामने का रास्ता इस तरह पाटा जैसे छलाँग लगा रहा हो। "लो मुनीमजी।" काली ने पान का बीड़ा और चूना-कत्थावाली पत्ती मुनीम की ओर बढ़ा दी।

"बढ़िया पान लाया है न ?" मुनीम ने पान के बीड़े को ध्यान से देखकर सूँघा।

उत्तर देने से पहले ही छज्जूशाह एक बार फिर काली की आँखों के सामने आ गया। लेकिन वह दुकान की ओर देखे बिना ही तेज कदमों से आगे बढ़ गया। काली की जुबान को सकता हो गया और उसका दिल और दिमाग दोनों बुझ-से गए और उसे महसूस हुआ कि उसके कदम लड़खड़ा रहे हैं और वह जमीन पर गिर रहा है।

मुनीम हैरान-सा काली की ओर देख रहा था। जब काली की टाँगें जोर-जोर से लड़खड़ाने लगीं तो मुनीम घबरा गया, "ऐसा लगता है कि तुम्हारे पहलवान को चक्कर आ गया है।"

फिर आगे बोला, "चक्कर आए क्यों न। काम झोटे का करता है और खोराक चिड़े की खाता है। खोराक के बिना मशक्कत करने से बड़े-से-बड़े पहलवान की भी हड्डियाँ चटख जाती हैं।"

"नहीं मुनीमजी, हड्डी तो इसकी बहुत मजबूत है। लेकिन पता नहीं इतना डरा हुआ क्यों है।··· दोपहर तक तो ठीक था। हमने दोपहर में इकट्ठे रोटी खाई है। हम दोनों पीपल के नीचे चले गए थे और यह रेढ़े पर ही लेट गया था।" पूरा ब्योरा दे छिब्बू ने काली की ओर देखा, "क्यों पहलवान, क्या हो गया है तुम्हें ?"

"कुछ नहीं उस्ताद··· जी घबरा गया था। अब ठीक हूँ।"

काली ने कटी नजरों से बाहर देखा और फिर पीठ सड़क की ओर मोड़ ली।

"नहीं पहलवान, तुम कुछ छिपा रहे हो। कोई-न-कोई बात जरूर है।" छिब्बू ने आग्रह किया।

काली का जी चाहा कि वह कहीं भाग जाए क्योंकि उसकी पोल खुलने ही

वाली थी। उसे सख्त पछतावा होने लगा कि वह इस शहर में क्यों आया। उसे कहीं दूर चले जाना चाहिए था।

छिब्बू, माँझा और मुनीम को अपनी ओर ध्यान से देखता पा वह और भी ज्यादा घबरा गया। पाँव के बल जमीन पर बैठते ही उसकी आँखें छलक आई और उसने अपना सिर हाथों में थाम लिया। "शायद घर-गाँव याद आ गया होगा।··· ऐसा होने पर आदमी बहुत उदास हो जाता है।" माँझे ने यूँ सिर हिलाया जैसे वह बात की तह तक पहुँच गया हो।

"क्या घर याद आ रहा है ?" छिब्बू ने काली को हल्का-सा झकझोरा।

काली ने चादर के पल्लू से आँसू पोंछ डाले और नाक सुड़सुड़ाते हुए इनकार में सिर हिला दिया। फिर वह भर्राई और भयभीत आवाज में बोला, "घर-गॉव तो तब याद आएँ जब उसे देखा हो।"

"तो फिर क्या हुआ तुम्हें ?" छिब्बू ने रहस्य की गहराई को एक ही जस्त में पाटने के प्रयास में उत्सुकता से पूछा।

एक क्षण चुप रह काली खाली नजरों से उनकी ओर देखने लगा। फिर धीरे-धीरे उटा और एक बार फिर आँसुओं को पोंछ दिया, "मैंने आज मण्डी मे एक भूत देखा है। उसने मुझे बहुत डरा दिया है।"

"भूत देखा है ?" मुनीम अपनी गद्दी पर ही उछल पड़ा और मुँह में पड़े पान की पीक पिचकारी बनकर उसके अपने ही कपड़ो और काली की छाती पर फव्वारे की तरह फैल गई।

काली ने बात को पूरी तरह छिपाने के लिए ही झूठ पर पूरी तरह विश्वास करते हुए आगे कहा, "मुझे वह दो बार दिखाई दिया और उसके बाद लुप्त हो गया।"

"मण्डी में तो सिर्फ उन सेठो के ही भूत घूमते हैं जो सट्टे में सबकुछ हारकर दिवाला पीटते है। बदनामी से बचने के लिए रेल के नीचे सिर दे देते हैं और फिर भूत बनकर जीतनेवाले सेठों और दलालों को डराते हैं।" मुनीम ने विश्वास-भरे स्वर में कहा।

"पल्लेदारों, पांडियों और रेढ़ेवालों को भी डराते हैं क्या ?" माँझा ने पूछा।

"पल्लेदारों और रेढ़ेवालों को डराकर उन्हें क्या मिलेगा।" मुनीम ने नाक-भौं चढ़ा ली। फिर उसने काली को समझाया, "शाम को हनुमानजी के मंदिर में प्रसाद चढ़ा देना और वीरवार को झंडेवाले पीर के मजार पर फुल्लियाँ और चिराग के लिए सरसों का तेल दे आना। फिर भूत तुम्हारी आँखो के सामने कभी नहीं आएगा। अगर कभी आमना-सामना हो भी गया तो वह तुम्हें देखते ही लुप्त हो जाएगा।" काली ने अनुमति में सिर हिला दिया तो मुनीम ने पान की बाकी पीक पीकदान में थूक दी। "ओये लालाराम, ये ले चार पर्चे। रेढ़े पर माल लदवा दो।"

लालाराम ने पर्चे ले छिब्बू को इशारा किया, "चलो, माल उठा लो।"

"क्यों पहलवान, क्या इरादा है। अभी भूत चढ़ा हुआ है या उतर गया है?" छिब्बू ने मुस्कराते हुए पूछा।

"आता हूँ।" काली ने इशारा किया। फिर पीठ पर बाँधने के लिए बोरी की तलाश में इधर-उधर झाँकने लगा।

"तू माल उठवा दे। रेढ़े पर मैं लाद दूँगा।" छिब्बू ने सुझाव दिया।

काली ने बहुत लंबी साँस ली जैसे उसने भूत से सचमुच छुटकारा पा लिया हो। छिब्बू के पीछे-पीछे वह भी दुकान के पिछवाड़े में छोटे गोदाम में चला गया। वहाँ दो ओर बोरियों की धाँगें लगी हुई थीं। तीसरी दीवार के साथ पेटी पर पेटी रखकर छत तक ऊँचा ढेर लगा दिया गया था। एक कोने में कट्टे (छोटे बोरे) रखे हुए थे।

काली ने गोदाम में चारों ओर नजर दौड़ाई और लालाराम के पास आ खड़ा हुआ। लालाराम ने टार्च जला पर्चा ध्यान से पढ़ा और फिर टार्च की रोशनी बोरियों की पहली धाँग पर फेंकी, "दो बोरी उतारो।... इधर से लो।" लालाराम ने एक ओर हटते हुए इशारा किया।

लालाराम द्वारा दिखाई गई बोरियाँ, पेटियां और कट्टे छिब्बू की पीठ पर टिकाने के लिए काली भी हाथ बटाता रहा। जब रेढ़ा लद गया तो तीनों ने दुकान के कोने में पल्लेदारों के लिए रखे मटके से पानी पिया और फिर वे रेढ़े के पास आ अपने सिरों पर साफे लपेटने लगे।

"भींडी कौन लगेगा?" माँझा ने पूछा।

"क्यो पहलवान?" छिब्बू ने भवे ऊपर चढ़ा इशारा किया।

"मैं अगले फेरे में भींडी लगूँगा। अभी तक मेरा तन-मन हिला हुआ है।" काली भयभीत था।

"ठीक है, मैं भींडी लगता हूँ।" माँझा रेढ़े के जुंगले की ओर बढ़ गया।

"उस्ताद, नशा है अभी या गोली खानी पड़ेगी।" छिब्बू मुस्कराया।

"जब तक इंजन में भाप बनेगी तब तक वह गाड़ी जरूर खींचेगा। कोयला-पानी खत्म हो गया तो इंजन भी गड्डे की तरह खड़ा हो जाएगा।" माँझा ने हँस, रेलवे स्टेशन की ओर संकेत किया, "जब मैं रेढ़े को ऊटने पर टिका दूँगा तो समझ लेना कि अब राशन की जरूरत है।"

माँझा का लहक-लहक बातें करना काली को अच्छा नहीं लग रहा था। छज्जूशाह का ख्याल उसके मन-प्राण पर अब भी सचमुच भूत बनकर छाया हुआ था। वह जल्दी-से-जल्दी मण्डी से बाहर निकल जाना चाहता था।

"उस्ताद लगो न भींडी। रेढ़ा बाहर निकालें। पीछे बोरियों से लदा ठेला आ रहा है।" दूर से एक धोती, कमीज और पगड़ीवाले व्यक्ति को देख उसने रेढ़े

के पीछे दोनों हाथ टिका अपना सिर इतना झुका लिया कि उसे अपनी चपटी नाक भी बखूबी दिखाई देने लगी थी।

धोती, कमीज और पगड़ीपोश व्यक्ति उसकी ओर ध्यान दिए बिना ही काली के पास से गुजर गया। उसके कदमों की चाप सुन काली ने अपनी साँस रोक ली। जब तक चाप की आवाज खत्म नहीं हुई उसने दम घुटने के बावजूद साँस नहीं छोड़ी।

"खिच्चौं यारा!" माँझे ने जुंगले को छाती पर टिकाते हुए कहा।

"चल ओये यारा!" रेढ़े को आगे धकेलने के प्रयास में छिब्बू और काली की एड़ियाँ जमीन के ऊपर उठ गईं।

मण्डी से बाहर खुली सड़क पर पहुँचते ही काली ने जोर की साँस ली और सिर ऊपर उठा लिया। तनाव के कारण उसका चेहरा बहुत ज्यादा सुर्ख और पसीने से सराबोर था। उसने बारी-बारी बाँहों से रगड़ चेहरे का पसीना पोंछा और छज्जूशाह की याद को भुलाने का यत्न करता हुआ वह और भी ज्यादा भयभीत हो जाता और उसे महसूस होता कि शहर में उसके जो थोड़े-बहुत पाँव जमे थे, वे भी उखड़ गए हैं। उसे विश्वास होने लगा कि उसने तो गाँव को पूरी तरह त्याग दिया है लेकिन गाँव उसका पीछा नहीं छोड़ रहा है। उसे शक होने लगा कि बहुत जल्दी उसका भण्डा फोड़ा जाएगा और यही लोग पत्थर मार-मार उसकी जान ले लेंगे।

सूरज छिपने पर उन्होंने रेढ़ा पूर्व निश्चित स्थान पर टिका दिया। मण्डी की अधिक दुकानों में बिजली के बल्ब जगमगा उठे थे। मालिकों, मुनीमों और कारिंदों के अलावा उनमें बहुत कम लोग रह गए थे और मुनीम बड़े-बड़े बही-खाते खोले हुए दिन-भर का हिसाब-किताब जोड़ने में मसरूफ थे।

"चलो, हिसाब कर लें।" माँझा ने सिर का साफा उतार मुँह और बाजुओं से पसीना पोंछा।

"पहलवान, जल्दी करो। मुनीम उठ गया तो मुश्किल होगी।" छिब्बू ने पतूही की जेब में रखे पर्चो को बाहर निकाल लिया।

"आप ही कर लो। मैं रेढ़े पर लेटकर थोड़ा सुस्ता लूँ।" काली ने भयभीत हो दुकान से मुँह फेर लिया और उचककर रेढ़े के ऊपर चला गया।

"पहलवान भूत से बहुत डर गया है। आज इसका इलाज करना ही पड़ेगा।" छिब्बू हँसा।

"मावा की छोटी गोली दे दो। भूत तो क्या, उसके बाप को भी भगा देगा।" माँझा भी साफे से छाती को रगड़-रगड़कर पोंछते हुए हँस दिया।

काली ने चादर इकट्ठी करके उसे सिर के नीचे रख लिया। उसने टाँगें पूरी तरह पसार लीं और सीधा लेट आकाश की ओर देखने लगा। ऊँचे-ऊँचे चौबारों

में घिरे हुए आकाश का एक टुकड़ा ही दिखाई दे रहा था। मण्डी के अंदर, रेढ़ियाँ, रेढ़े, ठेले, गड्डे और ट्रक आने-जाने के कारण गर्द-गुबार फैला हुआ था और शाम के धुँधलके में आकाश बहुत मैला नजर आ रहा था और तारे भी बुझे-बुझे-से दिखाई दे रहे थे।

काली को याद था कि छज्जूशाह की बात छिपाने के लिए उसने सबको भूत की मनघड़ंत कहानी सुनाई है। अब उसे सच बनाने के लिए पता नहीं और कितना झूठ बोलना पड़ेगा।

काली को ख्याल आया कि छज्जूशाह उसी की टोह में शहर आया होगा। लेकिन छज्जूशाह को उसके साथ कोई द्वेष और बैर नहीं होना चाहिए। उसने तो अपने चाचा का पुराना मरा हुआ उधारसमेत चुका दिया था। उससे कभी ऊँची-नीची बात नहीं की थी। उसका किसी प्रकार का नुकसान भी नहीं किया था।

यह सोच काली को कुछ शांति मिली कि छज्जूशाह गाँव में दुकान और व्यापार चलाता है। गल्ला-अनाज गाँव और इलाके से खरीद करता है और शहर की मण्डी में बेचता है। गाँव से अपनी दुकान के लिए सौदा लेने आया होगा। उसके तो शायद चित-चेते भी नहीं होगा कि वह इस शहर मे रहता है और अनाज-मण्डी में रेढ़ा खींचता है।

काली को अफसोस होने लगा कि वह छज्जूशाह को देख अकारण ही बहुत घबरा गया था। उसे यमदूत समझ अपनी साँसें गिनने लगा था। छज्जूशाह से मुलाकात हो जाती तो शायद वह उस पर तरस खा लेता। मण्डी में व्यापारियों से उसके संबंध होंगे। वह सिफारिश करके किसी के पास उसे पक्के तौर पर पल्लेदार रखवा देता। लेकिन उसने उलटा छज्जूशाह को भूत बना दिया!

धीरे-धीरे काली का भय आत्मग्लानि में बदलने लगा। उसे महसूस होने लगा कि उसने अपना बहुत ज्यादा नुकसान कर लिया है। अब भूत से छुटकारा पाने के लिए उसे मंदिर जाना पड़ेगा और हनुमानजी को सवा आने का प्रसाद चढ़ाना होगा। इस सवा आने से वह आराम से एक वक्त की रोटी खा सकता था।

मंदिर के बारे में सोच काली की आँखें फैल गईं। उसे मंदिर में गए हुए कई वर्ष हो गए थे। उसे सिर्फ इतना याद था कि वह आखिरी बार कानपुर में जन्माष्टमी के दिन चालवालों के संग मंदिर गया था और वहाँ भजन-कीर्तन सुना था। भजन के शब्द तो उसके दिमाग में नहीं आ रहे थे लेकिन ढोलक, हारमोनियम और चिमटे की धमक कानों में गूँज गई थी।

काली के मन में मंदिर जाने की उत्सुकता जाग उठी क्योंकि गाँव में पंडित संतराम उन्हें मंदिर के अंदर जाने तो क्या, आसपास भी फटकने नहीं देता था। काली को चिंता होने लगी कि शहर के मंदिर में भी कहीं पंडित संतराम न बैठा हो। लेकिन इस बात को ले उसकी ढाँढ़स बँध गई कि छिब्बू ने मंदिर जाने की

बात सोच-समझकर ही की होगी। उसने छिब्बू से पूछा तो नहीं था लेकिन बातों-बातों में उसे इतना पता चल गया था कि वे दोनों भी अधर्मी हैं। उन्होंने भी काली से उसकी जात के बारे में कभी खोज-पड़ताल नहीं की थी। एक बार सिर्फ इतना कहा था कि रेढ़ा-ठेला खींचने का काम गरीब लोग ही करते हैं और वे अधिकतर अधर्मी ही हैं।

छिब्बू और माँझा हिसाब करके दुकान से बाहर निकले तो काली भी छलाँग मार रेढ़े से नीचे आ गया। वह अपने-आपको पहले से बेहतर महसूस कर रहा था। थकावट का एहसास कम हो गया था और शरीर में चुस्ती भी आ गई थी। वह लपककर उनके पास चला गया। छिब्बू ने सड़क पर फैली बल्ब की रोशनी में काली को सिर से पाँव तक देखा और फिर से उसके साथ छेड़-छाड़ करने लगा। "पहलवान कहो, भूत अभी सिर पर चढ़ा हुआ है या भाग गया ?"

उत्तर में काली सिर्फ मुस्करा दिया तो छिब्बू ने जोर दे पूछा, "पहलवान, बताता क्यों नहीं ?"

"उस्ताद, क्या बताऊँ।" काली खिसियाना हो गया। बात पलटने के लिए उसने पूछा. "मंदिर कब चलना है ?"

"पहले घर चलते हैं। कमेटी के नल पर नहाएँ-धोएँगे। शरीर से दिन-भर की मिट्टी-गर्द और पसीना उतारेंगे।" छिब्बू ने एक-एक शब्द पर जोर दिया।

"मंदिर है कहाँ पर ?"

"मंदिर बहुत हैं।... एक तो मण्डी में ही है। वहाँ ज्यादातर सट्टारिए आते हैं। भगवान से सौदा करने।... इधर कृष्णनगर में भी मंदिर है... उधर मुहल्ला गोविंदगढ़ में भी शिवाला है।... बड़े मंदिर शहर में हैं। सीतला मंदिर, देवी तलाब मंदिर... और कई हैं। खाता-पीता शहर है। यहाँ मंदिरों और बाबों की कोई कमी नहीं है।"

"हम किस मंदिर में जाएँगे ?" काली ने पूछा।

"कृष्णनगरवाले मंदिर में चलेंगे। वहाँ सेठानियाँ देखने को मिलेंगी। सोने की टूम्बों से लदी-फँदी।" छिब्बू हँसा. "मण्डी में तो सारा दिन मोटे-मोटे लालों, नाक-मुँह चढ़ाते मुनीमों, टेढ़े-मेढ़े पाण्डियों, पल्लेदारों और रेढ़ेवालों के ही दर्शन होते हैं।"

"उस मंदिर का पंडित बहुत खुनसी है। गरीब आदमी को देख उसके माथे का तिलक त्यूड़ियों के कारण त्रिशूल बन जाता है।" माँझे ने नाक सिकोड़ ली।

"उस्ताद, वहाँ पर ज्यादातर सेठानियाँ आती हैं. लालायनें होती हैं। बछड़ियों और गुओं के बीच साँड चला जाए तो दुर-दुर तो होगी ही।" छिब्बू ने समझाया। "लेकिन आज वहीं चलेंगे।... नाले मुजबगड़ नाले देवी के दर्शन।... प्रसाद भी चढ़ा आएँगे और साथ में सेठानियों के दर्शन-परशन भी हो जाएँगे।"

उन्होंने दुकान के बाहर ही दिन की मजदूरी के पैसे आपस में बाँट लिए और

धीरे-धीरे कदम उठाते हुए मण्डी के कृष्णनगर द्वार की ओर बढ़ने लगे। काली को मण्डी में चलते हुए अब डर महसूस नहीं हो रहा था और वह बहुत विश्वास से सीधा चल रहा था और धरती पर उसका पाँव जमकर पड़ रहा था।

घर पहुँच वे कुछ समय के लिए सुस्ताए, फिर छोटी सड़क के किनारे कमेटी के नल पर नहाए। वापस लौट उन्होंने सुबह के धोए हुए कपड़े पहने और मंदिर जाने के लिए तैयार हो गए।

"पहलवान, सवा आना प्रसाद पर लगेगा और मावा की गोली दो आने में आएगी। प्रसाद पुजारी और भगवान खा लेंगे और बचा-खुचा दूना तेरे हाथ में थमा देंगे। भूत जाता है या नहीं, इसका पूरा भरोसा नहीं है। मेरी मानो तो मावा की एक गोली ले लो। सिर्फ तीन पैसे का फर्क है। उसमें तुम्हारा कोई हिस्सेदार भी नहीं होगा। बिलकुल अकेले तेरे मुँह-पेट में जाएगी। गोली के अंदर जाते ही अपने बापसमेत भूत बाहर होगा। ऊपर से भूख भी बहुत चमकेगी। रोटी खाने का बहुत स्वाद आएगा।" काली को विश्वास दिलाने के लिए माँझा एक एक शब्द पर जोर दे रहा था, "और ज्यादा दूर भी नहीं जाना पड़ेगा। बस बाहर निकलते ही पनवाड़ी से मिल जाएगी। गोली पर चाँदी का वरक भी लगा होगा।"

"पहलवान, माँझा के झाँसे में मत आना। यह तुम्हे बरबाद कर देगा। जब यह पहली बार शहर आया था तो ताजा गाजर-सा कोमल, लाल और तंदुरुस्त था लेकिन अब सूख रहा है, काठे बेर-सा।" छिब्बू ने चेतावनी दी।

"पहलवान, सयाने के कहे और आमले के स्वाद का देर बाद ही पता चलता है। आगे तेरी मर्जी है…।" माँझा ने ध्यान से काली की ओर देखा। "भूत के मामले में हनुमानजी तेरी मदद करते हैं या नहीं, कोई भी विश्वास से नहीं कह सकता लेकिन मावे की गोली का जब तक तेरे ऊपर असर रहेगा, भूत तो क्या उसका बाप भी तेरे पास नहीं फटकेगा।"

"मावा खाने पर आदमी खुद जो भूत बन जाता है।" माँझा की ओर देख छिब्बू मुस्कराया।

"आज सस्ता इलाज करके देख लेते हैं। फायदा नहीं होगा तो आपकी बताई तरकीब भी आजमा लेंगे।" काली ने माँझा की ओर झाँक उसे बंदगी की।

"अच्छा यारा, मैं चला। पनवाड़ी के पास माल खत्म हो गया तो दूर जाना पड़ेगा… आटा मिल के सामने।" माँझा हाथ लहराता हुआ पनवाड़ी के खोखे की ओर बढ़ गया।

छिब्बू और काली मुहल्ला कृष्णनगर की ओर चल दिए। इस मुहल्ले में अधिकतर मण्डी के लाले ही रहते थे। गलियाँ शहर के पुराने मुहल्लों की गलियों के मुकाबले में ज्यादा चौड़ी थीं लेकिन मकान बड़े और दो-तीनमंजिला होने के कारण उनमें दिन के समय भी धूप कम ही आती थी।

गली के मुहाने पर हलवाई की दुकान से सवा आने की बूँदी ले छिब्बू के साथ काली उस गली में घुस गया जो मुहल्ले के बीचोबीच मंदिर की ओर जाती थी।

अधिकतर मकान सीमेंट से पुते हुए थे और उनके मुख्य द्वार ऊँचे और बड़े थे। कई मकानों के ऊपर सीमेंट से मुरली मनोहरश्याम, सीताराम, लक्ष्मी, हनुमान या भगवान शिव की मूर्तियाँ बनाई हुई थीं।

कई मकानों के सामने गली में ही पली हुई विलायती नस्ल की गायें और भैंसें बँधी थीं। काली इन आलीशान मकानों के वैभव से भयभीत हो प्रसाद का दूना सावधानी से सँभाले छिब्बू के पीछे-पीछे चलता रहा। रास्ते में उन्हें मंदिर से लौटती या उधर जाती हुई कुछ बनी-ठनी स्त्रियाँ और बच्चे भी मिले।

मंदिर में घंटियों की आवाज सुन काली के मन में कौतूहल-सा होने लगा। ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ रहे थे, घंटियों की आवाज मुखर हो रही थी और गली में रौनक भी अधिक हो गई थी।

गली एक चौगान में खत्म हो गई। इस चौगान में दो और गलियाँ भी मिलती थी। चौगान सजी-धजी स्त्रियों और बच्चों से भरा हुआ था। मर्द कम थे और उनमें भी अधिकतर सोटी का सहारा ले चल रहे थे।

मंदिर के मुख्य द्वार पर भी देवी-देवताओं की रंगदार आकृतियाँ थीं। द्वार के एक ओर फूल और प्रसाद बेचनेवाले बैठे थे। दूसरी ओर भिखारी और भिखारिनें बैठे और खड़े थे।

मंदिर से बाहर निकलनेवाले हर श्रद्धालु से प्रसाद लेने के लिए वे उसे घेर लेते। काली और छिब्बू बचते-बचाते मुख्य द्वार में चले गए। ऊँची छत से लोहे के मोटे संगल से लटक रही पीतल की बड़ी घंटी को छिब्बू और काली ने बारी-बारी जोर से बजाया। टन-टन की गूँजदार आवाज सुन काली का मन कौतूहल से भर गया और वह रोमांचित हो उठा।

मुख्य द्वार से वे मंदिर के खुले आँगन में पहुँच गए। बीच में ऊँचे गुंबदवाले मंदिर के साथ कई और छोटे मंदिर भी थे। उन सब पर छोटी-बड़ी गेरुए और सुर्ख रंग की पताकाएँ लहरा रही थीं।

"आँगन औरतों, बच्चों और बूढ़े मर्दों से भरा हुआ था और वे हर मंदिर में जा घंटी अवश्य बजाते थे। इस मंदिर में बड़ी मूर्ति हनुमानजी की है। छोटे मंदिरों मे दूसरे देवी-देवताओं की भी मूर्तियाँ हैं। धन-दौलत की देवी लच्छी की मूर्ति भी बड़ी है।" छिब्बू काली के कान में फुसफुसा रहा था, "लालों और सेठों का मुहल्ला है न। इन्हें ज्यादा जरूरत भी बजरंगबली और लच्छमी (लक्ष्मी) की ही है।"

छिब्बू के पीछे-पीछे काली भी हनुमानजी के मंदिर में घुस गया। दोनों ने बारी-बारी घंटी बजाई और आगे बढ़ गए। जब उन्हें जगह मिली तो वे छोटे द्वार में जा

खड़े हुए। सामने पिछली दीवार के साथ हनुमानजी की बहुत बड़ी मूर्ति थी। हनुमानजी के कंधे पर भारी गुर्ज था और पूरी मूर्ति गहरे सिंदूर से अच्छी तरह पुती हुई थी।

छिब्बू और काली ने झुककर मूर्ति को प्रणाम किया। मूर्ति के आगे कई प्रकार की अगरबत्तियाँ जल रही थीं और पूरा मंदिर उनकी तेज सुगंध से भरा हुआ था। द्वार के अंदर एक ओर पुजारी बैठा था। वह श्रद्धालुओं से प्रसाद ले अधिक हिस्सा एक परात में उँड़ेल लेता था और दूने या थाली में थोड़ा प्रसाद अपनी ओर से मिला लौटा देता था। वह थोड़े-थोड़े वक्फे के बाद कुछ ऊँची आवाज में एक ही बात दोहराता था, "द्वार से हट जाओ। भगतों को दर्शन करने दो।"

हनुमानजी के मंदिर में प्रसाद चढ़ा छिब्बू और काली पीछे हट गए। अन्य लोगों के साथ बाकी देवी-देवताओं के दर्शन करने के लिए वे परिक्रमा में घूमने लगे। मन्दिरों में सजी मूर्तियाँ काली को बहुत सुन्दर लगीं। उन्हें रेशम आदि के बहुत ही खूबसूरत कपड़े, गहने और चमचमाते मुकुट पहनाए हुए थे।

काली ने मन-ही-मन इस मंदिर का अपने गाँव के मंदिर से मुकाबला किया जो उसने सिर्फ बाहर से ही देखा था। उसे महसूस हुआ कि गाँव के लोगों की तरह वहाँ के मदिर और भगवान भी गरीब हैं।

छिब्बू और काली परिक्रमा का चक्कर लगाते हुए सब मंदिरों में गए। चोर-नजरों से वे सजी-धजी लालायनों, सेठानियों, उनकी जवान लड़कियों को भी देख लेते थे। कुछ सुंदर लड़कियों और युवा स्त्रियों को देख छिब्बू मचल उठा। वह काली का हाथ पकड़ उसकी ओर झुक गया, "शहर में सोहप्पन बहुत है। देखा उन लड़कियों को। जैसे तराशकर बनाई हों।"

छिब्बू कुछ उदास हो विचारमग्न हो गया, "हों भी क्यों न ! मक्खन-मलाई खाओ, बादाम-गिरीवाला दूध पियो तो रंग-रूप में निखार अपने-आप आएगा।"

परिक्रमा का दो बार चक्कर लगा वे मंदिर से बाहर आ गए। श्रद्धालुओं को भिखारियों द्वारा घिरा देख काली ने दूने का मुँह खोल दिया, "भा जी, प्रसाद ले लो। भिखारी तो लोगों के हाथों पर झपट रहे हैं।"

मुख्य द्वार के एक कोने में खड़े हो दोनों ने प्रसाद खाया। माँझा के लिए प्रसाद रख काली ने बाकी भिखारियों में बाँट दिया।

"पहलवान, क्या भूत उतर गया कि नहीं ? खून-पसीने की कमाई का सवा आना खर्च किया है।" छिब्बू ने काली का कंधा जोर-जोर से थपथपाया।

"हाँ भा जी, उतर गया है।" काली ने बहुत इत्मीनान से साँस छोड़ी, जैसे उसके सब दुख-दर्द दूर हो गए हों।

"पहलवान, बहुत खुश नजर आ रहे हो। लगता है भूत जाते समय तेरे कान में कोई अच्छी फूँक मार गया है।" छिब्बू ने काली को टहोका दिया। फिर उसका

हाथ पकड़ गंभीर हो उसकी आँखों में झाँकने लगा, "कल सवेरे कालू वापस आ जाएगा। उसके गाँव का एक आदमी मंडी में मुझे दिन में बता गया था।"

काली के चेहरे पर छाया हुआ इत्मीनान हवा हो गया। उसका मुँह लटक गया और चाल धीमी पड़ गई। छिब्बू भी उसकी ओर ध्यान से देख रहा था। उसका हाव-भाव भाँप उसने काली का प्यार से कंधा थपथपाया, "पक्का नहीं कि कल सवेरे कालू आ ही जाए। उसे छह दिन पहले आना चाहिए था। लेकिन नहीं आया। शायद कल भी घीसी मार जाए। उसकी जोरू भी हर हीले उसे रोकना चाहेगी और वह भी कोई-न-कोई बहाना ढूँढ ही लेगा।"

काली ने कोई उत्तर नहीं दिया। सिर झुकाए धीमी गति से चलता रहा।

"शहर में काम की कमी नहीं है। बस मौका मिलना चाहिए और हिम्मत होनी चाहिए। मेहनत-मशक्कत करके आदमी दो टैम की रोटी तो कमा ही लेता है। लेकिन मेहनत के हिसाब से मजदूरी नहीं मिलती। गरजमंद को झुकना भी पड़ता है।" छिब्बू काली को शहर की परिस्थितियों से परिचित करा रहा था। "अब हमें ही ले लो। सवा रुपया दिहाड़ी पिछले पाँच साल से चल रही है। बढ़ाने के लिए कहते हैं तो लाला धमकी देता है कि और पाण्डी-पल्लेदार और रेढ़ेवाले मिल जाएँगे। मिल भी जाते हैं...। वह भी कम मजदूरी पर।" छिब्बू उदास हो गया, "अगर मेरे पास गाँव में एक खेत भी होता तो मैं कभी शहर में रेढ़ा न खींचता। गाँव में अव्वल तो काम मिलता नहीं। जमीन तो बँधी-बँधाई है। वह तो बढ़ती नहीं। लेकिन आदमी बढ़ जाते हैं। काम मिल जाए तो मजदूरी बहुत कम। ऊपर से चोधरी या सरदार की धौंस। साल में बुवाई, नलाई, कटाई, गन्ने की पिराई पर चार-छह महीने काम करो। बाकी टैम डंडे बजाओ।"

काली ने कोई टिप्पणी नहीं की क्योंकि कल सवेरे कालू की वापसी की खबर ने जैसे उसके प्राण सूँत लिए थे। और वह गहरी चिंता में डूब गया था।

तदूर पर रोटी खाते समय भी काली खामोश रहा। माँझा पर भी चुप्पी की पिनक सवार हो गई थी और वह उखड़ी हुई आवाज में कोई-न-कोई बोली गुनगुनाने की कोशिश कर रहा था। लेकिन उसकी जुबान शब्दो को सहारा नहीं दे रही थी।

घर पहुँचते ही काली सीधा छत पर चला गया। उसके बोझ के नीचे खाट ची-चराँ करने लगी। आवाज सुन छिब्बू बोला, "पहलवान, नीचे हमारे पास ही सो जा। कालू की खाट खाली पड़ी है।"

छिब्बू का सुझाव सुन काली को सहसा याद हो आया कि कल सवेरे कालू आ जाएगा तो उसकी काम और खाट दोनों से छुट्टी हो जाएगी। उसने मन की बात को छिपाते हुए कहा, "उस्तादजी, कमरे में गर्मी महसूस होती है, ऊपर खुली हवा में बहुत अच्छा लगता है।"

"इतनी शेखी मत बघार। सवेरे सर्दी हो जाएगी और तू जुलाहे के जमाई की तरह ठिठुरकर मर जाएगा।" छिब्बू हँसा।

"ठंड लगी तो मैं नीचे आ जाऊँगा।" सुबह की सर्दी उसे हड्डियों में अभी से महसूस होने लगी थी।

वह दूर तक फैली हुई आबादियों को देखने लगा जो गलियों और सड़कों की मैली रोशनी में धूमिल-सी नजर आ रही थीं। रेलवे स्टेशन के इलाके में अधिक रोशनी थी और इंजनों की सीटी, मालगाड़ी के डिब्बों की शंटिंग की खटाखट और मुसाफिरों, कुलियों और ताँगों का शोर वातावरण पर छाया हुआ था।

काली को रात बहुत भली और सुहानी प्रतीत हो रही थी और वह नथुने फुला-फुलाकर खुली हवा को फेफड़ों में समेट रहा था। वह शहर की जगमग करती और चमचमाती रात का गाँव की अँधेरी और सुनसान रात से मुकाबला करने लगा। उसने अंदाजा लगाया कि अगर वह गाँव में होता तो उसकी कम-से-कम एक चौथाई नींद पूरी हो चुकी होती। और यहाँ शहर में न केवल वह जाग रहा है बल्कि फिलहाल उसे जल्दी नींद आने की संभावना भी नहीं है।

तड़के मौसम सर्द होते ही काली की आँख खुल गई। उसने चादर को अपने शरीर के चारों ओर अच्छी तरह लपेट लिया और उसके छोरों को पाँव, सिर और धड के नीचे पूरी तरह दबाया लेकिन सर्दी के विरुद्ध काली की यह किलेबंदी नाकाफी साबित हुई। उसने खाट से दरी उठा उसकी जगह चादर बिछा दी और दरी अपने ऊपर तान ली। लेकिन इस युक्ति से भी सर्दी का मुकाबला नहीं किया जा सका। अब सर्दी का हमला ऊपर से हटकर नीचे से होने लगा था क्योंकि पतली चादर ठंडी हवा की घुसपैठ को रोकने में नाकाम थी।

कालू की वापसी का ख्याल आते ही काली के अंदर सर्दी का एहसास और भी बढ़ गया। यह सोच उसकी चिंता कुछ कम हुई कि छिब्बू और उसके साथी शायद उसे यहाँ रहने से मना नहीं करेंगे क्योंकि वह अपने हिस्से का किराया दे ही रहा है। लेकिन काम का क्या बनेगा। रेढ़े पर चौथे आदमी की गुंजाइश नही है। इनके पास ठेला होता तो शायद दो आदमियों की अलग जोत बनाई जा सकती।

काली इन्हीं चिंताओं में खो गया कि उसे सर्दी के एहसास से मुक्ति मिल गई। वह छत पर टहलने लगा। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था और रह-रहकर उसके मन में हौल उठ रहा था। उसे उम्मीद की एक छोटी-सी किरण नजर आती थी कि छिब्बू और उसके दोनों साथियों ने उसे स्वीकार कर लिया है और वे उसके बारे में अवश्य चिंतित होंगे। छिब्बू को तो इस बात का पूरा एहसास है। इसीलिए तो उसने कालू की वापसी की बात की थी।

कमरे के बाहर छोटे-से आँगन में छिब्बू की आवाज सुन काली नीचे उतर आया।

"कहो पहलवान, तड़के सर्दी से अकड़ा तो नहीं ?" छिब्बू ने काली को सीढ़ी से नीचे उतरते हुए देखकर पूछा।

"सर्दी है। लेकिन इतनी नहीं कि आदमी अकड़ जाए। खेसी की सर्दी है।" काली खुनकी के एहसास को दबाने की कोशिश में मुस्करा दिया।

"चलो, जंगल-पानी के लिए बाहर हो आएँ ?"

"उस्ताद कहाँ है। क्या उसे नहीं चलना ?" काली ने माँझा की तलाश में चारों ओर झाँका।

"अमली को जंगल-पानी की कम ही जरूरत पड़ती है।··· इसे यहाँ आए दस दिन हो गए हैं लेकिन वह जंगल-पानी के लिए सिर्फ चार-पाँच बार ही गया है। ··· वह सारे कपड़े लपेटकर सो रहा है। उसे और नींद लेने दो।" छिब्बू ने कमरे में झाँकते माँझा की ओर देखा।

छिब्बू और काली कमेटी के नल पर नहा-धोकर लौट आए थे लेकिन माँझा अभी बिस्तर में करवटें बदल रहा था।

"उठ जा उस्ताद, टैम हो रहा है।" छिब्बू ने पाँव से माँझा की कमर में हल्का-सा टहोका दिया।

"खुश्की हो गई है··· साँरा की नाली सूख-सी गई है। नमकीन लस्सी पीकर ही उठूँगा।" माँझा ने करवट बदल ली। जेब में हाथ डाले उसने इकन्नी निकाल काली की ओर उछाल दी, "पहलवान, मिट्ठू हलवाई से आध पाव दही की नमकीन लस्सी ला दे।"

फिर उसने हाथ नीचे झुका लोटा उठाया और काली की ओर बढ़ा दिया, "ले, इसमें ले आना। साला, अपना गिलास देने में अक्सर आनाकानी करता है।"

"आनाकानी क्यों न करे। वह घर-घर गिलासों में लस्सी भेजने लगा तो उसकी दुकान पर आए गाहकों को हथलियाँ जोड़कर लस्सी पीनी पड़ेगी।" छिब्बू ने कहा।

लोटा लिए काली मिट्ठू हलवाई की दुकान पर आ गया। वहाँ लस्सी पीनेवालों में ज्यादातर पल्लेदार और अन्य गरीब लोग ही थे। दुकान भी बहुत मामूली और गंदी थी। मिट्ठू के कपड़े इतने मैले थे कि शायद वह भी उनका असली रंग भूल गया था।

लस्सी की महक से काली के मुँह में पानी आ गया। उसने जेब के पैसों का हिसाब लगाया। आधा पाव दही की मीठी लस्सी ढाई आने की और पाव-भर दही की डेढ़ आने की थी। लेकिन उसने लस्सी पीने का इरादा छोड़ दिया क्योंकि आज कालू के आ जाने पर वह बेकार हो जाएगा और पता नहीं कितने दिनों तक ताजा कमाई का मुँह देखना नसीब नहीं होगा। लेकिन लस्सी की महक उसके नथुनों में इस हद तक समा चुकी थी कि उसे अपने-आपको रोक पाना कठिन महसूस हो रहा था।

काली को दुकान के सामने चुप खड़ा देख मिट्ठू ने पूछा, "क्या चाहिए, पहलवान ?"

"आधा पाव की नमकीन लस्सी इसमें डाल दो।" काली ने लोटा उसकी ओर बढ़ा दिया। फिर एकदम उसके दिमाग में ख्याल कौंधा कि आज कालू के आ जाने से उसका सत्यानाश हो जाएगा और मीठी लस्सी पी लेने से सवा सत्यानाश। आज सवा सत्यानाश होने ही दिया जाए। काली ने कुछ ऊँची आवाज में कहा, "और पाव-भर दही की मीठी लस्सी मेरे लिए बना दो।"

मिट्ठू ने क्षणभर काली की ओर देखा जैसे उसे तोल रहा हो और उसकी पैसे देने की हैसियत के बारे में यकीन कर लेना चाहता हो। फिर उसने काली से पूछ ही लिया, "क्या मंडी में काम करते हो ?"

"हाँ जी।" काली ने अनुमति में सिर हिलाया।

"क्या पल्लेदार हो ?"

"रेढ़ा खींचते हैं।"

"किस दुकान का माल ढोते हो ?"

"सेठ कुन्दनलाल की दुकान का।" काली ने विश्वास-भरे स्वर में उत्तर दिया।

"अच्छा··· अच्छा।" मिट्ठू सिर हिलाते हुए प्रसन्नचित्त हो गया जैसे उसे काली की हैसियत के बारे में पूरा यकीन हो गया हो।

काली ने मीठी लस्सी बहुत चुस्कियाँ लेकर पी। वह इतना प्रसन्न था जैसे उसका कोई वर्षों पुराना स्वप्न पूरा हो गया हो। वह जीभ पर मीठी लस्सी के स्वाद को महसूस करता हुआ हाथ में नमकीन लस्सी का लोटा थामे कमरे की ओर बढ़ने लगा। यह सोच वह और भी खुश हो गया कि शायद कालू आज भी नहीं आएगा। अगर उसने आना होता तो कल शाम तक पहुँच जाता या फिर आज सवेरे अब तक आ गया होता। मीठी लस्सी के स्वाद और कालू के वापस न आने के ख्याल पर प्रसन्न वह सीढ़ियाँ चढ़ने लगा।

उसने आखिरी सीढ़ी पर पाँव रखा तो छिब्बू दरवाजे मे खड़ा उधर ही झाँक रहा था। उसके चेहरे पर हैरानी फैली हुई थी। काली को देख उसने लबी साँस छोड़ी, "मैंने सोचा कि पता नहीं इतनी धमक पैदा करता हुआ कौन हमारी सीढ़ी चढ़ रहा है। मैं तो डर गया था कि पुलिस का हवलदार न हो। लेकिन निकला अपना पहलवान।"

काली झेंप गया और कोई उत्तर दिए बिना ही खिसियाना हो कमरे में चला गया और नमकीन लस्सी का लोटा माँझा के हाथ मे थमा दिया।

"जीते रहो। खुश रहो। आबाद रहो, पहलवान।" माँझा ने लोटा पकड़ते हुए काली को ढेर सारे आशीर्वाद दिए।

लस्सी पी माँझा ने खाट पर बैठे-बैठे ही लगातार तीन-चार डकार मारे और

फिर खाट से नीचे उतरा, "कोयला ज्यादा हो और पानी कम हो तो बुरा और अगर पानी फालतू हो और कोयला थोड़ा पड़ जाए तो भी खराबी होती है। अब चूँकि दोनों चीजें बराबर हैं इसलिए शरीर मेलगाड़ी के इंजन की तरह चलेगा।"

जब वे मण्डी को जाने के लिए तैयार हो गए तो छिब्बू ने बाहर धूप की ओर देखा। "लगता है कालू आज भी घर में ही रह गया।"

"उस्ताद, जोरू की बाँहें फौलाद के संगल से भी ज्यादा मजबूत होती हैं और फिर अगर गले में पड़ी हों तो··· जोरू की गुलामी में मजा-ही-मजा है।" माँझा ने चटखारा मारा।

"चलो चलें।" छिब्बू ने खाट से साफा उठा कंधे पर रख लिया।

इतनी देर में आखिरी सीढ़ी पर कालू ने कदम रखा। उसे देख छिब्बू प्रसन्न हो गया, "कालू, तेरी उम्र बहुत लम्बी है। तेरी ही बात कर रहे थे कि तू आ गया।"

"यारा, पहले ही आ जाता। जनानी का जी ठीक नहीं था। उसके दवा-दारू में लगा रहा।" कालू ने बगल से छोटी-सी पोटली निकाल खाट पर रखते हुए बताया।

"क्या हो गया तेरी जनानी को ?" छिब्बू ने चिंतित हो पूछा।

"होना क्या है। इसने शहर लौटने की बात की होगी। इसे रोकने के लिए उसने जी खराब कर लिया होगा।" माँझा हँस दिया।

"तू और रुक जाता। यहाँ काम तो चल ही रहा था।" छिब्बू ने कालू की ओर देखा।

"नहीं, दवादारू चल रहा है। पहले से बहुत ठीक है। फिर उसकी देख-रेख के लिए घर मे माँ और मेरी दो बहनें हैं।··· वैसे भी मेरा कोई काम नहीं था।" कालू ने बताया। "रोटी खा आए ?"

"ना, अभी कहाँ ?"

"एक-एक पराँठा खा लेते हैं। जल्दी में ज्यादा बन नहीं सके।" कालू ने पोटली खोल दी और फिर एक-एक पराँठा सबकी हथेली पर रख दिया और ऊपर आम के अचार की एक-एक फाँक टिका दी।

आम के अचार की सौंधी खुशबू से सबको अपने-अपने गाँव याद आ गए और वे उसी में खोए हुए पराँठा खाते रहे। फिर वे आम की फाँक को चूसते हुए गाँव की याद में और भी ज्यादा डूब गए।

वे एक बार फिर जाने के लिए तैयार होने लगे तो छिब्बू ने कालू पर निगाह डाल अपने बाकी साथियों की ओर झाँका, "क्यों यारो, अब पहलवान का क्या करना है ?"

"पहलवान का क्या करना है। तुम्हीं बताओ ?" कालू ने पूछा।

"इसके लिए काम ढूँढ़ो। और क्या करना है ?" माँझा ने कहा।

"उस्ताद, काम कहाँ मिलेगा।" छिब्बू कुछ निराश था।

"और कहीं नहीं तो बूटा मण्डी के पास चमड़े के कारखाने में काम मिल जाएगा, वहाँ अपने गाँव का आदमी काम करता है। अब तो वह मिलेगा नहीं। कल सवेरे ही बात हो सकेगी।" माँझा ने विश्वास दिलाया।

"कल की बात तो कल देख लेंगे। मुझे तो आज की फिक्र है।" छिब्बू ने काली की ओर हमदर्दी-भरी निगाहों से देखा।

"आज इसे आराम करने दो। इसने हम सबको इतना सुख दिया है। इसे भी तो एक दिन आराम करना चाहिए। बाकी रहा रोटी-पानी, वह हम खिला देंगे। क्यों कालू ?"

"ठीक है उस्ताद।" कालू ने कुछ बुझी हुई आवाज में उत्तर दिया जैसे काली के बेकार हो जाने का उसे भी दुख था।

"पहलवान, आज तू ऐश कर, मौज मार। दोपहर को रोटी खाने के लिए आ जाना।" छिब्बू प्रसन्न था जैसे काली के बारे में उसकी चिंता दूर हो गई थी।

"रोटी की चिंता न करो। वह मैं खा लूँगा।" काली ने मुस्कराने की कोशिश की।

"जैसे तेरी मर्जी। आज तू आराम कर। लंबी तानकर सो। किसी को याद करना हो तो जी भरके कर।" माँझा हँसा।

वे तीनों सीढ़ी उतर गए तो काली ने दरवाजा अंदर से बंद कर लिया। तीनों बिस्तर एक खाट पर बिछा उसने सब कपड़े उतार दिए और ऊपर चादर खींच ली।

बहुत दिनों के बाद उसे राहत का घना एहसास हुआ और वह हर बात से बेख़बर हो गहरी नींद सो गया।

आठ

बाकी लोग अभी सो ही रहे थे लेकिन काली उठ गया था और छोटे-छोटे कदम भरता तंग आँगन में ही टहल रहा था। घूमते-घूमते कभी-कभार वह कमरे के अंदर भी झाँक लेता और उन्हें नींद में हल्के-हल्के खर्राटे लेता हुआ देख उसे ईर्ष्या होने लगती।

जब उनमें से किसी ने करवट भी नहीं बदली और खर्राटों की आवाज सामान्य ही रही तो उसे गुस्सा आने लगा। यह सोच उसे कुछ चैन महसूस हुआ कि तड़के की नींद मीठी लेकिन बहुत छोटी होती है। काली को फिर से खीज आने लगी क्योंकि माँझा के खर्राटे शंटिंग के इंजन की सीटी की तरह उठने लगे थे। दरवाजे

के सामने आ वह गला साफ होने के बावजूद इस ख्याल से खाँस देता कि उनकी नींद कच्ची होने की सूरत में शायद टूट जाए। लेकिन वे निश्चिंत हो सो रहे थे। हताश हो काली छत पर चला गया।

मण्डी के ऊपर आकाश में चिड़ियों, कुओं, फाख्ताओं और अन्य पक्षियों के झुंड-के-झुंड शोर मचाते हुए मँडराने लगे थे और उनकी चीं··· चीं··· काँ··· काँ··· और घटक घूँ··· घटक घूँ स्पष्ट सुनाई दे रही थी।

रेलवे स्टेशन का शोर भी मुखर हो उठा था। नजदीकी बाजार में आते-जाते लोगों की आवाजें और कदमों की चाप, ग्वालों के साइकिलों की घंटियाँ और उनकी आवाजें तेजी से फैल रही रोशनी की तरह घनी हो रही थीं और रात का संयम दिन की मारामारी और खींचातानी में तब्दील हो रहा था।

काली छत से नीचे आ गया। अपने भविष्य को ले चिंता में ग्रस्त वह आँगन में चक्कर काटने लगा। छिब्बू ने करवट बदलते हुए रब को याद किया तो काली के कदम रुक गए। उसने गर्दन आगे बढ़ा कमरे में झाँका। छिब्बू ने हाथ-पाँव पटकते हुए तीन-चार बार करवट बदली और हर करवट के साथ मुँह से नई आवाज निकाली तो माँझा और कालू भी अपने-अपने बिस्तर पर हिल-डुल करने लगे।

छिब्बू अपनी खाट पर सीधा लेटा हुआ लंबी-लंबी साँस खींच रहा था जैसे दिन-भर के थका देनेवाले काम के लिए अपने फेफड़ों को तैयार कर रहा हो। उसने आँखों पर उँगलियाँ फेरीं तो काली ने उसके तलवों पर गुदगुदी कर दी। सनसनी महसूस करके छिब्बू ने एक झटके मे पाँव समेट लिए और हैरान हो आँखे खोल दीं। काली मुस्करा दिया। छिब्बू ने दोनों हाथों से आँखों को मसला और फिर उठते हुए काली की ओर देखा, "पहलवान, तुम कब उठ गए ?"

"बहुत पहले। कल दिनभर सोया जो था।" काली मुस्करा दिया।

"क्या कहीं जल्दी जाना है ?"

"उस्ताद ने कल कहा था न।" काली ने माँझा की ओर इशारा किया।

"मुझे कहीं चमड़े के कारखाने में काम दिलवाने के लिए ले जाना था।"

"हाँ··· हाँ, याद आया।" छिब्बू ने भवें ऊपर चढ़ा आँखें फैला लीं। फिर उसने ध्यान से माँझा की ओर देखा और चारपाई से उठ गया, "यह तो जुगाली किए झोटे की तरह सो रहा है।"

यह सुन माँझा ने पासा बदला। दोनों टाँगें ऊपर उठा हवा में लहराईं और फिर उन्हें पूरा पसार दिया, "सो कौन रहा है। मैं तो मचल मार रहा हूँ।"

"मचल बाद में मार लेना। पहले उठकर जल्दी से तैयार हो जा।"

"क्यों, कहीं शगुन पर जाना है ?" माँझा खाट पर लेटे-लेटे ही बार-बार पहलू बदलता रहा।

"शगुन पर भी चले जाएँगे।... अभी तो पहलवान के साथ तुम्हें बूटा मण्डी जाना है, किसी चमड़े के कारखाने में; जहाँ तुम्हारे गाँव का आदमी काम करता है। पहलवान को काम दिलाने के लिए।" छिब्बू ने याद दिलाया।

"हाँ... हाँ... यारा। मैं तो भूल ही गया था... अब तक तो हमें वहाँ पहुँच जाना चाहिए था। खैर, कोई बात नहीं।" माँझा खाट से नीचे उतर आया।

"देर हो गई है तो स्टेशन से नकोदर चौक तक ताँगा ले लो। वहाँ से आगे भी लाँबड़ा का ताँगा मिल जाएगा," छिब्बू ने राय दी।

"ताँगे पर जरूर पैसे बरबाद करने हैं।... हम यहाँ से छप्पड़ पर जाएँगे। जंगल-पानी करेंगे।... वहाँ पास ही फगवाड़ा गेट है। फगवाड़ा गेट से कचहरी और कचहरी से नकोदर अड्डा बिलकुल नजदीक है। एक बार नकोदर अड्डा पहुँच गए तो बूटा मण्डी जोर से फेंकी ठीकरी जितनी दूर है।" माँझा ने समझाया।

माँझा ने जल्दी-जल्दी पाँव में जूता फँसाया। बनियान को सीधा किया। कमर के साफे को कसकर बाँधा और सिर का साफा कंधे पर रख काली की ओर देखा, "पहलवान, आओ चलें।"

दरवाजे में जा माँझा रुक गया और छिब्बू की ओर मुड़ता हुआ बोला, "मैं सीधा मण्डी में ही पहुँचूँगा। अगर माल जल्दी मिल जाए तो लाद लेना। तब तक मैं आ ही जाऊँगा।"

"ठीक है।" छिब्बू ने सिर हिलाया। फिर काली की ओर बढ़ गया, "पहलवान, काम बने या न बने, शाम को तुम यहीं लौट आना। जब तक तुम्हारा कहीं पक्का ठिकाना नहीं बनता, इस कमरे को ही अपना घर समझो। हमें कोई फर्क नहीं पड़ता। क्यों माँझा ?"

"ठीक है। हमें इसे कौन-सा छाती पर लिटाकर सुलाना है या इसे लोरी सुनानी है। यह अपनी नींद सोएगा और हम अपनी नींद।" माँझा ने मुस्कराते हुए काली का कंधा थपथपाया।

छिब्बू और कालू से विदा हो माँझा के साथ काली सीढ़ी की ओर बढ़ा तो उसे धक्का-सा लगा कि उसका शहर में जो छोटा-मोटा सरनामा बना था, वह भी टूट रहा है। उसने सीढ़ी पर कदम रखते हुए पीछे मुड़कर देखा। छिब्बू भी कमरे से बाहर छोटे-से आँगन में दो कदम आगे बढ़ आया था। "पहलवान, शाम को जरूर आ जाना। यार, तेरे से कुछ मोह हो गया है।"

"जरूर आऊँगा। मेरा इस शहर में और है ही कौन।" काली ने होंठों पर मुस्कान लाने की कोशिश की।

"माँझा, पहलवान का अपने गाँव के आदमी से अच्छी तरह मिलाप कराके आना। देर भी जो जाए तो फिक्र न करना। मैं और कालू काम चला लेंगे।" छिब्बू ने ताकीद की।

"यारा, तू तो पहलवान की ऐसे चिंता कर रहा है जैसे तेरा सगा-संबंधी हो।··· इसके साथ हम सबका एक-सा रिश्ता है। तू फिक्र न कर। काम हन्ने या बन्ने करके ही पलटूँगा।" माँझा ने आश्वासन दिया।

माँझा छप्पड़ की ओर बढ़ गया और काली नाले की दीवार के ऊपर जा बैठा। थोड़ी ही देर बाद परने से हाथ-मुँह पोंछते हुए माँझा ने दीवार के निकट पहुँच काली को इशारा किया, "चलो पहलवान।"

नकोदर के अड्डे पर पहुँच माँझा रुक गया। वहाँ कई ताँगे खड़े थे और भाँति-भाँति की आवाजें लगा रहे थे। लाँबड़ा का होका सुन माँझा उस ताँगे की ओर बढ़ गया।

"बूटा मण्डी तक जाना है।"

"कितनी सवारी हैं?" कोचवान ने सवारियों से लदे हुए ताँगे की ओर देखा।

"दो सवारी।"

"जनाना सवारी तो नहीं है?"

"न, दोनो मर्द सवारियाँ हैं।"

"तो दोनों तरफ बाँक पर एक-एक बैठ जाओ।" कोचवान ने इशारा किया।

"भाड़ा क्या लगेगा?" माँझा ने पूछा।

"दो आना सवारी का।"

"किराया लाँबड़ा का दें, उतरे बूटा मण्डी मे और बैठ भी बाँक पर। बाँस से खिसककर गिर गए तो हड्डी-पसली अलग टूटगी।" माँझा ने खिन्न हो सिर जोर से झटक दिया।

"तो और क्या अपने सिर पर बिठा लूँ?" कोचवान भी तल्खी में आ गया, "आए बडे सवार। पैसा खर्च नही करना और सवारी गद्देदार बग्घी की चाहते हैं।"

"चल पहलवान। बर्फ कारखाना के पास पीतल का कारखाना है। आगे आबादी है··· आबादपुरा की। और उससे लगी बूटा मण्डी है। पैदल चलकर हम ताँगे से पहले पहुँच जाएँगे।" माँझा ने सलाह दी और लाँबडा, बूटा मण्डी, खुरला खिंगरा, बादशाहपुर की आवाजों को पीछे छोड़ता हुआ काली को साथ लिए आगे बढ़ गया।

पीतल के कारखाने के बराबर पहुँच माँझा ने पीछे मुड़कर देखा, फिर प्रसन्नचित्त हो बोला, "ताँगा अभी आया नहीं और हम लगभग बूटा मण्डी पहुँच भी गए हैं। सालों ने लूट मचा रखी है। बारह-बारह, चौदह-चौदह सवारियाँ बिठाते हैं और पैसा डबल माँगते हैं।"

उत्तर में काली सिर्फ मुस्करा दिया। वह सोचने लगा कि फैटनगंज मण्डी से बूटा मण्डी का फासला लगभग उतना ही होगा जितना कि गाँव से कंधाला की

सराय का। वहाँ चारों ओर खुले खेत होने के कारण वह फासला भी पहाड़ लगता है लेकिन शहर में आबादी और रौनक की वजह से पता ही नहीं चलता कि सफर कब कट जाता है।

थोड़ा आगे जाने पर हल्की-हल्की बदबू आने लगी थी। माँझा ने बदबू को अपने नथुनों से दूर रखने के लिए जोर से साँस छोड़ी, "लो पहुँच गए। सामने बूटा मण्डी है। गाँव और आगे है। साला ताँगेवाला दोनों के चार आने माँगता था। हमने ताँगे में न बैठकर चार आने भी बचा लिए और ताँगे की बाँक से फिसलकर गिरने से भी बच गए।"

ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ रहे थे, बदबू नाक के अलावा आँखों और मुँह में भी घुसने लगी थी। दुकानों के आगे ताजा खालों के ढेर लगे हुए थे और उन पर मक्खियों के हजूम भिनभिना रहे थे। बायीं ओर एक ऊँचा शेड था। उसके ऊपर बहुत-से चील, गिद्ध और कव्वे मँडरा रहे थे। कभी वे आकाश में ऊँचा उड़ने लगते और कभी पेड़ों और छतों पर बैठ, गर्दनें आगे बढ़ा पर फड़फड़ाने लगते।

"जगह बहुत गंदी है और बदबूदार भी।" माँझा ने नाक पर कपड़ा रख लिया।

"हाँ जी। यह इलाका शहर की चमादड़ी है और चमादड़ी में बदबू के अलावा और हो भी क्या सकता है।"

"पहलवान, फिक्र न कर। इस बदबू में रहकर जल्दी ही तेरा नाक भर जाएगा और तुम्हें बदबू आनी बंद हो जाएगी।" माँझा ने काली का कंधा थपथपाया।

"यहाँ रहनेवालों लोगों को बाकी शहर में बदबू आती है और वे इस सड़ाँध और गंदगी के बिना जी नहीं सकते।"

काली ने कोई उत्तर नहीं दिया और चारों ओर देखता हुआ खामोशी से चलता रहा। उसे महसूस होने लगा कि इस सड़ाँध में वह रह नहीं सकेगा। लेकिन माँझा की बात याद आने पर उसने इस बारे में सोचना बंद कर दिया और अपने भविष्य को लेकर आशा-निराशा में फँसा सिर ढाए हुए माँझा के पीछे-पीछे चलता रहा।

बूटा मण्डी एक बहुत बड़े छप्पड़ के पूर्वी किनारे के साथ ही खत्म हो गई। सड़क के बायीं ओर छप्पड़ के किनारे कई जगहों पर सूखने के लिए खालें लटका रखी थीं और खाली स्थान पर छिलाई इत्यादि बिछाई हुई थी।

छप्पड़ के पश्चिमी किनारे पर बूटा गाँव फैला हुआ था और दक्षिण और उत्तर में दूर तक खेत थे। सड़क के किनारे दोनों ओर बड़ी नालियाँ थीं जिनमें बूटा मण्डी और मुहल्लों की सारी गंदगी पानी के साथ बहकर छप्पड़ में गिरती थी। बूटा गाँव का भी सारा गंदा पानी वहीं जमा होता था। बरसात में यह आसपास के ऊँचे खाली स्थानों, सड़क और निकटवर्ती खेतों तक फैल जाता था।

सड़क के बायीं ओर खड़े हो माँझा और काली छप्पड़ के पूर्वी किनारे के साथ कुछ फासला छोड़ पुराने कच्चे-पक्के मकानों और दालानों की ओर देखने लगे।

"यहीं कहीं काम करता है, अपना किशना।" माँझा ने अनुमान लगाया।

सारे इलाके का बहुत ध्यान से जायजा ले माँझा ने सड़क के दोनों ओर देखा। उसे बिलकुल खाली पा वह कुछ मायूस हो गया। फिर वह एक गली की ओर मुड़ गया, "वहाँ पता चल जाएगा कि अपना किशना कहाँ काम करता है।··· है यहीं··· कहीं··· आसपास ही।··· बहुत पहले मैं एक बार यहाँ आया था।"

माँझा के साथ काली भी गली में घुस गया। एक पुराने और कुशादा मकान के खुले गेट के सामने माँझा रुक गया और एक कदम आगे बढ़ अंदर झाँकने लगा।

"यही है कारखाना, जहाँ अपना किशना काम करता है।" माँझा ने पीछे मुड़ काली की ओर देखा, "मैंने कोठड़ी और दफ्तर से जगह की पहचान कर ली है।"

माँझा और काली गेट के अंदर चले गए। उसके दोनों ओर कमरे थे। एक में कारखाने का दफ्तर था। उसमें एक मैले-कुचैले मेज के पीछे फुसफुसी-सी कुर्सी पड़ी थी। एक ओर झर-झर करती बेंच रखी थी। पिछली दीवार में दो छोटी अलमारियाँ थी। उनके शीशे बरसों तक मक्खियों के बैठने से बदरंग और मटमैले हो गए थे। दोनों अलमारियों के बीचोबीच ऊपर भगत रविदास की फ्रेम हुई तस्वीर टँगी थी। फ्रेम की लकड़ी बोसीदा हो जाने से दो जगह से शीशा बाहर निकल आया था और तस्वीर के कागज में सिलवटें पड गई थीं। टूटे हुए फ्रेम में धागा फँसा था जिसके साथ सतवर्ग के गर्द से भरे दो फूल लटक रहे थे। फूल इतने पुराने हो चुके थे कि सूखकर उनका रेशा-रेशा अकड गया था, रंग बदल गया था और उनके बीच महीन जाला लटक रहा था।

दफ्तर मे मेज, कुर्सी, बेंच, अलमारियों, दरवाजो, दीवारो और फर्श पर बेशुमार मक्खियाँ फैली हुई भिनभिना रही थी। कुछ मक्खियाँ छत से लटक रहे जालों मे फँसी फडफडा रही थीं और कुछेक दम तोड़ चुकी थी।

गेट के दूसरी ओर का कमरा गोदाम के लिए इस्तेमाल होता था। उसके बंद दरवाजे की साँकल पर ताला लटक रहा था और बाहर दहलीज पर चूने, नमक, कीकर की छीलन बिखरी हुई थी।

कमरे की बाहरी दीवार के साथ दालान की ओर ताजा खालों का ढेर था। उनमें नमक लगा हुआ था और चरबी के छोटे-छोटे टुकड़ों का बोझा उठाए हुए पानी आँगन में फैल गया था। इन खालों से तेज बदबू उठ रही थी। खालो और चारों ओर फैले हुए चरबीमिश्रित पानी पर इतनी ज्यादा मक्खियाँ बैठी हुई थी कि खाल और पानी कही-कहीं ही दिखाई दे रहे थे।

दो कमरों और बड़े दालानों के बीच खुली जगह में जमीन खोदकर पक्के चौरस हौज बनाए गए थे। इन हौजों में पानी भरा था। थोड़ा हटकर पक्के हौजों की एक और कतार थी, इनमें चूने का पानी भरा था।

एक दालान में दीवारों के दोनों ओर स्तूनों में कोई छह फुट की ऊँचाई पर लकड़ी की मोटी-मोटी बल्लियाँ पक्के स्तूनों में टिकाई हुई थीं। बड़े ढोल की तरह फूली हुई खालों पर कीकर का बुरादा लगा और उनमें कीकर की छीलन का पानी अच्छी तरह भरकर टाँग दिया गया था ताकि खाल की सब सिलवटें निकल जाएँ और उन पर कीकर के पानी का रंग भी भलीभाँति चढ़ जाए।

दूसरे दालान में खालों को हवा में सुखाया जाता था। इस दालान में कोई दीवार नहीं थी ताकि हर ओर से हवा बेरोक-टोक आ-जा सके।

माँझा और काली दफ्तर के बाहर खड़े सामने दालान से आ रही आवाजों को सुनने लगे। वह इस प्रतीक्षा में थे कि कोई व्यक्ति दफ्तर की ओर आए तो वे उससे किशने का पता कर सकें।

आवाजें कभी इतनी ऊँची हो उठतीं जैसे वहाँ जोरों से झगड़ा हो रहा है और कभी इतनी धीमी हो जातीं जैसे कोने-खुदरे की आड़ में बैठे प्रेमी मुँह पर हाथ रखे खुसर-पुसर कर रहे हों।

दस-पंद्रह मिनट गुजर जाने के बाद भी जब कोई व्यक्ति दफ्तर की ओर नहीं आया तो माँझा खिन्न हो उठा, "कैसे लोग हैं। कितने बेपरवाह हैं। गोदाम, दफ्तर और सारा कारखाना खुला छोड़ बातों में लगे हुए हैं। जिसका जो जी चाहे, उठाकर ले जाए। है कोई यहाँ पूछनेवाला ?"

उत्तर में काली पहले मुस्करा दिया। फिर माँझा का गंभीर चेहरा देख उसने भी मुँह लटका लिया।

"पहलवान, तू यहीं ठहर। मै अंदर जाकर किशने का पता करता हूँ।··· तू दफ्तर में बैठ।"

"नहीं, मै यहीं ठीक हूँ। बाहर खुली हवा है। मक्खी भी कम हैं।" काली चेहरे से मक्खियों को परे रखने के लिए हाथ लहराने लगा।

माँझा ने दालान के पार जाने के लिए कदम उठाया ही था कि उसे गेट के बाहर सड़क की ओर साइकिल की घंटी की आवाज सुनाई दी।

"कोई आ रहा है, शायद इसी कारखाने का कारिंदा होगा।" माँझा गेट की ओर मुड़ गया।

अगले ही क्षण अधेड़ उम्र का एक व्यक्ति साइकिल पर सवार गेट के अंदर घुस आया और दफ्तर के सामने रुक गया। उसकी दाढ़ी दो-तीन दिन की बढ़ी हुई थी। उसने कमीज और पाजामा पहना हुआ था। सिर पर मैली रंगदार पगड़ी और उसके पाँव में मैला-सा फटा-पुराना जूता था। उसके कानों में सोने की बालियाँ लटक रही थीं। उसने साइकिल से उतरते ही पगड़ी का पल्लू नाक और मुँह पर लपेट लिया और साइकिल के हैण्डल के साथ लगी टोकरी में से एक लाल जिल्द वाली छोटी बही और कुछ कागज उठाए। जेब में पड़े नोटों को हाथ से थपथपा

उसने माँझा की ओर देखा।

माँझा ने उसे बंदगी की और इशारा पा उसकी ओर बढ़ गया, "इस कारखाने में मेरे गाँव का आदमी काम करता है। नाम किशना है।"

"रायपुर का है ?" जगतराम ने पूछा।

"हाँ जी, रायपुर बल्लाँ का।"

"कोई काम है उससे ?"

"हाँ जी, मिलना है।"

"देखता हूँ।"··· जगतराम दालान की ओर बढ़ गया। "ओ किशने··· किशने ओए ··· नाथी ओए।" लेकिन उसे कोई जवाब नहीं मिला।

"लगता है खालें सीकर उनमें कीकर की छील्न का पानी भर रहे हैं।··· तुम लोग दफ्तर मे बैठो, मैं खुद जाकर देखता हूँ।" जगतराम हौजो की कतारों से बचता-बचाता दालान में लुप्त हो गया।

किशना गीले हाथों को सुखाने के लिए उन्हें झटकता हुआ दालान मे नमूदार हुआ। सामने मॉझा को खड़ा देख वह हैरान रह गया और फिर परेशान हो उठा कि कहीं कोई बुरी खबर न हो जो माँझा इतनी दूर इस गदी जगह में पहुँचा है। लेकिन मॉझा के होंठों पर आई मुस्कान, जो किशने तक पहुँचते-पहुँचते, कानों तक फैल गई थी, देख उसका हौसला बँधा। किशना आंगन में बने हौजों और हौदियों से बचता-बचाता मॉझा के पास आ गया और उसके दोनों हाथ पकड़ते हुए आतुर हो पूछा, "भा जी, तू इस वक्त यहाँ कैसे आया ? सब खैर-मेहर है न ?"

"हाँ, सब खैर-मेहर है।" मॉझा ने मुस्करा उसका हाथ दबाया।

"भा जी, कब लौटे गाँव से ?" किशना बदस्तूर अशापंज में पड़ा हुआ था।

"कल आया था सवेरे।··· परसों तुम्हारे घर गया था। ताया भी मिला था और ताई भी।··· ताई देबू की दुकान पर मिली थी। निक्की और छोटू भी साथ थे।" मॉझा ने बताया।

अपने बेटे और बेटी का जिक्र सुन किशना खुश हो गया और रोमांचक हो मुस्करा दिया, "मीठी गोली लेने गया होगा। छोटू मीठी गोली का बहुत शौकीन है।··· कितना रो रहा हो, मुँह में मीठी गोली डाल दो। रोना-धोना सब भूल जाएगा।"

किशना और मॉझा को आपस मे इस तरह सहृदयता से बातें करते देख काली को ईर्ष्या होने लगी। फिर वह एकदम उदास हो गया।

मॉझा और किशना घर, परिवार और गाँव के बारे में बाते करते-करते गपशप पर उतर आए। वे बात-बात पर खिलखिलाकर हँस देते और एक-दूसरे के हाथ पर हाथ मार बात की पुष्टि करते।

काली कुछ दूर खड़ा किशने को ध्यान से देख रहा था। उसने आधे बाजुओं

की पतूही और कछहरा पहना हुआ था। उसकी बाँहों और टाँगों का रंग और चमड़ी बाकी शरीर से अलग भुरभुरी और राख-जैसी थी। पतूही और कछहरे, और टाँगों और बाँहों के नंगे हिस्सों पर बार-बार मक्खियाँ बैठ रही थीं और उन्हें उड़ाने के लिए किशना निरंतर हाथ लहराता, खड़े-खड़े पहलू बदल रहा था, पाँव थपथपाता था।

किशने के सिर के बालों और बाँहों पर कीकर की छीलन जमी हुई थी। माँझा से बात करते-करते किशना कभी सिर को जोर-जोर से खुजाता और कभी उसकी बाँहों, पेट और टाँगों पर खुजली होने लगती।

"ताँगे पर आये या··· ?" किशने ने चेहरे पर खारिश उठने के कारण अपनी बात अधूरी ही छोड़ दी।

"ताँगे पर कहाँ आए हैं। ताँगेवालों ने तो लूट मचा रखी है। नकोदर अड्डे से बूटा मण्डी के दो आने सवारी के माँग रहा था और वह भी ताँगे की बाँक पर बैठने के।"

"ताँगेवालों ने अपनी यूनियन बना ली है। उन्होंने जालंधर से नकोदर तक रास्ते में कई जगह अड्डे बना दिए हैं। जालंधर के बाद पहला अड्डा लाँबड़ा है। लाँबड़ा तक रास्ते में कहीं उतर जाओ, किराया लाँबड़ा तक का ही लगेगा।" किशने ने समझाया, "क्या करें; इस दुनिया में जोरावर का छः बीस का सौ चलता है।"

फिर वह माँझा के नजदीक खिसक आया, "अच्छा भा जी, यह बता कि कैसे आना हुआ ? यहाँ तो वही आता है जिसे कच्ची खाल बेचनी हो। कमाया हुआ चमड़ा लेनेवाले तो सीधे दुकान पर पहुँचते हैं।"

"बस तेरे से एक जरूरी काम था।" माँझा ने किशने की आँखों में झाँका। फिर काली की ओर इशारा किया, "यह अपना ही आदमी है। मैं बीमार पड़ गया था, फिर गाँव चला गया था। फिर कालू काम से घर चला गया था। आठ-दस दिन वह भी घर में लगा आया है। पाँच-सात दिन के लिए छिब्बू भी बाहर रहा। इन दिनों में यह हमारी तिकड़ी के साथ काम करता रहा है। बहुत भला आदमी है। घर-घाट कोई है नहीं। सोचा तुमसे पता कर देखूँ। अगर इसे काम मिल जाए।"

किशना सोच में पड़ गया। फिर आँखें झपकने लगा, "फोरमैन से बात कर देखता हूँ। मेरे ख्याल में आदमी की जरूरत तो है।"

काली ने इत्मीनान से लंबी साँस ली और वह उन दोनों के थोड़ा और निकट आ गया। किशने ने काली की ओर ध्यान से देखते हुए उसका सिर से पाँव तक जायजा लिया। फिर एक-एक शब्द पर जोर दे चेतावनी देने के अंदाज में बोला, "भाई, देख ले। काम बहुत गंदा है। समझो गंदी बदबूदार नाली में कीड़ा बनकर रहना पड़ता है। खुजली-खारिश आम रहती है।"

"हम लोगों की जन्म से मरण तक सारी जिंदगी ही गंदगी में गुजरती है। रुके

हुए सड़ाँध-भरे पानी में मच्छर-मक्खियों की तरह हम भी पलते हैं। चार दिन भीं-भीं करके मर-खप जाते हैं।" माँझा ने दार्शनिक भाव से कहा।

"काम, काम ही होता है और हर काम आदमी को ही करना है।" फिर उसने काली की ओर देखा, "बदबू से इसका आधा नाक तो अब तक भर गया होगा। बाकी शाम या कल तक भर जाएगा और फिर इसे बदबू आनी बंद हो जाएगी।"

किशना एक क्षण फिर सोच में पड़ गया कि कहाँ ले जाकर इनकी सेवा करे। आसपास कोई चाय की दुकान भी नहीं है। कहीं ढंग से बैठने की जगह नहीं है। वह इसी उधेड़बुन में फँसा था कि दालान से जगतराम उनकी ओर आता हुआ दिखाई दिया।

"यह आदमी कौन है?" माँझा ने सरगोशी की।

"यह मालिक का मुंशी है। यही सारा काम देखता है। जात का खतरी है।" किशने ने बताया।

"इसी से बात कर लो।" माँझा ने सलाह दी।

"पहले फोरमैन से ही बात करनी पड़ेगी।··· एक दिन कह तो रहा था कि कोई ढंग का आदमी देखो।" किशने ने माँझा की ओर झाँका, "असल में यहाँ नया आदमी टिकता नहीं है।··· काम बहुत गंदा और सख्त है। हाथ हर समय नमक, चूने या कीकर की छीलन से सने रहते हैं।"

"किशने, हम लोगों के लिए सभी काम बहुत गंदे और सख्त है। रेढ़ा खींचने की बजाय मुझे तुम्हारा काम आसान लगता है।"

"हर दू लानत है। लेकिन क्या किया जाए। काम तो करना ही है।" किशने ने बेबसी व्यक्त की।

किशना दालान की ओर झाँकने लगा। मुंशी जगतराम दालान से फिर वापस पलट गया था।

"फोरमैन से वहीं मिल लो।" माँझा ने सुझाव दिया।

"मै तो रोज मिलता हूँ। आपसे मिलाना चाहता हूँ ताकि बात को दाएँ-बाएँ करके अभी सिरे चढ़ा दिया जाए।" किशने ने दालान से नजरें फेर उनकी ओर देखा।

"तो हम भी तुम्हारे साथ चलें?"

"साला मुंशी उधर घूम रहा है। मैं सोच रहा था कि वह इधर आ जाए तो मै फोरमैन को दालान में बुला लाऊँ और वहीं खड़े-खड़े बात कर लें।"

फिर चारों ओर देख वह फुसफुसाया, "मुंशी शक्की आदमी है। फिर जात-बिरादरी भी दूसरी है। मालिक की बिरादरी भी दूसरी है। फोरमैनसमेत हम सब लोग अधर्मी बिरादरी से हैं। मुंशी को हमेशा शक रहता है कि हम जरूर कोई-न-कोई हेराफेरी कर रहे हैं। यहाँ नमक, चूने और कीकर की छीलन के अलावा है ही क्या। गली-गंदी

चरबी और काले-पीले बाल।··· लेकिन क्या किया जाए···।"

मुंशी जगतराम और फोरमैन को अपनी ओर आता देख किशना चुप हो गया। वे बातें करते-करते दालान में आ गए। मुंशी ने पगड़ी के खुले सिर से अब भी नाक और मुँह ढाँपा हुआ था। वे कुछ क्षण वहाँ खड़े आपस में बातें करते रहे। उन्हें देख काली की बेचैनी बढ़ने लगी जैसे उसकी किस्मत का फैसला होने ही वाला था। उसका दिल धक-धक कर रहा था और वह बदबू और मक्खियों को एकदम भूल गया था।

जब मुंशी जगतराम अपने दफ्तर की ओर बढ़ गया और फिर साइकिल उठा बाहर गली में घुस गया तो किशना दालान के पिछवाड़े से छप्पड़ के पास खुली जगह की ओर जा रहे फोरमैन को दबी आवाज में पुकारता हुआ उसकी ओर लपक गया।

किशने की आवाज सुन फोरमैन रुक गया, "क्या बात है किशने ?"

"फोरमैनजी, जरूरी बात करनी थी आपसे।" किशना लपककर उसके पास पहुँच गया।

"पेशगी पैसा लेना था तो पहले मरता। अब तो मुंशी निकल गया होगा।" फोरमैन ने तल्ख स्वर में कहा।

"फोरमैनजी, मुंशी मेरे सामने ही निकला है। पेशगी पैसे की बात नहीं है।··· कुछ और काम है।"

"बोलो।" फोरमैन यूँ अकड़ गया जैसे राजा राह चलते किसी फरियादी की विनती सुनने के लिए राजी हो गया हो।

"फोरमैनजी, आपने एक-दो बार कहा था कि यहाँ एक आदमी की जरूरत है।"

"हाँ जरूरत तो है। लेकिन ऐसा आदमी चाहिए जो टिका रहे। उसके नाक-मुँह और कान बंद हों। बदबू और मेरी गालियों से परेशान न हो। है कोई ऐसा आदमी ?"

"फोरमैनजी, यहाँ आठ-दस दिन काम करने के बाद नाक-कान अपने-आप बंद हो जाते हैं।" किशना हँसा। फिर माँझा और काली की ओर इशारा किया, "अपना आदमी है। उसे रखना है।"

"ये तो दो हैं," फोरमैन ने उनकी ओर ध्यान से देखा।

"काले रंग का आदमी जिसके कंधे पर फाँटेदार साफा है, वह मेरे गाँव का है। ताए-चाचे से भाई लगता है। मण्डी में काम करता है। रेढ़ा खींचने का।" किशने ने बताया।

"भींडी लगता होगा। उसकी टाँगों और पिण्डलियों की बनावट बताती है।" फोरमैन ने इशारा किया।

"फोरमैनजी, आपकी नजर बहुत तेज है। बिलकुल ठीक पहचाना इसे।" किशने ने फोरमैन की परख-पहचान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। "उसके साथ जो जवान खड़ा है, उसे काम पर लगवाना है।"

"कौन आदमी है ?" फोरमैन ने काली की ओर ध्यान से देखा।

"मेरे गाँव का माँझा उसे अच्छी तरह जानता है। उनके पास एक-डेढ़ महीने से कच्चे तौर पर काम करता रहा है··· रेढ़ा खींचने का। कहता है बहुत भला आदमी है। यतीम है। घर-घाट नहीं है।" किशने ने फोरमैन के मन में काली के प्रति ज्यादा-से-ज्यादा सहानुभूति पैदा करने के लिए बात को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया।

कुछ क्षण के लिए फोरमैन सोच में डूब गया जैसे उसे कोई पुरानी घटना याद हो आई हो। उसने एक लंबी आह के साथ अपनी सोच से ऊपर उभरते हुए सिर हिलाया, "हूँ, बुलाओ उसे।"

फोरमैन की बात सुन किशना खिल उठा और माँझा और काली की ओर देखते हुए उसने जोर-जोर से हाथ हिला उन्हें अपने पास आने का इशारा किया।

माँझा और उसके साथ काली भी लपककर किशने के पीछे आ खड़े हुए। फोरमैन की नजरें काली की ओर उठ गईं, "क्या नाम है तेरा ?"

"कालीदास··· काली।" डर के मारे वह हकला गया।

"कुछ अता-पता ?" फोरमैन ने उसकी ओर घूरकर देखते हुए अगला सवाल पूछा।

काली परेशान हो उठा। उसे कुछ सूझ नहीं रहा था। माँ-बाप की तो उसे शक्ल तक याद नहीं थी। ले-देके चाची की याद आई थी। उसकी परेशानी भाँप माँझा बोला, "फोरमैनजी, गरीब आदमी का क्या अता-पता हो सकता है। अता-पता तो जमीन-जायदाद से बनता है। पंछियों का अता-पता कौन बताएगा। जहाँ दाना-दुनका, रोटी-टुक्कड़, काम-काज मिल गया वहीं अता पता बन जाता है।"

"पंछी तो कहीं टिककर नहीं बैठते। हमें तो ऐसा आदमी चाहिए जो टिककर काम करे। अपनी जड़ें यहाँ बनाए। पछियों से हमें क्या लेना-देना।" फोरमैन ने सिर झटक दिया।

फोरमैन की बात सुन तीनों चुप हो गए और नजरें नीचे झुका लीं। फिर माँझा ने बात शुरू की, "फोरमैनजी, इसके सिर पर कोई हाथ रखेगा तो यह जरूर बैठ जाएगा। पैर भी जमाएगा। रोटी के दुख से तो हम भी इसे मरने नहीं देते थे। लेकिन जवान आदमी काम के बिना··· अपने-आपको पशु से भी गया-गुजरा समझने लगता है।"

फोरमैन एक बार फिर सोच में डूब गया। और धीरे-धीरे यूँ सिर हिलाता रहा जैसे कोई बहुत जटिल गुत्थी सुलझा रहा हो। फिर उसने एकदम काली की ओर

देखा। उसकी आँखों में नर्मी और हमदर्दी झलक रही थी। "हाँ, मुण्डया, क्या काम करेगा ?"

"जो आप बताएँगे।" काली के हाथ अपने आप जुड़ गए।

"हूँ।" फोरमैन ने एक बार फिर काली की ओर देख सिर हिलाया। "तेरी जवानी को देख तो जी चाहता है तुम्हें तुरंत जवाब दे दूँ। क्योंकि यह काम अच्छे-भले आदमी को कुछ साल में ही खा जाता है। खुजली-खारिश तो दो-तीन महीने के बाद ही शुरू हो जाती है। जिस आदमी के हाथ-पाँव, बाजू-टाँगें, नमक, शीरे, चूने और छीलन के पानी में रहेंगे, सारा दिन मोटा मक्ख-मच्छर काटेगा; उसकी जिंदगी क्या होगी ? तू आप सोच सकता है। फिर उजरत भी ज्यादा नहीं है। बारह घंटे काम के बाद अच्छे सधे हुए कारीगर को रुपये-सवा-डेढ़ मिलते हैं। नौसिखिए को तो रुपये-बारह आने से ज्यादा नहीं मिलेगा। क्या खाएगा और क्या इलाज पर लगाएगा।··· लेकिन जब तेरी गरीबी की ओर झाँकता हूँ तो इतनी उजरत भी बहुत लगती है। कब से काम पर आओगे ?"

काली ने पहले मॉझा और फिर किशने की ओर झाँका। काली को असमंजस मे देख मॉझा बोला, "अभी से।"

फोरमैन फिर सोच में पड़ गया। वह सिर झटकते हुआ बोला, "ठीक है। मुशी और मालिक से मैं बाद में बात कर लूँगा।"

फोरमैन किशने की ओर मुड़ गया। "बंसा तो अभी आया नही, छुट्टी ले गया है। तब तक तू, इसे हौज मे ताजा खाल से नमक धोने का काम सिखा दे। बाद मे चूना लगाने, और खाल के बाल उड़ाने के काम बता देंगे। और फिर यह टिका रहा तो खाल को छीलने ओर कमाने का गुर भी सिखा देंगे।"

फोरमैन की बात सुन काली ने इत्मीनान की बहुत लंबी साँस ली। फोरमैन ने उसकी ओर एक बार फिर बहुत ध्यान से देखा और दालान से परे छोटे-से पेड़ के नीचे चला गया और खाट पर यूँ जा लेटा जैसे बहुत थक गया था या किसी बहुत बडी मानसिक परेशानी में फँसा हुआ था।

मॉझा बहुत खुश था। उसने शुकराने के नाते किशने के दोनों हाथ पकड़ लिए, "यारा, जरूरतमद की मदद करने, भूखे को रोटी देने और बे-आसरा को आसरा देना बहुत बड़ा पुण्य माना जाता है लेकिन बेकार को रोजगार देना या दिलाना सबसे बड़ा पुण्य है।"

अपनी प्रशंसा सुन किशना गद्गद हो उठा, "भा, मेरा क्या लगा। मेहरबानी तो फोरमैनजी की है।··· बहुत देवता आदमी है। आप भी बहुत छोटी उम्र में यतीम हो गया था। ठोकरें खा-खाकर पला है। काम का पक्का, जुबान का कड़वा और दिल का बहुत साफ है। मुंशी को तो अक्सर डाँट देता है। मालिक के सामने भी नहीं झुकता।"

माँझा ने काली का कंधा थपथपाया। "अच्छा पहलवान, अब मैं चलता हूँ। जी लगाकर काम करना। हम लोगों के पास सिवाय मेहनत के और कोई जायदाद नहीं है। शाम को आ जाना।"

"नहीं, यहीं रहेगा। एक कोठा है। वहाँ कुछ और लोग भी सोते हैं। यह भी वहीं रह लेगा। रोटी के लिए बस्ती के चौक पर जाना पड़ेगा। कुछ लोग अपनी रोटी आप भी बनाते हैं। उनके साथ भी मिल सकता है। तुम चिंता न करो। मैं जो यहाँ हूँ। किसी दिन टैम निकाल इकट्ठे आएँगे।" किशने ने भरोसा दिलाया।

"अच्छा, मैं चलता हूँ। दिन बहुत चढ़ गया है। छिब्बू और कालू परेशान हो रहे होंगे।" माँझा ने किशने का कंधा थपथपाया।

"भा, कोई टहल-सेवा तो कराई नहीं," किशने ने माँझा के दोनों हाथ पकड़ लिए।

"भलया लोका, इससे बड़ी सेवा और क्या होगी ? तूने काली को काम दिला दिया है। हमें बहुत चिंता थी।"

किशना और काली सड़क तक माँझा को छोड़ने आए। उनसे विदा हो माँझा ने लंबी-लंबी लाँगें भरनी शुरू कर दीं।

वे दोनों कारखाने में लौट आए। किशने ने दालान के बाहर पड़ी ताजा खालों की ओर इशारा किया, "इन्हें उठाकर पानी के हौजों में भर दो। फिर हौज में उतर जाना और पाँव से जोर-जोर से दबाना ताकि नमक निकल जाए।"

काली ने अपना जूता एक ओर रख दिया। पाजामा भी उतार दिया और खालों के ढेर की ओर बढ़ गया।

"कमीज भी उतार दो। छींटें पड़ने से खराब हो जाएगी।" किशने ने समझाया।

काली ने कमीज भी उतार दी और जूते के ऊपर पाजामा और उसके ऊपर कमीज रख दी और खालों के ढेर की ओर बढ़ गया।

ना

काली ने पीछे मुड़ किशने की ओर देखा जैसे उससे प्रेरणा लेना चाहता हो। फिर वह कच्ची खालों के ढेर के पास चला गया। उनसे सख्त बदबू उठ रही थी। उसने अपनी नाक बाएँ कंधे को उचका उसमें ठूँसने की कोशिश की लेकिन बदबू उसके दिल-दिमाग पर बुरी तरह छा गई थी।

खालों पर बैठी बेशुमार मक्खियाँ आपस में फँसी हुई निरंतर पर हिला रही थीं जैसे किसी चीज को नोच-नोचकर खा रही हों।

बदबू और मक्खियों के कारण काली को झुरझुरी महसूस हुई और वह सरसराहट पैदा करती हुई उसके पूरे शरीर में फैल गई। मुँह का जायका भी बदल गया

और उसे मतली-सी होने लगी।

अपनी पीठ पर किशने की नजरें गढ़ी पा काली ने दिल कड़ा किया और खालों के ढेर की ओर दोनों हाथ बढ़ा दिए। जब उसने सबसे ऊपर पड़ी खाल को उठाने के लिए हाथ उसके दोनों सिरों पर रखे तो मक्खियों में जबर्दस्त हलचल पैदा हुई जैसे वे आनेवाले खतरे को भाँप चौकन्ना हो गई हों। उसने दोनों हाथों से खाल को ऊपर उठाया तो मक्खियाँ धूल की तरह चारों ओर फैल उसके सिर, मुँह और पूरे शरीर से टकराती हुई जोर-जोर से भिनभिनाने लगीं। काली के कानों में मक्खियों की भिनभिनाहट के सिवा और कोई आवाज नहीं पड़ रही थी।

किशना और फोरमैन काली की ओर ध्यान से देख रहे थे। हुक्का गुड़गुड़ाते हुए फोरमैन ने खाट पर रखा पाँव नीचे लटका दिया जैसे वह खाट से उठना चाहता हो। यह देख किशना बोला, "फोरमैनजी, मैं समझा देता हूँ।"

फोरमैन ने अपना पाँव खाट पर टिका दिया और शरीर को ढीला छोड़ फिर से हुक्का गुड़गुड़ाने लगा। किशना अपने चेहरे को दाएँ कंधे से पोंछता हुआ काली के बराबर आ गया, "क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं जी," उलटी करता हुआ वह फर्श पर बिखरे चर्बी के अनगिनत फुँदनो को पाँव-तले रौंदता हुआ दीवार की ओर बढ़ गया।

उस पर हाथ टिका काली उलटी करता रहा। हाथ-पाँव चर्बी से सने होने के कारण बहुत-सी मक्खियाँ उसकी टाँगों के आसपास भिनभिनाती हुई बैठने की कोशिश कर रही थी।

काली वापस लौटा तो उसकी आँखें पानी से तर थीं। सजल आँखों में लाल डोरे-जैसे घुल गए थे। वह नाक सुड़सुड़ाने लगा, "किशने भा जी, जिंदगी में इतनी गंदगी में काम करना तो एक तरफ, कभी ऐसी गंदगी देखी भी नहीं थी। इसीलिए मतली हो रही है।"

"कोई बात नहीं। यहाँ पर हर नए आदमी ने कई दिन उलटियाँ की है। तेरा तो आज पहला दिन है। चल कुल्ला कर ले। मैं तुम्हारे लिए नमक लाता हूँ।"

कुल्ला करने के बाद काली ने खालों के ढेर की ओर आधी पीठ घुमा ली। वह कभी-कभार ढेर की ओर नजर उठाता लेकिन अगले ही क्षण हटा लेता कि कहीं फिर से मतली न होने लगे। वह बेहद परेशान था। किशने ने उसका नाम से पुकारा तो वह हड़बड़ा गया और लज्जित सा उसकी ओर देखने लगा।

"ले, नमक चाट ले। इससे मुँह का स्वाद बदल जाएगा और मतली भी नहीं होगी।"

काली बायी हथेली पर नमक रख दाएँ हाथ की बड़ी उँगली से जीभ पर लगाता और फिर धीरे-धीरे चूस लेता।

"घबराने की कोई बात नहीं है। थोड़ा मन को कड़ा करो, सब ठीक हो जाएगा।"

किशने ने काली को समझाया। "अब तुम्हारा जी ठीक है न ?"

"हाँ भा जी, ठीक हूँ।" काली ने बायीं हथेली पर लगे नमक को चाट लिया।

"आओ, मैं तुम्हारी मदद कर देता हूँ।" किशना खालों के ढेर की ओर बढ़ गया। "जब मैंने यह काम शुरू किया था तो मुझे छह-सात दिन उलटियाँ आती रही थीं। बुरा हाल हो गया था। भूख बिलकुल उड़ गई थी। लेकिन धीरे-धीरे आदत बन गई।"

एक क्षण चुप रह किशना हँस दिया, "अब यह हालत हो गई है कि कारखाने से बाहर निकलते हैं तो बदबू का एहसास होने लगता है।··· चलो, उठाओ खाल को··· मैं दूसरी ओर से पकड़ता हूँ।"

काली ने खाल को ऊपर उठाया तो बदबू का एक बड़ा झोंका उमड़ पड़ा और साथ ही मक्खियों का भरपूर हल्ला भी हुआ। उसके हाथ एक बार फिर काँप गए लेकिन उसने दिल को कड़ा बनाए रखा। मरे हुए पशु की खाल का ख्याल आते ही काली को झुरझुरी महसूस हुई। खाल की लिजलिजाहट और नमक-मिली चर्बी से गिरते बदरंग और बदबूदार खून-मिले पानी से काली का मुँह नमकीन और खट्टे पानी से भर गया। उसने पानी की पीक थूक दी और आँखें मूँद लीं।

"दिल कड़ा करो। फोरमैन ने देख लिया तो खड़े पैर ही जवाब दे देगा। तेरा तो अभी तक नाम रजिस्टर पर भी नहीं चढ़ा है।" किशने ने चेतावनी दी।

काली ने सिर को जोर-जोर से हिलाया और उस समय को कोसने लगा जब वह पैदा हुआ था। गीली खाल के दोनों छोर उसके हाथो से फिसल उसके पाँव पर आ गिरे थे।

किशना परेशान था। उसने गर्दन घुमा फोरमैन की ओर देखा। वह खालों की रँगाई मे लगे कारीगरो से गाली-गलौज कर रहा था। किशने को गुस्सा आ गया, "तू मेरे गाँव के मॉझा के साथ आया है। इसीलिए मैं अपना काम छोड़ तेरी मदद कर रहा हूँ।··· मैं कारीगर हूँ। मै दिन-भर में जितना काम निपटाता हूँ, उसी हिसाब से पैसे लेता हूँ। कारखाने का तनखाहदार नौकर नही हूँ।"

किशने की बात सुन काली सहम गया और उसने अपने शरीर को सुकेड़ लिया। किशने ने दबी आवाज में काली की ताड़ना की, "ऐसा लगता है कि तू असले का नहीं है। जरूर कहीं-न-कही गड़बड़ हुई है। वरना पितापुर्खों के पेशे को हाथ लगाते हुए तुम्हारी हालत इतनी खराब नही होनी चाहिए थी।"

काली ने ध्यान से किशने की ओर देखा। उसकी सजल आखों मे लाल डोरों मे चमक पैदा हुई। उसने नाक को सुड़सुड़ाते हुए साँस को बहुत जोर से अंदर खीचा जैसे वह अपने गुस्से पर काबू पाने की भरपूर कोशिश कर रहा हो।

"भाई, देख ले। अगर यह काम तेरे बस का नहीं है तो कोई और धंधा तलाश कर ले।" किशने ने फैसला सुनाया।

काली के मन में गुस्से का स्थान डर ने ले लिया क्योंकि सारी दुनिया पहले ही सिमटकर उसकी आँखों के सामने केवल एक बिंदुमात्र रह गई और फिर इस हद तक फैल गई थी कि वह अपना अस्तित्व कहीं महसूस ही नहीं कर पा रहा था।

कुछ क्षण काली सिर झुकाए खड़ा रहा जैसे अपने अंदर झाँकने का यत्न कर रहा हो। उसने दोनों हाथ कछहरे पर फेर उन्हें साफ किया और फिर मुँह को पोंछ किशने के घुटनों की ओर झुक गया। "भा जी, आपने मुझे मेरा असला याद करा दिया है। मैं काम करूँगा। पहले कभी किया नहीं। इसलिए सीखने में थोड़ा टैम लगेगा।"

"सीखोगे तो काम आएगा। तुम तो ढेरी ढा देते हो।" किशना खिन्न था। उसने पाँव में पड़ी खाल की ओर इशारा किया, "उठा इसे। मैं भी हाथ देता हूँ।"

काली ने खाल को दो छोरों से पकड़ ऊपर उठा दिया। किशने ने भी दोनों कोने खींचकर खोल दिए, "ले चल इसे घसीटकर... हौज में फेंक दे।"

खाल को घसीटता हुआ काली पानी से भरे हौज के पास ले गया। किशना उसके सामने आ खड़ा हुआ, "अब इसे दोनों ओर से जोर-जोर से हिला ताकि ज्यादा-से-ज्यादा नमक झड जाए।"

खाल को बार-बार झाडने से चर्बी-मिला नमक कच्चे फर्श पर फैल गया और कुछ काली के पाँव, टाँगों, बाजुओं और बाकी शरीर पर चिपक गया।

"अब इसे हौज मे फंक दे। अच्छी तरह बिछाकर ताकि खाल का सारा नमक धुल जाए।" किशना दोनों हाथ कमर पर रखे हुए काली को हिदायतें दे रहा था और वह उनके अनुसार काम निपटा रहा था।

जब काली ने तीन खालें हौज में फेंक दी तो किशना उस ओर चल दिया जहाँ फोरमैन बैठा था।

"क्यों किशने, कैसा काम कर रहा है तेरा रिश्तेदार ?"

"फोरमैनजी, है तो अनाड़ी लेकिन जल्दी सीख जाएगा। उसने अपना असला पहचान लिया है।"

"किशने, अपने रिश्तेदार पर नजर रखना। काम सिखाते रहना। इससे तुम्हें अपने पुराने दिन भी याद आ जाएँगे।... बंसा आ गया तो तेरे रिश्तेदार को वह काम सिखा देगा।" फोरमैन ने हुक्के की नय परे हटा खाट पर लेटते हुए पूछा, "तेरे रिश्तेदार का नाम क्या है ?"

"फोरमैनजी, मेरी उससे कोई रिश्तेदारी नहीं है। मेरे गाँव के माँझा की जान-पहचान है। उनके साथ कुछ दिन रेढ़ा खींचता रहा है। वही सवेरे इसे साथ लेकर आया था। मैंने माँझा को आपसे मिलवाया भी था।" किशने ने अपना स्पष्टीकरण इस

अंदाज से दिया जैसे वह काली के प्रति हर प्रकार की जिम्मेदारी से मुक्त होना चाहता था।

"मैंने उसका नाम पूछा है," फोरमैन का स्वर बहुत तल्ख था।

"काली। पूरा नाम कालीदास बताता है। आगे रबजी को पता होगा।" किशने ने काली से अपना रिश्ता बिलकुल तोड़ने के लिए उसके प्रति अविश्वास प्रकट किया।

"इसका आगा-पीछा क्या है ?" फोरमैन ने हुक्के की नय को अपनी ओर खीच लिया।

"फोरमैनजी, मुझे उसके अते-पते के बारे में कुछ भी मालूम नहीं है। सिर्फ इतना पता है कि वह माँझा की पहचान का है। वही कह रहा था कि भला आदमी है।" किशने ने सिर झटक दिया।

"भाई, नौकरी तो तुम्हारे कहने पर ही दी है। तुम्हीं उसके जामन बनोगे।"

"फोरमैनजी, आप मेरी तरफ से उसे अभी कान से पकड़ कारखाने से बाहर निकाल दें। मेरी कौन-सी सगी मौसी या फूफी का बेटा है। इतना बड़ा शहर है, कहीं-न-कहीं यह भी मर-खप जाएगा।" किशने ने फोरमैन के सामने यह बात सिद्ध करने की कोशिश की कि उसे काली के भले-बुरे में रत्ती-भर भी दिलचस्पी नहीं है, "माँझा पूछेगा तो बोल दूंगा कि फोरमैनजी को तुम्हारा आदमी नहीं जँचा।"

फोरमैन खाट से उठ गया और हुक्के की नय को परे धकेल दिया, "किशने, चमड़े पर जैसे कीकर की छाल का रंग चढ़ता है वैसे ही तुम पर भी शहर का रंग चढ़ गया है। तू चूने-सा कोरा बन गया है।... भलमानसी भी कोई चीज होती है।... माँझा तो तेरे गाँव का है। और कालीदास उसका कोई जानकार है।... हमारे यहाँ रिश्तेदारी और साँझ सात पुश्तों और परतों तक चलती है। तेरी तो दूसरी परत ही सूख रही है।"

फोरमैन की बात सुन किशना भौचक रह गया। वह अपने-आपमें लज्जित-सा महसूस करने लगा। फोरमैन को अपनी ओर झाँकता पा किशने ने नजरें झुका लीं।

"बोलता क्यों नहीं ?" फोरमैन ने कुछ तीखी आवाज में पूछा। लेकिन किशना दाएँ पाँव के अँगूठे से फर्श को ठोकता हुआ बदस्तूर जमीन को घूरता रहा तो फोरमैन कुछ शिकवा करने और कुछ समझाने के अंदाज मे बोला, "ये सब बाते मैं भी उससे पूछ सकता था। तेरे से सिर्फ इसलिए पूछी हैं ताकि मुझे यह पता चल सके कि तुम्हे उसमें कितनी दिलचस्पी है और तू उसे काम सिखाने के लिए कितना तरद्द कर सकेगा।"

"फोरमैनजी, काम तो मैं उसे सिखा ही रहा हूँ। लगता है कि इसने पहले कभी कोई गंदा काम किया नहीं है। इसीलिए बदबू से वह परेशान हो गया है और

मक्खियो की भिनभिनाहट से घबरा रहा है और खाल की लिजलिजी चरबी देख उसे मतली होती है। उसने उलटियाँ भी की हैं। मैंने उसे नमक चटाया तो उसकी तबीयत सँभली है।" किशने ने एक-एक शब्द पर जोर दिया।

"अच्छा··· अगर वह गाँव से आया है तो सेपी पर खेती करता होगा। शहर का है तो कहीं मेहनत-मजदूरी में लगा होगा।" फोरमैन धीरे-धीरे सिर हिलाने लगा। "तभी तो कच्ची खाल को देख उसे मतली होती है।"

"फोरमैनजी, काम तो गंदा है ही।··· नर्क के भोगी भी ऐसे गंदे काम नहीं करते होंगे। फिर काली का तो पहला दिन है। उसने जिंदगी में शायद पहली बार कच्ची खाल को छुआ होगा। कभी-कभार कारखाने में ऐसी गंदी खाल आ जाती है कि इतने साल काम करने के बावजूद हमें भी मतली होने लगती है।" किशना अब अप्रत्यक्ष रूप से काली का पक्ष ले रहा था।

"काम गंदा है तो पैसे भी तो ज्यादा मिलते हैं।··· तू दिन के ढाई-तीन रुपये कमा लेता है।"

"किसी-किसी दिन तो पूरे तीन भी बन जाते हैं।" किशना मुस्कराया।

"अच्छे-से-अच्छे सधे हुए कारीगर को इतनी दिहाड़ी नहीं मिलती। बढ़िया राजगीर चार-पाँच रुपए दिहाड़ी पाता है। आम मजदूर बारह आने से सवा रुपया कमाता है··· वह भी सारा दिन खुच्चे तुड़वाने के बाद।" फोरमैन ने हेकड़ी जताई, "देख किशने, यह तंग लाया हुआ आदमी है। तेरे कहने पर ही मैंने इसे काम पर रखा है। अब यह तुम्हारी जिम्मेदारी है, इसे काम सिखाओ और धंधे मे इसका दिल भी जमाओ।"

"फोरमैनजी, मेरा काम कौन करेगा। पाँच खालें सीने और बाँधने पर ही ढाई रुपए मिलते हैं। एक तो काम बारीक है। दूसरे जोखम-भरा। नुकसान होने की सूरत में आप पूरी खाल के पैसे काट लेते है।" किशना गिड़गिडाया।

"बस तुम जाओ। अपना काम करो। जब टैम मिले इसके पास भी चक्कर लगा जाना। मै भी नजर रखूँगा।· बसा आ जाए तो तेरे आदमी को उसके सुपुर्द कर दूँगा। दोनों मिलकर काम करेंगे।" हुक्का उठा फोरमैन दालान की ओर बढ़ गया।

किशने ने बड़े दालान की ओर जाते हुए गर्दन घुमा काली की ओर देखा और उसे खाल में जूझते हुए पा क्षण-भर के लिए ठिठका और फिर लाँघें भरता हुआ बड़े दालान में घुस गया।

"किस चक्कर में फँसे हो ?" मिट्टू ने हाथ पर लगी छीलन को झाड़ते हुए पूछा।

"चक्कर कोई नही, यारा। एक नया छलारू नौकर रखवाया है। उसे काम सिखा रहा था।" किशने ने कारोबारी अंदाज में बताया।

"यारा, मेरा भतीजा भी बेकार घूम रहा है। लफंटरी कर रहा है। उसके बारे में भी फोरमैन से बात करना। तुम्हारी बात वह मानता है।" मिट्टू ने घुटनों और बाजुओं पर पड़ी छीलन को हाथों से झाड़ते हुए फरमाइश की।

"नए छलारू को बहुत बदबू आ रही है। उलटियाँ भी कर रहा है। भाग गया तो तेरे भतीजे का नंबर लगवा देंगे।" किशने ने भरोसा दिलाया। "यारा, लफंटरी तो मेरा अपना सगा छोटा भाई भी कर रहा है लेकिन मैं उसे इस नर्क में फँसाना नहीं चाहता। हम तो इसके भागीदार बन ही गए हैं। रिश्तेदारों को यहाँ क्यों फँसाया जाए। तू भी अपने भतीजे को कोई और काम-धंधा करा दे।"

"यारा, बहुत जतन किया। उसे खड्डी का काम सिखाने का··· लेकिन नहीं सीख पाया।··· फिर बर्फ के कारखाने में भेजा। वहाँ से भी भाग आया। जिस्त के कारखाने में किसी की मारफत खरादिए का काम सीखने के लिए शागिर्द रखवाया। कुछ रुपए भी खर्च किए। पगड़ी, लड्डुओं का डिब्बा और ग्यारह रुपये उस्ताद को नजर-न्याज दिए, मत्था टिकाई के···। लेकिन चार दिन बाद रोता-रोता आ गया कि उस्ताद बहुत तंग करता है। गाली देता है, पीतल का ढेला उठा मारता है। जो भी अंग सामने आ जाए, हथौड़े से ठोक देता है।"

"चलो, जो उसकी किस्मत में लिखा है, उसे जरूर मिलेगा। जहाँ का अन्न-जल बँधा है, वहाँ पहुँच ही जाएगा।" बात खत्म कर किशना आगे बढ़ गया।

काली खाल की बदबू और लिजलिजेपन पर काबू पाने और काम में मन लगाने का यत्न कर रहा था लेकिन उसके कान पहले फोरमैन और किशने और बाद में मिट्ठू और किशने की बातचीत की ओर लगे हुए थे। उनकी बातें सुन काली को कभी डर महसूस होने लगता कि फोरमैन धक्के मार-मार उसे कारखाने से बाहर निकाल देगा। फिर अगले ही क्षण उनके व्यवहार में तब्दीली पा वह खुश हो उठता और उसे विश्वास-सा हो जाता कि फोरमैन की कृपा उस पर बनी रहेगी।

काली ने लंबी साँस छोड़ी कि काम गंदा और बीमारियों का घर सही, लेकिन उजरत भी तो ज्यादा मिलती है। काम सीख जाने पर एक दिन के दो रुपए, वाफर काम के अलग से पैसे। मतलब कि मेहनत का मोल मिल ही जाता है।

काली ने दिमाग पर जोर दे हिसाब लगाया कि दो रुपये दिहाड़ी से तीस दिन के बाद उसे साठ रुपये मिलेंगे तो उसे विश्वास नहीं हुआ और हैरानी से उसकी आँखें फटी-सी रह गईं। अविश्वास और खुशी के इन क्षणों में वह खालों की बदबू, लिजलिजेपन और आसपास की गंदगी को बिलकुल ही भूल गया। इस कारखाने में आने के बाद उसने पहली बार खुलकर गहरी साँस ली। उसे बहुत लंबे अंतराल के बाद अपनी अहमियत और हैसियत का एहसास हुआ और उसने गर्दन ऊपर उठा अपने चारों ओर यूँ नजर दौड़ाई जैसे हर चीज का बखूबी जायजा लेना

चाहता हो।

दालानों के पीछे छप्पड़ के किनारे खुले मैदान में काम कर रहे लोगों को जब फोरमैन ने खाट पर बैठे-बैठे ही डाँट मारी और एक ही साँस में लंबी और गंदी गाली में उनकी सात पुश्तों को पिरो दिया तो काली भी सावधान हो गया। वह स्वप्नों की सुनहरी दुनिया से फिसल एक बार फिर उस जमीन पर आ गया जहाँ चारों ओर गंदगी और बदबू-ही-बदबू थी।

जब हौज में चौथी खाल फेंक काली पानी के छींटों से बचने के लिए पीछे हटा तो फारमैन ने खाट पर बैठे-बैठे ही आवाज दी, "क्या कर रहा है तू ? खाल को धीरे से फेंक। जोर से फेंकने से सारा पानी उछलकर बाहर गिर जाएगा और उसे दोबारा क्या तेरा बाप भरेगा ?"

काली ने एक नजर फोरमैन की ओर देखा। फिर सहमकर निगाहें झुका लीं और गर्दन झुकाए खालों के ढेर की ओर बढ़ गया। ढेर में सबसे ऊपर पड़ी खाल को छूते ही उसको एक बार फिर मतली का एहसास हुआ। खाल के ऊपर जगह-जगह दाने थे और उनका रंग सुर्खीमायल था। काली ने अपने हाथ खाल से खींच लिए और पेशाव करने के बहाने दीवार के पास जा खड़ा हुआ। वह फोरमैन की ओर पीट करके उलटी को रोकने की कोशिश में बार-बार थूक रहा था लेकिन नमकीन और खट्टा पानी जैसे उसके मुँह में उछल-उछल बाहर आना चाहता था।

जब उसका जी किसी हद तक सँभल गया तो काली फिर खाल के पास आ खड़ा हुआ। उस पर मक्खियों ने अलग तह-सी बना दी थी। यह ख्याल आते ही काली के हाथों में एक बार फिर स्फूर्ति आ गई कि काम सीख लेने पर उसे दो रुपये दिहाड़ी मिलेगी जबकि इससे पहले उसने शहर में दस-बारह आने दिहाड़ी से अधिक कभी नहीं कमाए।

काली ने आँखें मीच चेचक से मरे पशु की खाल को दोनों हाथों से उठाया और उसे पूरे जोर से खींच हौज में फेंक दिया। एक बार फिर हौज के पानी में बुरी तरह उछाल आया।

"इस मरदूद को समझा··· हौज में खाल कैसे फेंकी जाती है। आ जाते हैं अपनी माँ की गोद से उठकर··· कमाई करने।" फोरमैन ने अपने वाक्य को गालियों में पिरोते हुए हौज की ओर जा रहे बंसे को हिदायत दी।

"फोरमैनजी, क्या नया आदमी रखा है ?" बंसे ने काली की ओर भरपूर नजरों से देखा।

"हाँ, आज सवेरे ही आया है। किशने के गाँव का कोई आदमी इसे यहाँ लाया था। काम कर सका तो रख लेंगे।" फोरमैन ने बंसे को समझाया और फिर हुक्का हाथ में लिए तेज-तेज कदम उठाता और धक-धक गालियाँ देता परले दालान की ओर बढ़ गया।

बंसा और काली अपने-अपने स्थान पर खड़े फोरमैन की गालियों को सुनते रहे। दूर चले जाने के कारण उसकी आवाज स्पष्ट सुनाई नहीं दे रही थी। बंसे ने सिर को हल्का-सा झटका दिया और धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ काली के पास आ खड़ा हुआ। काली ने भी नजर-भर उसकी ओर देखा और मुस्कराते हुए माथे को छू बंसे को वंदगी की। जवाब में बंसे के होंठों पर भी हल्की-सी मुस्कराहट फैल गई। बंसे ने कच्ची खालों के ढेर की ओर देखा। दोनों कोनों को छू आँखें बंद कीं और हाथ जोड़ कुछ क्षण बुदबुदाया। फिर हौज के किनारे काली के पास आ उसमें पड़ी खालों की ओर देखने लगा।

"कितनी खालें डाली हैं ?"

"चार।" काली ने एकदम उत्तर दिया जैसे उसे सारी बात जुबानी याद थी।

"सूरज छिपने से पहले इस पूरे ढेर को धोना है। वरना अँधेरे मे काम करना पड़ेगा और रोटी की जगह फोरमैन की मोटी-मोटी गालियाँ ही पेट भरने के लिए मिलेगी।" बंसे ने काली को चेतावनी दी।

काली ने कोई उत्तर नही दिया। वह और भी ज्यादा सहम गया। उसकी साँस रुकने लगी कि अगर उसने काम ठीक ढग से नही किया तो यह नौकरी भी चली जाएगी।

इससे आगे वह सोच नही सका। उसके पूरे शरीर में ऐसी सिहरन उठी कि आँखों के आगे अँधेरा छा गया। वह हाथ जोड़ बंसे के आगे गिड़गिड़ाया, "मैंने पहले यह काम कभी नहीं किया है। कच्चा चमड़ा कमाना तो एक तरफ, मैंने कभी इसे छुआ भी नही है। गाँव की हड्डा रोड़ी में लोगों को जानवर की खाल खींचते हुए एक-दो बार देखा जरूर था।"

"सब काम करने से ही आते है। माँ की कोख से काम सीखकर कोई भी पैदा नहीं होता। पेट सबकुछ सिखा देता है।" बंसे ने पीछे मुड़ते हुए काली को उपदेश दिया, "आओ मेरे साथ।"

उसके पीछे-पीछे काली भी खालों के ढेर के पास पहुँच गया। बंसे ने लपककर बरामदे के स्तून में बने आले से सरसों के तेल से भरी एक मैली कुप्पी उठाई और उसे औंधा करके बायीं हथेली पर तेल डाला। कुप्पी को दोबारा आले में रख उसने दोनों हाथों को थपथपाया ताकि हथेलियों पर तेल समान रूप से अच्छी तरह फैल जाए। फिर उसने दायाँ हाथ बायें बाजू पर और बायाँ हाथ दायी बाँह पर फेरा। और फिर दोनों हाथों का छाती और पेट पर जोर-जोर से रगड़ा ताकि तेल की चिकनाहट अच्छी तरह फैल जाये।

बंसे ने एक बार फिर कुप्पी उठा बायीं हथेली पर बहुत-सा तेल उँडेला और दोनों हाथों को जोर-जोर से थपथपा टाँगो पर रगड़ा। फिर उसने दाएँ हाथ की बड़ी उँगली के नाखून से पहले दायीं और फिर बायी टाँग को कुरेदा और उँगली

पर मैली चिकनाहट का जायजा ले दोनों टाँगों पर खुरचन की लकीर देख उसने लंबी साँस छोड़ी। काली की ओर देख उसने पूछा, "तूने शरीर को तेल लगाया या नहीं ?"

"नहीं।"

"तू पहले तेल लगा ले। शरीर पर चिकनाहट हो तो नमक और चूने के पानी का कम असर होता है। आदमी खुजली-खारिश से थोड़ा बचा रहता है। चरबी-बोटी भी शरीर पर नहीं टिकती।" बंसे ने काली को समझाया।

बंसे का अनुकरण करते हुए काली भी अपने शरीर पर तेल पोतने लगा। बंसे ने ढेर के गिर्द घूम खालों का निरीक्षण किया। फिर काली की ओर मुड़ता हुआ बुदबुदाया, "ठेकेदार ने बहुत गंदा माल भेजा है। ऐसे माल पर बहुत मेहनत करनी पड़ती है। समय ज्यादा लगता है लेकिन पैसे उतने ही मिलते हैं। इस तरह काम ज्यादा और दिहाड़ी कम हो जाती है।··· साला, हमेशा अपना फायदा ही देखता है। कारिंदा बेशक मर जाए।··· अपनी माँ के इन खसमों ने भी एक दिन जान देनी है।"

बंसे को खिन्न देख और उसकी तल्ख बातें सुन काली सहम गया और भयभीत निगाहों से उसकी ओर देखने लगा।

"पता नहीं, साले कहाँ से बीमारी से मरे हुए जानवरों की खालें लाते हैं। चाहे खाल खींचने और कमानेवालों को भी वही बीमारी लग जाए।" बंसा और भी ज्यादा भिन्ना गया।

"तेरे लिए क्या सलाटर हौस (सलौटर हाउस) से भेड़-बकरी की खालें आएँगी। वहाँ की खालें तो सीधी मशीनी कारखानों में जाती हैं। पच्चीस-तीस की एक खाल होती है। विलायती मशीनों से चमड़ा कमाते हैं··· विलायती बूट बनाने के लिए। मरे हुए झोटों, भैंसों और गाय की खालें यहाँ आती हैं। इन्हें कमाते-कमाते हम तो मर ही रहे हैं। जो उनके जूते पहनता है उसके पाँव में भी एक-दो दिन में ही चमरस हो जाता है। चमड़े को नर्म करने के लिए उसे अच्छी तरह सरसों के तेल में भिगोना पड़ता है।" बरामदे के पास खड़ा किशना मुस्करा दिया।

"पतंदर ने तुम्हें यहाँ देख लिया तो तेरी भी खाल खींच खौला बना देगा।" बंसे ने किशने को चेतावनी दी।

"बंसे भा, चिंता न कर। फोरमैन उधर किरपू, जिंदर और बाकी लोगों से प्रेमालाप कर रहा है। दादा-दादी, माँ-बाप, बहन-भाई, साला-बहनोई सबको एक ही लड़ी में पिरो रहा है।" किशना मुस्कराया। फिर गंभीर हो काली की ओर इशारा किया, "इसका ध्यान रखना। नया आदमी है··· आराम से काम सिखाना। मैं भी चक्कर लगाता रहूँगा।"

"क्या यह तेरा रिश्तेदार है ?" बंसे ने एक आँख दबा दी।

"रिश्तेदार तो नहीं लेकिन अपनी-जान-पहचान का है।"

"यह किसका आदमी है ? फोरमैन ने भी यही ताकीद की है। अब तू आ गया है।" बंसा शरारत से मुस्करा दिया, "लगता है यह कारखाने का जमाई है।"

"बस, ध्यान रखना।" किशना बंसे के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही दालान की ओर मुड़ गया।

"बात तो सुन," बंसे ने किशने को कुछ ऊँची आवाज में पुकारा।

"खाल बाँध आऊँ।" किशने ने हाथ में पकड़ा हुआ सुआ और तंद बंसे की ओर लहरा दिए।

बंसा कुछ क्षण किशने को दूर जाते हुए देखता रहा। वह दालान के अंदर घुस गया तो वह हाथ मसलता हुआ खालों के ढेर की ओर तकने लगा। "उठा उधर से। इधर से मैं पकड़ता हूँ।"

काली को क्षण-भर के लिए हिचकिचाता देख बंसे ने उसे डाँट दिया, "पिता-पुरखों से यह धंधा चला आ रहा है। इठलाता क्यों है ?"

बंसे की बात सुन काली ने खाल के ढेर से नजरें हटा लीं और दोनों सिरों को टटोलने लगा। लेकिन जब उसे याद आया कि इस काम के लिए उसे रोजाना सवा-डेढ़ रुपए मिलेंगे और काम सीख लेने पर पूरे दो रुपए तो उसने खालों की ओर यूँ देखा जैसे वह सुगंधित फूलों का ढेर हो।… उसने खाल के दोनों सिरों को मजबूती से पकड़कर ऊपर उठाया। उसमें से खून और नमक के पानी में भीगी मांस और चरबी की कई बोटियाँ नीचे गिरीं और उन्हें क्षणभर में ही मक्खियों ने अपने परों में छिपा लिया।

"चलो, खाल को झाड़ दें। जल्दी साफ हो जाएगी।" वे खाल को हाथों मे मजबूती से पकड़े हुए पूरी ताकत से ऊपर-नीचे उछालते रहे। खाल से पानी, खून, चरबी और मांस की छोटी-छोटी बोटियाँ फुहार की तरह कच्चे फर्श पर फैलने लगी।

"चलो, फेंको हौज मे।" बंसा हौज की ओर बढ़ने लगा।

बंसे और काली ने खाल को हौज मे बिछा दिया और धीरे-धीरे वह पानी में खुले कपड़े की तरह भीगकर सिकुड़ती हुई डूबने लगी।

"ठीक है।" बंसे ने सिर हिलाया, "मेहनत करने से काम सीख जाओगे।… बस नाक मरना चाहिए और दिल कड़ा होना चाहिए। फिर यह काम तुम्हारे आगे-आगे चलेगा।"

बंसे की बात सुन काली मन-ही-मन में कुछ प्रसन्न हुआ। उसने आँख चुरा बंसे की ओर देखना चाहा लेकिन उसकी निगाहें अपने ऊपर टिकी पा काली ने मुँह फेर लिया।

"हौज में पहले कितनी खालें डाली हैं ?"

"चार।"

"हाँ। तूने पहले भी बताया था।" बंसा बुदबुदाया, "इस हौज में दो खालें और डाल देते हैं।"

बंसा खालों के ढेर के पास आ खड़ा हुआ। वह खालों की संख्या के बारे में अनुमान लगाने लगा। कच्चा-पक्का हिसाब जोड़ वह बुदबुदाया, "कुल चौबीस खालें होनी चाहिए।··· पाँच डाल दी हैं। उन्नीस और डालनी हैं। फिर उन्हें साफ भी करना है। चूना लगाने के लिए।"

सूरज की ओर देख समय का अंदाज लगा बंसा भयभीत हो गया, "लगभग आधी दिहाड़ी तो निकल ही गई है। लोग-बाग रोटी-टुक्कर खाने के लिए पर तोल रहे हैं। काम हर हालत में खत्म करना है वरना फोरमैन हमारी खाल खींच लेगा।"

बंसे की बात सुन काली सहम गया। लेकिन जब उसने हल्ला मार खालों के ढेर की ओर कदम बढ़ाए तो काली भी उसके पीछे लपक गया।

"चल भाई, मार हमला।" बंसे ने खाल को दोनो कोनों से पकड़ ऊपर उठा दिया।

काली ने दूसरे कोने से खाल को ऊपर उठाया। उसके बहुत-से सुराखों से गंदा खून, मैली चरबी और काला-सा पानी गिरता देख काली को मतली का इतना ज्यादा एहसास हुआ कि खाल के दोनों सिरे उसके हाथ से छूट गए और वह बंसे के घुटनों से जा टकराई।

"क्या कर रहे हो ?" बंसे ने काली की ताड़ना की। फिर खाल को परे फेंक दिया। अपने घुटनों से नीचे टाँगों पर चरबी और गंदे खून-पानी को बहते हुए देख वह भड़क उठा, "क्यों तू मेरी जान लेकर ही रहेगा ?" बंसे ने काली को डाँट दिया, "इस काम मे तेरा मन नहीं है तो कहीं और जाकर मर-खप। मेरी जान क्या जरूर लेनी है।··· मैं अभी फोरमैन से बात करता हूँ। अगर ऐसे आदमी ही कारखाने में रखने हैं तो हमारी छुट्टी कर दे। वरना कारखाना भी बंद होगा और हम बीमारी से एड़ियाँ रगड़-रगड़कर मरेंगे।"

बंसा दोनों टाँगो पर बारी-बारी उछलकर खून-पानी और चरबी को झाड़ने का यत्न करने लगा। "आ जाते हैं घर से नौकरी करने।··· बाप का कारखाना है ना।"

बंसे ने गर्दन घुमा फोरमैन की ओर झाँका। वह उनकी ओर पीठ करके लेटा हुआ हुक्का गुडगुड़ा रहा था। बंसा कुछ कदम फोरमैन की ओर बढ़ा तो काली का कलेजा धक से मुँह को आ गया और साँस रुक-सी गई।

बंसा रास्ते से ही पलट आया। काली के माथे पर बिखरे हुए बालों को मुट्ठी में पूरे जोर से समेट उसने झटका दिया, "अगर तुम्हें काम नही करना तो यहाँ आया क्यों है ? इतनी सिफारिशें क्यों लड़ा रहा है ?"

काली ने कोई उत्तर नहीं दिया। गर्दन झुकाए गुमसुम खड़ा रहा। बंसे ने उसके बालों को और भी ज्यादा जोर से एक और झटका दिया, "बोलता क्यों नहीं। जवाब क्यों नहीं देता ?"

काली फिर भी खामोश रहा। उसकी आँखों में क्रोध और ग्लानि के कारण आँसू आ गए थे। वह दाँत पीसता हुआ अपने गुस्से और आँसुओं को रोकने का भरपूर यत्न कर रहा था।

"क्या तेरी जीभ सूख गई है जो बोलता नहीं है ? गली में कुत्ता भौंकता है तो पूरे मुहल्ले के कुत्ते भौंक-भौंककर जवाब देते हैं। क्या तेरी नजरों में मेरा इतना भी मोल नहीं है ?" बंसे की नजरें काली पर गड़ गई थीं।

"बताता क्यों नहीं ?" बंसे ने कड़कती आवाज में पूछा।

फोरमैन ने भी बंसे की कड़क सुनी और हुक्के की नय छोड़ उसने पीछे गर्दन घुमाई और काली को बंसे की बगल में कसाई के सामने बकरी की मुद्रा बना खड़ा देख उसने निगाहें पलट लीं और एक बार फिर इत्मीनान से हुक्का गुड़गुड़ाने लगा।

काली ने आँख उठा ऊपर देखा तो आँसुओं की दो बूँदें उसकी पलकों से टपक गालों पर आ गिरीं और फिर वहाँ से फिसलकर छाती पर फैल गईं।

बंसे ने काली के बाल छोड़ दिए और एकदम पीछे हट गया और दोनों हाथ दाएँ-बाएँ कूल्हों पर रख लिए और काली को निहारता रहा। फिर उसे समझाने लगा, "देख बल्लया, ऐसे काम नहीं होगा जैसे तू कर रहा है। ठीक है कि कोई भी आदमी काम सीखा हुआ पैदा नही होता लेकिन यह भी सच है कि बिना मन लगाए, मेहनत और लगन के कोई काम आता भी नहीं है।··· आगे तू समझदार है, स्याना है। रोटी को तोती नहीं कहता···।"

काली खामोश रहा। वह अपने मन में बहुत शर्मिंदा था कि वह काम करना भी चाहता है और उससे काम हो भी नहीं रहा है। "तू मुझे सीधा जवाब दे. बल्लया। मैं फोरमैन से बात करूँ। काम निपटाने की जिम्मेदारी मेरी है और उसे तेरी कारगुजारी के बारे में बताना और सचेत भी करना मेरा फर्ज बनता है।" बंसे ने आँखें तरेरते हुए काली को आखिरी चेतावनी दी।

"काम करूँगा।" काली ने अनुमति में सिर हिलाया। फिर वह हाथ मसलने लगा, "नया काम है, ऊपर से बहुत गंदा। अनचाहे भी गलती हो ही जाती है। माफी चाहता हूँ।" काली ने हाथ जोड़ दिए।

बंसे का दिल पसीज गया। उसके होंठों पर हल्की-सी मुस्कान आ गई, "यह काम करना ही है तो इसमें दिल लगाओ। फोरमैन ने तुम्हें उलटी करते हुए देख लिया तो कान पकड़कर छप्पड़ के रास्ते तुम्हें कारखाने से बाहर निकालेगा। समझे ?"

जब सूरज पश्चिम की ओर झुकने लगा तो फोरमैन ने अपना हुक्का सँभाला और पाँव में मोटी खाल का देसी जूता घसीटता हुआ गेट की ओर चल दिया। यह सब कारिंदों के लिए इस बात का संकेत था कि रोटी की छुट्टी हो गई है।

फोरमैन एक क्षण के लिए हौजों के पास रुका। ध्यान से उन पर निगाह डाली। खालों के ढेर की ओर देख उसने बंसे और काली की ओर निगाहें उठा दीं, "कितनी खालें हौजों में डाल चुके हो ?"

"बारह-चौदह तो डाल दी हैं। कुल शायद चौबीस खालें हैं।" बंसा भी खालों और हौजों की ओर झाँकने लगा।

"हूँ।" फोरमैन ने संतुष्ट हो सिर हिलाया।

फोरमैन को शांत देख बंसे ने साहस बटोरा, "फोरमैनजी, आजकल माल बहुत गंदा आ रहा है। चेचक से मरे पशु, हैजा के शिकार डंगरों की खालें ही आ रही हैं। क्या पशुओं में बीमारी फैल गई है ?"

"यहाँ वही माल आएगा जो मण्डी में पहुँचता है।" फिर उसने काली की ओर इशारा किया, "तू इसे जल्दी-जल्दी काम सिखा दे। फिर तू आधा दिन इधर हौजों पर काम करेगा और आधा दिन खालों की छिलाई पर।··· खालें भी अब चौबीस की बजाय बत्तीस आया करेंगी। ऑर्डर का माल भी बनेगा।"

"फोरमैनजी, वह तो ठीक है। मजदूरी भी क्या बढ़ेगी ?" बंसा मुस्कराया और साथ ही हाथ जोड़ दिए।

"हर समय जीभ नहीं लटकानी चाहिए और न ही हाथ फैलाना चाहिए। सुना ? काम की फिक्र कर। लोग ज्यादा खाकर तो मरते सुने हैं। काम करने से आज तक किसी की मौत नहीं हुई। समझा मेरी बात ?" हेकड़ी में सिर झटक फोरमैन आगे बढ़ गया।

"मालिक हो महाराज।" बंसा खिसियाना हो हाथ मलने लगा।

फोरमैन गेट पार कर गया तो वह हताश हो बोला, "यह तो समझता है कि हमने कारखाने के लिए अपनी जिंदगी का पट्टा लिखा दिया है। भूखे मरो लेकिन काम ज्यादा करो।"

"सबका पेट गालियों से जो भर देता है। फिर पैसे की क्या जरूरत है ?" किशना हँसा और बंसे को कंधे से पकड़ आगे धकेल दिया। "चल, हाथ-पैर धो ले। रोटी का टैम हो गया है।"

कारखाने में काम करनेवाले अधिकतर लोग पास के मुहल्लों में ही रहते थे। बंसा, जिंदर, निहाला और भीमा का डेरा कारखाने के पिछवाड़े कोठड़ी में था। हफ्ते में एक-आध बार वे बारी-बारी गाँव चले जाते थे और रात गुजारकर सुबह-सवेरे काम पर पहुँच जाते थे। वे एक-दो दिन का खाना अपने साथ ले आते थे।

सब लोग कारखाने की बगल में मैदान के पार छप्पड़ के उस किनारे पर चले

गए जहाँ बरसात में सिर्फ खेतों का पानी भरता था। कारख़ाने या मुहल्लों का गंदा पानी उस हिस्से मे नहीं आता था। वे छप-छप की आवाज पैदा करते हुए छप्पड़ में उतर गए। उन्होंने अपने हाथ-पाँव, बाँहें और टाँगें अच्छी तरह मल-मलकर साफ कीं और बाहर निकल जोर-जोर से दोनों पाँव थपथपाते हुए अपने-अपने ठिकाने की ओर चले गए।

"काली, तू रोटी का क्या करेगा ?" किशने ने कुछ चिंतित हो पूछा।

"आसपास किसी तंदूर से खा लूँगा।"

"तंदूर तो एक छोड़ दो हैं। गली के मुहाने के दोनों ओर तंदूरिए बैठते हैं। वहाँ दाल-रोटी मिल जाती है।"

"हम भी तो वही जा रहे हैं। साथ लेते जाएँगे।" बंसा बोला। फिर किशने से पूछा, "किशने भा, आज कारखाने में पहरे पर कौन रहेगा ?"

"निहाले को होना चाहिए। उसकी बारी है।" किशने ने सोच में डूबी आवाज में उत्तर दिया।

"ठीक है।" बंसा, जिंदर और भीमा गेट की ओर बढ़ गए।

"बंसे, तू क्या गाँव गया था। आज देर से आया न ?" भीमे ने पूछा।

"गाँव ही गया था।" बंसे ने बताया, "बापू का जी ठीक नहीं चल रहा।"

"क्या हो गया बापू को ?" जिंदर चिंतित हो गया।

"रब ही जाने। हकीम की दवाई चल रही है। गले से बलगम बहुत आती है। छाती में दर्द भी रहता है।"

"क्या तू गाँव से रोटी नही लाया ?"

"बस रोटी लाना भूल ही गया। तड़के से चौधरियों का भूसे का कूप बाँधने में लगा रहा। वहीं शाह वेला कर लिया।··· चौधरी के कोठों से ही सीधा इधर आ गया। टैम बहुत हो गया था।"

वे तीनों गेट से गली में आ गए तो पीछे से निहाले ने आवाज दी, "बसे ओए, गेट बंद करके ऊपर से साँकल चढ़ा देना।"

"यहाँ क्या सोना रखा है जो इतनी चौकीदारी कर रहे हो ?" बसे ने व्यग्य किया। "चेचक से मरे पशुओं की खालें ही तो पडी हैं।"

"गरीबों के मुहल्लो में खालों के चोर ही रहते हैं। दो-चार रुपए भी मिल जाएँ तो दिहाड़ी बन जाती है।" निहाला दालान में खड़े-खडे हँसा और फिर अपनी ही बात पर विश्वास कर गेट को अंदर से बद करने के लिए लपका।

बंसे, जिंदर और भीमे के पीछे-पीछे काली एक-दो कदम छोड़ चल रहा था। यह सोच वह एकदम भयभीत हो गया कि वे भी उसका नाम, पता, हस्ब-नस्ब, आगा-पीछा पूछ सकते हैं। वह बहुत कठिनाई और असमंजस में पड़ गया कि उन्हें क्या जवाब देगा। उनकी किस तरह तसल्ली कराएगा। अगर उसकी असलियत

जाहिर हो गई तो वह घर से तो गया ही है, घाट से भी जाएगा।

इन्हीं विचारों में फँसा काली सिर लटकाए उनके पीछे-पीछे चलता रहा। वे कभी-कभार आपस में बात करने लगते तो काली की परेशानी थोड़ी कम हो जाती लेकिन जब वे खामोश हो जाते तो वह चौकन्ना हो जाता कि अभी-अभी उनमें से कोई-न-कोई गर्दन घुमा उसकी ओर देखेगा और पहला सवाल उसके गाँव के नाम और सकूनत के बारे में होगा।

काली को यह समस्या उसी दिन से पेश आ रही थी जिस दिन उसने शहर में कदम रखा था और पहले आदमी से मिला था। बाद में वह जिसके पास भी गया उससे हर बार यही सवाल पूछे गए और वह किसी-न-किसी तरह टालता रहा। कुछ हद तक उन्हें संतुष्ट भी करता रहा। उसे ख्याल आया कि वह उन सवालों का पक्का जवाब क्यों न बना ले। किसी दूर-दराज के गाँव का नाम बता दे। बहुत सोचने के बाद उसे दसूहा से परे पहाड़ के दामन में एक गाँव का नाम याद आया··· "बलग्गड़ाँ।"

यह नाम उसने रेलगाड़ी में दो मुसाफिरों की बातचीत में सुना था। और पता नहीं क्यों उसके दिमाग में टिक गया था। उसने मन-ही-मन इस नाम को पक्का कर लिया और अपने आपमें संतुष्ट हो आत्मविश्वास के साथ गर्दन ऊपर उठा बंसे और उसके साथियों के पीछे चलने लगा।

जब वे तंदूर पर पहुँचे तो वहाँ काफी भीड़ थी।

"आज देर हो गई है।" बंसे ने तंदूर के सामने फटे टाट पर दोनों ओर मैले-कुचैले लोगों की कतार की ओर देखा।

"चलो, दूसरे तंदूर पर चलते हैं।" जिंदर ने सलाह दी।

"वहाँ तंदूरिया क्या खाली बैठा है ? वहाँ भी यही हाल होगा।··· फोरमैन से कहेंगे कि दोपहर में अपना हुक्का कुछ जल्दी उठा लिया करे।"

"अच्छा, ऐसा करते हैं।" बंसे ने बारी-बारी सबकी ओर देखा।

"क्या ?"

"दो जने इस तंदूर पर बैठ जाओ और दो सामनेवाले पर जाओ। इस तरह रोटी से जल्दी निपट लेंगे।··· एक ही जगह बैठ गए तो हुक्के का दम मारने का टैम नहीं मिलेगा।"

"तेरी सलाह ठीक है। मैं और जिंदर उधर जाते है। तुम दोनों यहीं बैठ जाओ।" भीमा और जिंदर दूसरे तंदूर की ओर बढ़ गए।

तंदूर के सामने पड़े टाट से दो आदमी उठे तो बंसा और काली लपककर खाली स्थान पर बैठ गए। तंदूरिए ने तंदूर को लोहे के तसले से ढाँप दिया, आटे की परात पर मैला गीला कपड़ा खींच दिया। उसने खाली थालियाँ, कटोरियाँ और गिलास उठाए और उन्हें लोहे की बाल्टी में पड़े पानी में हिलाया, धोया और साफ

किया और फिर उसी पानी से हाथ धो अपने स्थान पर आ बैठा और बर्तन खींच बगल में रख लिए।

तंदूरिए ने दो कटोरियों में दाल डाली, थाली में थोड़ा-सा कुतरा हुआ प्याज रखा और सरसों के तेल में बुरी तरह भीगी मैली कुज्जी से आम के अचार की एक-एक छोटी फाँक फेंक थालियाँ बंसे और काली की ओर सरका दीं। फिर बैठे-बैठे ही थोड़ा घूम खुले मटके से पानी के दो गिलास भरे और हाथ आगे बढ़ा उनके सामने रख दिए। और वह तंदूर के मुँह से लोहे का तसला उठा रोटियाँ सेंकने लगा।

काली रोटी की इंतजार में इधर-उधर झाँकने लगा। उसने जोर से साँस खींची तो उसे एहसास हुआ कि यहाँ भी बदबू है लेकिन कारखाने की बदबू की तरह तेज नहीं है।

तंदूरिए ने तंदूर से एकसाथ आठ रोटियाँ निकालीं। कुछ अधजली और कुछ कच्ची रह गई थीं। उसने दो-दो रोटी चार थालियों में फेंक दीं।

"उस्ताद, क्या कर रहे हो। रोटी कच्ची है ?" एक व्यक्ति ने थाली से रोटी उठा तंदूरिए को दिखाई।

"यारा, कुछ होश कर। पैसे खरे करके लेता है और रोटी जली हुई देता है।" दूसरे व्यक्ति ने जली हुई रोटी लहराते हुए आपत्ति की।

तदूरिया अपने काम में व्यस्त रहा जैसे इन बातों का उस पर कोई असर नहीं था। लेकिन जब यही बात बाकी गाहकों ने भी दोहराई तो उसने उन्हें शांत स्वर में समझाया, "भाई, जल्दी में तो ऐसी ही रोटी मिलेगी। माँ के हाथ की-सी रोटी खानी हो तो थोड़ा फुरसत से आया करो।"

तंदूरिए की बात सुन सब लाजवाब हो गए और बुदबुदाते हुए जली और कच्ची रोटियाँ चबाने लगे। जब तंदूरिए ने और दो-दो रोटी उनकी थाली में फेंकीं तो बसे ने मुँह उठा काली की ओर देखा, "तुम्हारा जी खराब है, मतली होती है और उलटी भी आती है। तुम रोटी हाथ रोककर खाना। नहीं तो बाद में तकलीफ होगी।"

काली चार रोटी खाकर ही उठ गया। बंसे ने छह रोटियाँ खाईं और पानी के दो गिलास पिए। पैसे दे वे तंदूर से हट सड़क पर आ खड़े हुए। नाली में गंदा पानी बहते और कीड़ों को कुलबुलाते देख काली ने मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

"खा ली रोटी ?" बंसे ने जिंदर और भीमे की ओर देखा।

"रोटी क्या खाई है, जहर मार की है।" भीमे ने बुरा-सा मुँह बना लिया।

"अन्न परमेश्वर को अभी निंदना नहीं चाहिए।" बंसे ने समझाया, "शुक्र है रबजी का। अच्छा न सही, मिल तो रहा है।"

जब वे कारखाने में पहुँचे तो कुछ लोग आ चुके थे। वे दालान के कोने में गोल दायरा बनाकर बैठे थे। बीच में हुक्का रखा था और वे उसे बारी-बारी से गुड़गुड़ा रहे थे। बंसा और अन्य लोगों को देख उन्होंने उनके बैठने के लिए भी स्थान बना दिया।

अधिक लोग आ जाने से हुक्का गुड़गुड़ाने की बारी देर से आने लगी थी।

"यार, एक हुक्का और होना चाहिए।... यह हुक्का तो खाल सीने और कीकर की छाल का पानी भरनेवालों के काम ही आता है। खाल छीलने और धोनेवालों का भी अपना हुक्का होना चाहिए।"

"जरूर होना चाहिए। फोरमैन से बात कर लो।" किशने ने जोर से कश खींच निहाले की ओर धुआँ फेंक दिया।

"फोरमैन से कौन बात करेगा ?" भीमे ने निराशा में सिर झटका।

जब गेट पर जोर की दस्तक हुई तो उन्होंने गर्दन घुमा पीछे देखा।

"फोरमैन आ गया है।" किशना जोर का कश खींच उठ गया। अन्य लोग हुक्के का कश खींचे बिना ही अपने-अपने स्थान की ओर लपक गए।

जब फोरमैन बंसे और काली के बराबर पहुँचा तो वे तनदही से अपने हाथ-पाँव पर सरसों का तेल मलने में मसरूफ थे। फोरमैन ने एक उचटती-सी निगाह उन पर डाली और आगे बढ़ गया। उसने पूरे कारखाने का चक्कर लगाया और हर आदमी को अपने स्थान पर पा संतुष्ट हो अपनी खाट पर जा बैठा और इत्मीनान से हुक्का गुड़गुड़ाने लगा।

शाम तक बंसे और काली ने सब खालें धो डालीं। अन्य लोगों ने भी अपना काम खत्म कर दिया था। सबने अपने-अपने औजार सँभालकर कोठड़ी में बंद कर दिए। जो व्यक्ति अपना दिन का काम निपटा लेता वह जोहड़ के परले किनारे जा देसी साबुन से हाथ-पाँव धोता और शरीर पर सरसो के तेल की हल्की-सी मालिश करके वह या तो अपने घर की राह लेता या खुली जगह में खड़ा हो अपने साथियों की प्रतीक्षा करने लगता।

छप्पड़ से बाहर निकल किशने ने पाँव का पानी सुखाने के लिए उन्हें जोर-जोर से थपथपाया। फिर मोटी खाल का देसी जूता पहन काली की ओर देखने लगा, "तुम्हें कहाँ रात काटनी है ? माँझा के पास जाना है या यहीं कोठड़ी में रहोगे ?"

वह प्रश्न सुन काली असमजस में पड़ गया जैसे जवाब उसकी समझ से बाहर था। वह खाली-खाली नजरों से किशने की ओर झाँकता रहा।

"माँझा कौन है और कहाँ रहता है ?" बंसे ने पूछा।

"अपना ही आदमी है। वही इसे कारखाने में भरती करवा गया है।... रेलवाई स्टेशन के पास रहता है... दाना मण्डी के पिछवाड़े में।"

"टेशन तो यहाँ से बहुत दूर है। आधी दिहाड़ी आने-जाने में ही लग जाएगी। और फिर ऊपर से थकावट कितनी होगी।··· यहीं कोठड़ी में पड़ा रहेगा। जब भी मौका मिले वहाँ से अपना सामान उठा लाए।" बंसे ने किशने की ओर यूँ देखा जैसे अपने सुझाव की पुष्टि चाहता हो।

"ठीक है तेरी बात, यारा।" किशने ने अनुमोदन किया। फिर काली की ओर मुड़ गया, "ठीक है काली, तुम कोठड़ी में ही रहो। साथ भी है। किसी दिन इकट्ठे जाकर तुम्हारा सामान उठा लाएँगे। चादर तुम्हारे पास है ही। दरी न सही, नीचे दो बोरी बिछा लेना।"

काली ने अनुमति में सिर हिला दिया और बहुत लंबी साँस खींच धीरे-धीरे छोड़ जैसे वह बहुत ज्यादा इत्मीनान महसूस कर रहा था।

सब चले गए तो बंसे ने कारखाने का गेट अंदर से बंद कर दिया। बंसा और निहाला फोरमैन की खाट पर बैठ हुक्का गुड़गुड़ाने लगे। निहाले ने हुक्के की नय काली की ओर घुमाई तो उसने हाथ उठा मना कर दिया, "ना जी, मैं नहीं पीता।"

निहाले ने हुक्के की नय अपनी ओर खींच ली। चार-पाँच लंबे कश खींच नय बंसे की ओर बढ़ा दी। बंसा बहुत इत्मीनान से हुक्का गुड़गुड़ा रहा था और नाक और मुँह से धुएँ के बादल छोड़ता हुआ उन्हें हवा में घुलते हुए देख रहा था।

"निहाले, यह तम्बाकू अच्छा है। शीरा अच्छा मिलाया हुआ है। तम्बाकू में शीरा कम हो तो वह खुश्क रह जाता है। धुआँ गले को कड़वा लगता है और छाती को भी काटता है।" बंसे ने हुक्का छोड़ सीधे बैठते हुए काली से पूछा, "भाई, तू हुक्का ही नहीं पीता या कोई और नशा-पानी भी नहीं करता?"

"ना भा जी, न हुक्का, न बीड़ी, न सिगरेट, न नसवार, न पान-चूना···।" काली मुस्करा दिया।

"लगता है तेरा ज्यादा दिन जीने का इरादा नही है। स्याने कह गए हैं कि इस दुनिया में भले आदमियो की ज्यादा जरूरत नहीं है। इसीलिए रब जल्दी ही उन्हें अपने पास बुला लेता है।" बंसा जोर-जोर से हँसा। फिर अपने चारों ओर देख उसने अँधेरे की गहराई से वक्त का अनुमान लगाया, "चलो, रोटी खा आएँ। कहीं तंदूरिए आग बुझाकर उठ न जाएँ।"

रोटी खा वे अपनी कोठड़ी में आ गए। उन्होंने अपनी-अपनी दरी निकाल बाहर खुले में बिछा दी। काली ने भी एक ओर अपनी चादर बिछा दी। निहाला लपककर हुक्का उठा लाया। और वे अपनी-अपनी दरी पर बैठ हुक्का गुड़गुड़ाने लगे। छप्पड़ में झींगुर, मेंढक और अन्य छोटे-मोटे कीड़े-मकोड़े अपनी-अपनी आवाजें निकालने लगे थे। ध्यान से सुनने पर ऐसा प्रतीत होता था कि अलग-अलग स्थान पर होने और भिन्न-भिन्न आवाजों के बावजूद उनमें सुर-ताल का मेल था।

"इस वक्त गर्मी है और आधी रात के बाद सर्दी हो जाती है।" भीमे ने आकाश की ओर झाँका।

"मौसम ही ऐसा है।"

"जिसको जब ठण्ड लगे वह अपनी दरी उठा कोठड़ी में चला जाए।" बंसे ने बात खत्म की।

वे नींद की इंतजार में जम्हाइयाँ ले रहे थे कि जिंदर ने खेत की ओर से दीवार फाँद कोठड़ी के सामने आँगन में छलाँग लगाई।

"कौन है?" सचेत हो उन्होंने एक आवाज में पूछा।

"मैं हूँ।" जिंदर लाँघें भर उनकी ओर लपका और हाँफते हुए सरगोशी की, "कोई पूछे तो कह देना कि इधर कोई नहीं आया।"

जिंदर कोठड़ी में जा घुसा। वे खामोश हो चिंतित-से एक-दूसरे की ओर देखने लगे। कुछ ही क्षणों में खेतों में कुछ लोगों की आवाजें सुनाई दीं।

हाथों में लाठियाँ और लालटेन लिए हुए वे खेतों में खड़ी फसल में यूँ घूम रहे थे जैसे किसी को बहुत सरगर्मी से तलाश कर रहे हों।

"लगता है आगे निकल गया है। खेत में होता तो जरूर पकड़ा जाता।" एक आवाज आई।

"यहाँ रुकना व्यर्थ है। वह अब तक कहीं-का-कहीं पहुँच गया होगा।" दूसरे ने अनुमान लगाया।

"चलो चलें… किसी ने उसे पहचाना भी?" तीसरे व्यक्ति ने पूछा।

"न, अँधेरा था। हमने तो सिर्फ चीख सुनी थी।"

"कौन थी?"

"शायद शादीलाल की लड़की थी… विमला।"

"रब ही जाने।" तीसरी आवाज आई।

"शायद खेत से निकली थी।"

वे आवाजें और लालटेन की रोशनी दूर होती चली गई तो अपनी-अपनी दरी पर लेटे हुए लोगों में हरकत शुरू हुई। बंसे के साथ ही निहाला भी उठ बैठा। फिर भीमे और काली ने भी गर्दन ऊपर उठाई।

"आ जा बाहर। चले गए हैं वे।" बंसे ने जिंदर को आवाज दी। फिर हुक्का अपनी ओर खींच गुड़गुड़ाने लगा। उसने तीन-चार लंबे-लंबे कश खींचे लेकिन हुक्का ठंडा हो चुका था।

"इसने हम सबकी नींद खराब की है। इसे कहो कि पहले हुक्का ताजा करे।" बंसे ने शर्त रख दी। "बाद में ही इसकी कहानी सुनेंगे।"

बंसे, निहाले और भीमे ने बारी-बारी जिंदर को आवाज दी तो उसने डरते-डरते कदम बाहर रखा। वह पसीने में सराबोर था। उसकी साँस अभी उखड़ रही थी।

"क्या हो जाता है तुम्हें हफ्ते-दस दिन बाद ? अच्छा-भला चलता-चलता रस्सा तोड़ कहाँ भाग जाता है ?" बंसे ने हैरान और परेशान हो पूछा।

"अगर किसी दिन उनके हत्थे चढ़ गया तो वे मार-मारकर तेरा भूसा बना देंगे। ऐसा छतरौल करेंगे कि तेरी चमड़ तक उधड़ जाएगी।··· जूतों के इतने हार पहनाएँगे, तेरे चाह-मलहार करेंगे कि सारी उम्र दूल्हा बनने की तमन्ना नहीं रहेगी।" निहाले ने चेतावनी दी।

जिंदर ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया। भय और तनाव और थकावट के कारण उसका संतुलन अभी तक बिगड़ा हुआ था और साँस उखड़ी हुई थी।

"अगर तू मुहल्लेवालों के हाथ आ गया तो वे तेरी उलटी चमड़ी उधेड़ेंगे और फिर उसमें भूसा भर सड़क के किनारे पेड़ से लटका देंगे।" बंसे ने कुछ क्रुद्ध स्वर में कहा।

"नहीं भा··· सब ठीक था।" जिंदर ने रुक-रुककर कहना शुरू किया, "साली पड़ोसन ने शोर मचा दिया।"

"और पड़ोसन क्या तुम्हें अपने पल्लू से हवा करती ? तू उसके पड़ोस में सेंध लगाए और वह तुम्हें चूरमा कूटकर खिलाए ? वाह ओए शेरा !" निहाले ने कटाक्ष किया।

जिंदर ने कोई उत्तर नहीं दिया और उनसे थोड़ा हटकर दरी बिछाई और लेट गया।

"इसका कुछ करना पड़ेगा। बदनामी तो हम सबकी होगी। कितने दिनों तक मुहल्लेवालों से बात छिपी रहेगी कि यह इस कारखाने में काम करता है।" बंसे ने दायीं कुहनी घुमा हथेली पर सिर रखते हुए निहाले से कहा।

"हूँ। कुछ करना ही पड़ेगा।" करवट बदल निहाला चुप हो गया। उनको खामोश देख भीमे ने भी मुँह फेर लिया और दबी आवाज में गुनगुनाने लगा—

इश्क-मुश्क नाँ छिपयाँ रहंदे
लख छिपाओ भावें।

ये बोल सुन काली बेचैन हो उठा। ज्ञानो की याद ने पहली धूप की तरह उसके दिल-दिमाग को रोशन कर दिया।

भीमा ये बोल गुनगुनाता हुआ सो गया लेकिन काली खुले और साफ आकाश में टिमटिमाते तारों की तरह पूरी तरह सचेत और सजग हो ज्ञानो के साथ अपने प्रेम-प्रसंग को ले अपने आपमें खो गया था।

जब मुहल्ले के पहले छोर पर चौकीदार की तीखी आवाज रात की निःस्तब्धता को चीरती हुई गूँज बन गई तो काली ने यह संकल्प करके करवट बदल ली कि शहर में अच्छी तरह पाँव जमते ही वह ज्ञानो को भी गाँव से भगाकर अपने पास शहर में ले आएगा।

दस

कमर के गिर्द पतला-सा साफा लपेटे काली कोठड़ी के बाहर नंग-धड़ंग बैठा था। उसे पीठ में खुजली महसूस होती तो वह नाखूनों से खुजाने लगता। वहाँ कुछ राहत मिलती तो खारिश रान में शुरू हो जाती। वह रान को खुजाता तो खुजली बाँहों पर उतर आती। काफी समय से वह इसी क्रिया में मसरूफ था और उसके शरीर पर खुजाने के कारण जगह-जगह पर नाखूनों की खराशों और खरोंचों के निशान बन गए थे और कहीं-कहीं चमड़ी छिल जाने से त्वचा में लाली उभर आई थी।

बंसा दालान से बाहर आया तो काली अपने शरीर को दोनों हाथों से खुजाने में बुरी तरह व्यस्त था। बंसा ने एक क्षण उसकी ओर देखा। लपककर वह उसके सिर पर आ खड़ा हुआ, "काली, देखा तूने। थोड़े ही दिनों में तू पंचकल्यानी भैंस-सा बन गया है। हाथ-पाँव भूरे रंग के हो गए हैं। माथे पर बालों का रंग भी बदल रहा है। अगर आठ-दस साल यहाँ रह गया तो तेरा हुलिया ही बदल जाएगा।" फिर उसने काली को समझाया, "खुजली का एक असूल है।"

"क्या ?" काली ने उत्सुकता से बंसे की ओर देखा।

"यह कि तुम जितनी ज्यादा खुजली करोगे, वह उतनी अधिक बढ़ेगी।... इसका इलाज सिर्फ एक ही है।"

"वह क्या है ?" काली ने पीठ और पेट से हाथ खींच लिए।

"यही कि खुजाओ मत। इसे बर्दाश्त करो।... जी कड़ा कर लो। धीरे-धीरे खुजली का एहसास खत्म हो जाएगा। जब खुजली छिड़ती है तो जी चाहता है कि शरीर को नोच लूँ," काली के होंठ भिंच गए। "देख लो। यह इलाज है बहुत मुश्किल। इसे करने के लिए बहुत जिगरा और सब्र चाहिए जो हर किसी के पास नहीं है।"

कुछ क्षण रुक बंसा मुस्करा दिया, "जिस तरह किसी लड़की से प्यार करने में शुरू-शुरू में बहुत मजा आता है इसी तरह पहले-पहल खुजली करने में भी बहुत मजा आता है। शरीर में मीठी-सी गुदगुदी होती है। सनसनाहट-सी महसूस होती है। लेकिन ज्यों-ज्यों आदमी आगे बढ़ता है कुछ समय के लिए मजा भी दुगुना-तिगुना होता जाता है और फिर ऐसा समय आता है कि सिवाय खीज और पछतावे के हाथ में कुछ नहीं रहता। सारा शरीर नासूर बन जाता है। ऐसा नासूर जो कभी नहीं पकता, हमेशा रिसता रहता है।"

बंसे की बात सुन काली ने आँखें उठा उसकी ओर देखा और यूँ धीरे-धीरे सिर हिलाने लगा जैसे उसकी बात पूरी तरह समझ में आ गई हो। वह उठ गया। अँगड़ाई के साथ ही उसे जम्हाई भी आ गई और उसे रोकने के लिए काली ने मुँह पर हाथ रख लिया। फिर वह बंसे की ओर देखने लगा, "मुंशीजी से कहो